हलो

राजकृष्ण मिश्र



साहित्य सहकार
दिल्ली-110 051

एक

शहर के पश्चिमी किनारे पर हज्जीटोला बस्ती, तीन तरफ सड़क से घिरी हुई थी। चौथे किनारे पर रेलवे लाइन थी जो भोजीपुरा स्टेशन से सीधे पूरब की ओर जाती थी। बस्ती के बाहर और रेलवे लाइन के किनारे-किनारे छोटी-छोटी दुकानें बनी थी। बायीं तरफ चबूतरे-छज्जे वाले मकानों की लंबी कतारें थी और बीच की गली के साथ दायीं तरफ, टूटी फूटी ऊबड़-खाबड़ लखौरी ईंटों की बनी हुई, दो हवेलियां। सड़क से लगी हुई लंबी पगडंडी के एक तरफ पुरानी हवेली से लगी हुई कोठरियां थीं और दूसरी तरफ लकड़ी की टाल। वहीं आटा चक्की के पीछे कच्ची शराब का ठेका था। शराब के ठेके से जरा आगे, दाहिनी तरफ जगन्नाथ कालिया की हवेली थी, जिसमें दिन के चौबीस घंटे जुआ चलता रहता।

शाम का वक्त था। सूरज पेड़ के पीछे छिपने लगा था। हल्का-हल्का धुंधलका बस्ती के ऊपर गहराने लगा था। हवेली और छज्जे वाले मकानों की कतार के बीच, बस्ती के अंदर आने वाली पगडंडी के किनारे म्यूनिसपिल्टी के नल पर पानी भरने के लिए औरतों की भीड़ लगी थी। दूसरी तरफ बस्ती के बच्चे कंचे, गोलियां, गेंद-तड़ी और सिकड़ी खेल रहे थे। उस दिन हज्जीटोला में एक उत्सव का माहौल था। पानी के नल पर चूड़ियों की खनक के साथ जहां एक तरफ तकरार और मीठी झड़प चल रही थी, वहां दूसरी तरफ काम से लौटकर आये मर्दों ने मैदान में लगी नौटंकी में जाने के लिए हल्ला मचा रखा था। घरों की अंगीठी से उठता हुआ धुआं चारों तरफ फैलने लगा था।

गोलाकार जमीन के सामने, बस्ती के अंदर आने वाली पगडंडी के किनारे पर, दुमंजिले मकान के निचले हिस्से में, अपने घर की दहलीज पर ममता बैठी थी। उसका मन उदास था। वह फटी-फटी आंखों से सामने खेलते हुए बच्चों को देख रही थी। ममता के मन में उस समय न तो कोई जज़्बा था न ख्याल, एक अजूबा खालीपन भरता जा रहा था। उसे न तो

नारी सदैव ही पिता-पति, भाई, पुत्र आदि के रूप में पुरुष संरक्षण में अपने को सुरक्षित अनुभव करती रही है। लेकिन पति या पिता के रूप में संरक्षक ही जब विषम परिस्थियों में भक्षक बन जाए तो परिवार की क्या परिणति होगी ?

माधव एक ऐसा व्यक्ति है जो आर्थिक विसंगतियों के परिणामस्वरूप असमाजिक तत्त्वों के प्रभाव में आकर निजी स्वार्थवश अपनी पत्नी ममता एवं पुत्री माया की इज्जत दाव पर लगा देता है। ममता ने अपनी पुत्री माया के भविष्य को तबाह होने से बचाने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगाकर क्या-क्या पापड़ बेले और अन्त क्या हुआ ?

दफ्तर के बाबुओं की घिनौनी संकीर्ण मानसिकता एवं वर्तमान युवा पीढ़ी का वैचारिक धरातल क्या है ?

माया के दफ्तर का राजी नाम का युवक एक पार्टी में माया द्वारा औपचारिकतावश मात्र 'हलो' कह देने से गलतफहमी का शिकार हो प्यार का उद्‌बोधन समझ बैठता है। प्यार के चर्म उत्कर्ष पर पहुंचने के लिए वह अपने मूर्खतापूर्ण व्यवहार का क्या परिणाम भुगतता है ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर प्रवाहमयी भाषा में बड़े रोचक ढंग से लेखक ने अपने इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

नवें दशक के बहुचर्चित ख्याति प्राप्त उपन्यास दारुलशफा एवं **सचिवालय** के लेखक राजकृष्ण मिश्र का यह तीसरा उपन्यास भी पाठकों में अपना विशिष्ट स्थान बनाएगा—ऐसी आशा है।

—प्रकाशक

उसके हाथ से मिट्टी की गोट छूटकर गिर पड़ी। उसके चेहरे पर फिर वही खौफ था, माधव की लाल आँखों का खौफ। वह रुकी हुई थी। उसके पैर जैसे जमीन के अंदर गड़ते जा रहे थे। वह चीखना चाह रही थी, माँ को आवाज देना चाह रही थी, लेकिन उसके गले से सूखी साँसों के घूट बार-बार नीचे-ऊपर होने लगे थे। एक तो वह घर से बाहर थी, दूसरे अपनी माँ ममता के साये से दूर। तेजी के साथ माधव बढ़ता चला आ रहा था। इससे पहले माया कुछ करे, कुछ कहे, उन लड़कियों में से एक लड़की ने, जिसे चांस लेने की जल्दी थी, गिरी हुई मिट्टी की गोट उठा ली और 'तुझे नहीं खेलना है तो जा यहाँ से' कहते हुए माया को ढकेल दिया। उस एक धक्के ने माया की सोती हुई तन्द्राओं को झकझोर दिया। फिर वह रुकी नहीं। धक्के ने उसे अपनी जगह से आगे बढ़ा दिया था। वह ममता के करीब पहुँचने के लिए दौड़ पड़ी।

ममता को जब इत्मीनान होने लगा कि माया अपनी उम्र की लड़कियों के साथ हँस रही थी, खेल रही थी, तो वह चौखट से धीरे-धीरे उठकर अंदर की तरफ जाने लगी। छोटे-से चबूतरे से लगी हुई चौखट थी और चौखट के नीचे दरवाजों के बाद तिकोने आकार का कमरा था जिसके एक किनारे पर पुराना तख्त पड़ा था। तख्त से ठीक विपरीत दीवार पर लकड़ी का एक छोटा टांड़ा था जिसके ऊपर देवी-देवताओं की तस्वीरों पर पूजा का सिंदूर लगा हुआ था। टांड़े से जरा हटकर लेकिन बाईं दीवार के खत्म होने से पहले, एक दरवाजा अंदर के हिस्से में खुलता था। इसी दरवाजे के बगल में, कीलें से बंधी हुई रस्सी पर, बिस्तर और कपड़े टंगे थे। अंदरूनी दरवाजे से जुड़ी दीवार के किनारे, संदूक और कनस्तर का ढेर और दूसरे किनारे पर कुछ बोतलें और एक-आध पुराने झोले पड़े थे। कमरे के बीचोबीच फटी-पुरानी दरी पर हाथ का पंखा रखा हुआ था।

ममता के अंदर न जाने कहाँ से, रुलाई के सैलाब उमड़ने लगे थे। उसे लग रहा था, उसका वजूद, उसकी हस्ती जैसे कचरे के किसी ढेर पर पड़ी थी और उसकी बदबू से पैदा होते हुए कीड़े, बिलबिलाते हुए, उसके बदन के रोम-रोम में समाते जा रहे थे। उसका सत्व गल रहा था, उसके अंदर-ही-अंदर न जाने कितनी सड़ांध घुलती जा रही थी। उसे हैरत हो

रही थी, वह सोच रही थी, जिंदगी ने उसे किस मुकाम पर लाकर खड़ा कर दिया था। वह थी, उसके सामने उसकी नियति थी और उससे और उसकी नियति से जुड़ा हुआ था माधव। उसे घिन आ रही थी। माधव का ख्याल चिपचिपाते हुए कीड़े की तरह उसके जेहन में, उसके दिमाग में चुभने लगा था। वह सोच रही थी, क्या यह वही माधव था, जिससे उसने ब्याह किया था, जिसके बच्चों की वह मां बनी थी ? न जाने कितनी आवाजें, न जाने कितने अंधेरों को चीरती हुई एक सर्द ठंडक मरोड़ बनकर, उसके पेट के अंदर उमड़ने लगी। न जाने कितने दिनों बाद, उसके अंदर का अहसास करवटें बदलने लगा था। ममता को बड़े दिन बाद खुद अपनी याद आने लगी थी, जब वह चौखट से अंदर आकर लालटेन जलाने बैठी थी।

…जिंदगी की सुबह की तरह एक साफ खूबसूरत ख्वाब धीरे-धीरे उभरकर सामने आ रहा था। दूर, बड़ी दूर से ममता दौड़ती हुई चली आ रही थी। उसे पकड़ने के लिए, लड़कियां पीछे दौड़ रही थीं। लेकिन कोई पकड़ नहीं पा रहा था। वह सभी के हाथ से निकल जाती। उसकी की आवाज दूर बड़ी दूर से आते हुए, तेज हो जाती। कितना हंसती थी वह, कितना बोलती थी वह ! स्कूल से कालेज तक, एक-एक क्षण, एक-एक लमहा जैसे खुशियां बटोर-बटोर कर, उसकी झोली में डाल रहा था। उसकी मां कहा करती थी, "अरे, तू तो नींद में भी हंसती है रे !"

तभी एक झटके में, माया, डरी हुई हिरनी की तरह आकर उससे लिपट गई। वह हांफ रही थी। कंपकंपी-सी उठ रही थी उसके बदन में। ममता ने उसकी तरफ देखा, उसके माथे पर हाथ फेरा, उसे प्यार किया। इससे पहले वह माया से कुछ पूछे, उसे अपने सवाल का जवाब खुद-ब-खुद मिल गया था। सामने के दरवाजे से उसने देखा, माधव अपने मुसटंडों के साथ घर की तरफ बढ़ रहा था।

माधव जब घर के अंदर पहुंचा, बाहरी कमरे में, एक किनारे पर, लालटेन जल रही थी। माधव सारा सामान, बीच में पड़ी दरी के ऊपर रखने लगा तभी, झिनकू ने दाहिनी तरफ की खिड़की खोल दी और गंजा माधव के तख्त के ऊपर लेटकर सीटी बजाने लगा। उधर मोटा बड़ी

तत्परता से माधव की मदद करने लगा। मोटा उस दिन दूसरे चक्कर में था, वह किसी भी तरह माधव की बेटी हथिया लेना चाहता था। उसने आगे का सौदा, तीन हजार में कर रखा था। वह एक हजार तक और खर्च कर सकने की स्थिति में था। झिनकू और मोटे ने अपना जाल बिछाना शुरू कर दिया। तख्त के नीचे से अल्मूनियम का गिलास उठाकर झिनकू उसमें संतरा डालने लगा तो माधव ने बोतल की कार्क मुह से खोलकर, पीनी शुरू कर दी। तख्त से उतरकर राजा दरी पर आ गया और कबाब का टुकड़ा लेकर उसने भी बोतल मुह से लगा ली। इनको देख कर मोटा पहां पीछे रहता, वह भी बोतल से पीने लगा।

धीरे-धीरे आवाजें बदलने लगी थी'''घुटी'''घुटी, लटकती हुई, फिसलती हुई आवाजें। महक मारती हुई दारू, सस्ती सिगरेट के धुएं में डूबकर अंदर तक पहुंच रही थी।

इससे पहले माधव घर के अंदर आए, ममता अपनी बेटी माया को लेकर, अंदरूनी दरवाजे से, छोटा-सा बरामदा पार करके, आंगन में चली आई थी। बरामदे में एक तरफ चूल्हा बना था, जिसकी बाईं तरफ बर्तन रखे हुए थे और दायीं तरफ लकड़ी की चैली और कोयला था। पीछे की गली से लगा हुआ आंगन चौकोर न होकर लंबाई में सीधा था। बाहर गली की तरफ खुलने वाले दरवाजे के पास एक तरफ मिट्टी का ढेर था और दूसरी तरफ बाथरूम। छोटे बरामदे में आंगन के दाहिने हिस्से की दीवार से सटी हुई एक पत्थर की सिल रखी थी। ममता आंगन तक, करीब-करीब दौड़कर आई थी। पहले तो माया को उसने अपने से चिपटा कर माथे पर हाथ फेरा, उसे प्यार किया और फिर उसे पानी पिलाया। अंदरूनी दरवाजे की तरफ, बरामदे में खड़े हुए खटोले को गिराकर, उसने धीरे-धीरे, माया को लिटा दिया। माया तब भी डरी हुई थी। उसका चेहरा सफेद होता जा रहा था। माथे पर पसीने की बूंदें थी और रह-रहकर वह कांप उठती। ममता उस माया को देख रही थी जो खुद उसका रूप थी, जिसको उसने अपनी कोख से जन्म दिया था। वह उसकी मां थी। उसका रूप होते हुए भी, अपनी कोख से जन्म देने के बाद भी, वह सोच रही थी'''यह भाग्य की कैसी विडंबना थी, खुद उसके भी

नीचे, सहमी हुई, डरी हुई, उसकी वेटी पड़ी थी और वह कुछ कर सकने के काबिल नहीं थी। वह सोच रही थी···खुद उसकी हालत, कौन-सी माया से अच्छी थी। उसे मौत क्यों नहीं आ जाती ? वह जीकर करेगी भी क्या ? तव उसे ख्याल आया माया का और फिर ख्याल आया, उस लमहे का, जव उसने माया को जन्म दिया था और उससे भी पहले जव उसे माधव मिला था। जिंदगी कभी इस तरह धोखा देती, वक्त कहीं इस तरह वदलता। ममता की नजर आंगन की दीवार पर टिक गई, जहां एक केंचुआ नाली की चिकनी तलहटी से उवरकर दीवार पर चढ़ने की कोशिश कर रहा था। माया को लगा उसकी नियति उस नाली के कीड़े की तरह थी जो खुद फिसलन में ही फिसल-फिसल कर टूट जाएगी···नष्ट हो जाएगी।

तभी कहीं दूर से कोयल के वोलने की आवाज आयी। कोयल की मीठी आवाज का यहां क्या काम था ? जव उसके आंचल के नीचे, दहशत ौर खौफ के अंधेरों में, उसकी वच्ची भटक रही थी, और वह दहशत, खौफ खुद उसके शरावी वाप की देन थी। जव उसकी जिन्दगी तार-तार, टूट चुकी हो, जव माधव उसका सव कुछ छीनकर उसे नंगा वना चुका हो, तव कोयल की आवाज का क्या काम था ? कोयल की आवाज उसे कभी नहीं फली। न जाने क्या हो जाता, जव-जव कोयल वोलती थी, उसका कुछ-न-कुछ छिन जाता था।

···वारह साल पहले, उस दिन भी वैसे ही कोयल वोल रही थी। वैसा ही शाम का वक्त था। धुंधलका आसमान से उतरने लगा था। वह अपने सपनों में खोई हुई, शिवा का इंतजार कर रही थी। उसी टीले से लौटकर आयी थी वह जहां शिवा ने सपनों के संसार के ताने-वाने वुने थे। ममता दस-वारह साल की थी जव शिवा का परिवार उसके घर के वगल में आकर रहने लगा था। घर में, मोहल्ले में, स्कूल में, वाजार में, हर जगह तव ममता एक तितली की तरह उड़ती रहती और किसी के हाथ नहीं आती थी। यह तो वड़े दिनों वाद उसे धीरे-धीरे शिवा से लगाव होने लगा था। शिवा रुक नहीं सकता था, ठहराव नाम की चीज उसकी जिन्दगी में नहीं थी। वह वड़ा आदमी वनना चाहता था। ममता और शिवा सड़क से दूर ऊंचे टीले पर चले जाते जहां शिवा टीले की

एक तरफ उठी जमीन पर सपनो के महल बनाया करता और ममता उसमें हंसी के रंग भर दिया करती। शिवा ने जो नक्श उतारा था उसमे ऊंची-ऊची छत वाले कमरों का काफी बड़ा बंगला था, एक नही कई मोटरें थी, एयर कंडीशनर थे, कालीन थे, लहराते हुए पर्दे थे, रुतवा था, पोजीशन थी। इन सबके बाद, अपनी जरूरत अपनी रफ्तार की हर चीज जमा कर लेने के बाद, तब कही वह ममता को रखता था। ममता उससे तब कहा करती''आलीशान बंगला, मोटर, बैंक बैलेंस, पर्दे-कालीन, कही ऐसा न हो, यह सब तो तुम्हे मिल जाए और मैं खो जाऊं।'''शिवा यह सुनकर बेचैन हो जाता और कहा करता, उन तमाम चीजों का ममता के बिना मोल ही क्या है।'''तब ममता बस हंस दिया करती, और उसके साथ शिवा भी हसने लगता। उस दिन सपनो के उसी टीले से उतरकर वह आयी थी। वह सोच रही थी, शिवा वही आएगा। लेकिन शिवा उस दिन नही आया और फिर कभी नही आया। कई दिन बाद पडोस मे उसकी शादी का कार्ड आया था। उसकी मधु से शादी तय हो गई थी। मधु से शिवा की शादी की खबर सुनकर एक धमाका हुआ था, एक विस्फोट हुआ था। उसे लगा उस ऊंचे टीले पर सपनो के नक्श उतारते वक्त वह शिवा के साथ मन और आत्मा से जुडी थी तो उसके बिना जी पाना मुमकिन नही होगा उसके लिए। जुडने और जीने, अलग होने और चले जाने के बीच फैसला करना था उसे। उसी टीले की तरफ चल पड़ी थी वह। घर से टीले तक रास्ता जाना-पहचाना था उसका। कितने पेड, कितने झुरमुट, कितने मोड और किनारो पर उसने शिवा के साथ वक्त गुजारा था, सपने बुने थे। उसे अजीब-सा लग रहा था। वह खुद, अपनी निगाहो मे छोटी हुई जा रही थी। उस दिन वह देख रही थी, उस आकाश को जिसे अपनी बाहों मे बांध लेने का विचार किया था उसने, वह देख रही थी दूर-दूर तक फैले विश्व को, ससार को, जिसे शिवा ने नापने का संकल्प किया था। शिवा का सकल्प और उसका विचार एक था तब। दोनों के मन, दोनो के हाथ बंधे थे, एक-दूसरे में। लेकिन शिवा तो विश्व नापने जा चुका था'''उसे मालूम था मधु का बाप मर चुका था और म लखपति मां की इकलौती बेटी थी। और वह खुद अपना छोटा-सा वजू

छोटी-सी हस्ती लेकर उस छोटे-से टीले पर न जाने कब से उस असीम आकाश को नापने का ख्वाब देख रही थी, जिसका एक छोटा-सा टुकड़ा तक उससे छिटककर दूर चला गया था। टीले के उस पार खाई थी और खाई से लगी हुई नदी। इससे पहले ममता उसमें छलांग लगा दे, न जाने कब पीछे से आकर माधव ने उसे रोक लिया था।

माधव हमेशा से ऐसा नहीं था। उसने भी एक अच्छे खानदान में जन्म लिया था। उसके भाई था, बहन थी, उसके बाप एक स्कूल में मास्टर थे। माधव उन दिनों बड़ा हो चला था, एम० ए० का इम्तहान पास कर लिया था उसने, जब उसके ऊपर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। सबसे पहले उसका बाप मर गया और फिर मां ने दीवार पर सर पटक-पटक कर जान दे दी। न जाने कौन-सा पाप माधव के घर को खाए जा रहा था। एक-एक करके सब उससे अलग होते गए। छूटते गए। माधव ने एक वर्ष में चार मौतें देखी थीं। एक अजीब तरह की यातना, एक औचक खालीपन जैसे उसके हिस्से-हिस्से की पैमायश कर रहा था। दु:ख की भी कोई सीमा होती है, लेकिन माधव को उन दिनों लग रहा था जैसे समूचे संसार का दु:ख, सारे विश्व का शोक उसके अंदर समाता जा रहा था। रात के अंधेरे में बड़ी दूर, हवा की सुरसुराहट, पत्तों का खड़कना और झींगुर की आवाज सुनकर माधव को लगता जैसे और कोई दु:ख और कोई मौत उसके यहां दस्तक देने आ रही थी। वह सारे दु:ख जो किसी की पूरी जिन्दगी में मिल पाते, माधव को उन दिनों मिल चुके थे। घर के कोने-किनारे से, कभी दम तोड़ते बाप और कभी-कभी दीवार पर सर फोड़ती हुई मां की तस्वीरें उभर आया करतीं और माधव के अंदर किसी गुमनाम खौफ का हिस्सा बनकर ठहर जातीं, रुक जातीं। कभी उसे अपनी प्यारी-प्यारी छोटी बहन की याद आती जो ट्रक से कुचलकर मर गई थी, तो कभी भाई की शक्ल उसकी आंखों के सामने नाचने लगती। पानी में डूबकर मर गया था उसका भाई। माधव वहीं खड़ा था। दु:ख के उन दिनों में, दोनों भाई, बस्ती के बाहर बाढ़ देखने गए थे। वहीं माधव का भाई फिसलकर बह गया था। उसके भाई की आखिरी चीख, उसकी छटपटाहट, उसका तड़पना, उसकी बेबसी, बड़े भाई से बचा लेने की मासूम फरियाद, जैसे माधव के प्राणों

में आकर ठहर गई थी। नहीं सह पाया था माधव, विपदा के उस धमाके को और उसे यही लगा था जैसे उसका छोटा भाई खुद उसके हाथों से फिसलकर मौत के मुंह में चला गया था।

माधव की जिंदगी में न इधर उम्मीद थी न उधर खुशी। उसे तो अपने चारों तरफ एक सन्नाटा ही दिखाई पड़ता था। जाने-अनजाने, न जाने कौन-सी अंधेरी गुफाओं में, उसका मन भटकने लगता। उस समय माधव को किसी छोटी-सी खुशी की तलाश थी, एक ऐसी खुशी जो उसकी उजड़ी हुई जिन्दगी में विश्वास की महक डाल सके। वह मन्दिर गया, मस्जिद की अजान सुनी उसने, गिरिजाघर के सामने घंटों खड़ा रहा, पिकनिक, पिक्चर, सैर-सपाटा, हंसना, बोलना उसने सब कुछ किया, उस छोटी-सी खुशी को पाने के लिए। उसे मालूम था वह छोटी-सी खुशी उसके सारे समूचे जीवन में एक ऐसी हसीन रंगत घोल देगी जो किसी गुलजार चमन में खिले हुए फूलों के बीच उड़ती हुई रंगीन तितलियों को नसीब हुआ करती है। कितने लोगों से मिला वह, कितनी जगह वह गया, लेकिन माधव को वह छोटी-सी खुशी नहीं मिली, जो उसके अंदर से उस डरावनी छाया को निकाल सके। उस डरावनी छाया के साथ जुड़ा हुआ था वह। वीरान सन्नाटा जिसने अनेक-अनेक परतों में, बारूद के गोले की तरह, इतने दिनों में, उसके अन्दर, न जाने कितने विस्फोट कर डाले थे। माधव जिंदगी के उस मुकाम पर पहुंच चुका था जिसके आगे उसे मालूम था जाने का रास्ता नहीं था। दर्द की छटपटाहट उसे सहन नहीं होती और वह जैसे अपने जीवन के कोने-किनारों से उभरते हुए काल्पनिक खतरों के साथ, एक कभी न खतम होने वाली जंग, एक कभी न समाप्त होने वाली लड़ाई लड़ रहा था। माधव के लिए इस बात का फैसला कर लेना मुमकिन नहीं था, उसे यह छोटी-सी खुशी कब मिलेगी या फिर वह खौफ के अंधेरों से कब निकल पाएगा। वह टूटने लगा था। एम० ए० के बाद उसने रिसर्च के लिए दाखिला लिया था। उसे मालूम था वहां भी वह कुछ कर नहीं सकेगा।

उस दिन चारों तरफ एक भयावह सन्नाटा, आसमान के ऊपर से उतरकर धीरे-धीरे बस्ती के बाहर, उस ऊंची पहाड़ी पर फैलने लगा था, जहां माधव, कई बार बैठकर, अपने आपमें बातें किया करता। दूर

वादियों से उसे अपनी फुसफुसाहट खुद सुनाई दे जाया करती। कभी-कभी तो वह चुपचाप घंटों वहां बैठा रहता, न सोचता, न बोलता, न बात करता, लेकिन तब भी उसे लगता जैसे आसमान बोल रहा था, वादियां बोल रही थीं। उन वादियों से उसकी गूंज-भरी फुसफुसाहट लौट-लौटकर, उसके अंदर, सब कुछ तोड़ दिया करती, तार-तार कर दिया करती। एक अजूबा खौफ, एक अनजान-सा डर, उसके अंदर, कितने-कितने दिनों पहले, आकर पैठ गया था। उसकी रग-रग में असंख्य सुइयों सरीखी चुभन फट पड़ती। क्या-क्या सोचा था उसने···रिसर्च पूरी करने के बाद जब वह डाक्टर बन जाएगा तब अपने बाप का वह सुख लौटा देगा, वह सपना साकार कर देगा जिसे सीने से लगाए हुए, उसके बाप ने दम तोड़ दिया था। माधव के बाप का सपना स्कूल की मास्टरी से नहीं बल्कि किसी बड़े कालेज की हसीन प्रोफेसरी से जुड़ा था। माधव ने बहुत दिन पहले यह तय कर रखा था, उसे बाप का सपना पूरा करना था। माधव ने उन दिनों तो, सभी के सपने बटोर-बटोर कर, अपनी झोली में डाल लिए थे। उसे तब क्या मालूम था, जिंदगी उसे ऐसा धोखा देगी। उसे ईश्वर उठा लेता वह खुद मर जाता, वह इस दुनिया में नहीं रहता, यह तो उसे मंजूर था, लेकिन बाप के न रहने पर, मां के चले जाने पर, भाई के डूब जाने पर, बहन के कुचल जाने पर वह सोचता···उन सपनों का वह क्या करे जो उसने अनजाने में अपनी शख्सियत से जोड़ लिए थे।

उस दिन माधव की खुद अपने सपनों के संग, जंग चल रही थी, तभी उसने देखा, पहाड़ी के दूसरे सिरे पर ममता खड़ी थी। शाम के हलके धुंधलके में बस्ती के बाहर पहाड़ी के दूसरे छोर पर, ममता को देखकर न जाने क्यों माधव की आंखों के सामने एक बार फिर मौत का डरावना साया मंडराने लगा था। उसे लगा, जब वह संभलने वाला था, जब उसने जिंदगी को किसी किनारे लगा सकने की कोशिश शुरू कर दी थी, उस समय वह एक और मौत देखने जा रहा था। पहाड़ी के जिस छोर पर ममता खड़ी थी, उसके नीचे एक गहरी खाई थी, जहां गिरने के बाद कोई बच नहीं सकता। ममता ने न कुछ कहा था और न ही कुछ ऐसा किया था, जिससे माधव को यह विश्वास हो जाता, वह खाई के अंदर छलांग लगाने

वाली थी। लेकिन माधव का तो मौत के साथ कोई खुफिया संबंध तब तक बन चुका था। वह मौत को खूब पहचान गया था। हवा की सुरसुराहट, जर्रे-जर्रे का एक-दूसरे में लिपट-लिपट कर टूट जाना, आसमान से टपकता हुआ कोई अनजान वीराना, जैसे माधव को सब कुछ बता दिया करता। ममता को पहाड़ी के उस छोर पर खड़ी देखकर माधव को लग रहा था, एक बार फिर मौत उसके करीब आकर ठहर गयी थी और तभी तो शायद उसने आगे बढ़कर ममता को रोक लिया था।

काफी देर बाद माधव को लगा कमरे की छत, जमीन सब घूम रही थी और वह खुद उनके साथ चक्कर लगा रहा था। उसकी आंखें बंद होने लगीं। वह दरी के ऊपर लेट गया। वह बार-बार उन्हें ढकेल देता, लेकिन कुछ आवाजें तो जैसे उसका पीछा नहीं छोड़ रही थीं। तभी उसे महसूस हुआ, कोई उसे धक्का देकर जगा रहा था। न जाने कितनी मुश्किल से, खुद अपने आपमें जूझते हुए माधव ने देखा, गजा उसे बार-बार ढकेल रहा था।

"क्या है बे···" माधव उछलकर बैठते ही फिर लुढ़क गया।

"जब मतलब की बात होती है, तू सो जाता है, साला!" गजे ने कहा।

"हूं···" माधव संभलकर बैठ गया। झिनकू ने दूसरी बोतल खोलकर उसके हाथ में दे दी।

"तेरे को बोल देता हूं···तू साला हम्हारा पैसा दे दे।" मोटे ने कहा।

"दे देंगे यार!" माधव नशे में बोला।

"तू झूठा है, माधव!" झिनकू ने झिड़की दी।

"मुझे झूठा मत कह रे!" माधव दर्द में कराहा।

"तू झूठा है!"

"तू झूठा है!!"

"हां-हां तू झूठा है!!!" तीनों ने दांव फेंका।

"कैसे?" माधव ने कहा।

"कितनी बार तूने कहा, कभी एक पैसा भी दिया तूने!"

गजे ने ललकारा, "हम्हारे पैसे हराम के हैं क्या!"

"हां···हां!" मोटे ने सहमति प्रकट की।

"मैं क्या करूं···यार···इधर कड़की ने मार रक्खा है अपने को!"

वादियों से उसे अपनी फुसफुसाहट खुद सुनाई दे जाया करती। कभी-कभी तो वह चुपचाप घंटों वहां बैठा रहता, न सोचता, न बोलता, न बात करता, लेकिन तब भी उसे लगता जैसे आसमान बोल रहा था, वादियां बोल रही थीं। उन वादियों से उसकी गूंज-भरी फुसफुसाहट लौट-लौटकर, उसके अंदर, सब कुछ तोड़ दिया करती, तार-तार कर दिया करती। एक अजूबा खौफ, एक अनजान-सा डर, उसके अंदर, कितने-कितने दिनों पहले, आकर पैठ गया था। उसकी रग-रग में असंख्य सुइयों सरीखी चुभन फट पड़ती। क्या-क्या सोचा था उसने···रिसर्च पूरी करने के बाद जब वह डाक्टर बन जाएगा तब अपने बाप का वह सुख लौटा देगा, वह सपना साकार कर देगा जिसे सीने से लगाए हुए, उसके बाप ने दम तोड़ दिया था। माधव के बाप का सपना स्कूल की मास्टरी से नहीं बल्कि किसी बड़े कालेज की हसीन प्रोफेसरी से जुड़ा था। माधव ने बहुत दिन पहले यह तय कर रखा था, उसे बाप का सपना पूरा करना था। माधव ने उन दिनों तो, सभी के सपने बटोर-बटोर कर, अपनी झोली में डाल लिए थे। उसे तब क्या मालूम था, जिंदगी उसे ऐसा धोखा देगी। उसे ईश्वर उठा लेता वह खुद मर जाता, वह इस दुनिया में नही रहता, यह तो उसे मंजूर था, लेकिन बाप के न रहने पर, मां के चले जाने पर, भाई के डूब जाने पर, बहन के कुचल जाने पर वह सोचता···उन सपनों का वह क्या करे जो उसने अनजाने में अपनी शख्सियत से जोड़ लिए थे।

उस दिन माधव की खुद अपने सपनों के संग, जंग चल रही थी, तभी उसने देखा, पहाड़ी के दूसरे सिरे पर ममता खड़ी थी। शाम के हलके धुंधलके में बस्ती के बाहर पहाड़ी के दूसरे छोर पर, ममता को देखकर न जाने क्यों माधव की आंखों के सामने एक बार फिर मौत का डरावना साया मंडराने लगा था। उसे लगा, जब वह संभलने वाला था, जब उसने जिंदगी को किसी किनारे लगा सकने की कोशिश शुरू कर दी थी, उस समय वह एक और मौत देखने जा रहा था। पहाड़ी के जिस छोर पर ममता खड़ी थी, उसके नीचे एक गहरी खाई थी, जहां गिरने के बाद कोई बच नहीं सकता। ममता ने न कुछ कहा था और न ही कुछ ऐसा किया था, जिससे माधव को यह विश्वास हो जाता, वह खाई के अंदर छलांग लगाने

वाली थी। लेकिन माधव का तो मौत के साथ कोई खुफिया संबंध तय तक बन चुका था। वह मौत को खूब पहचान गया था। हवा की सुरसुराहट, जर्रे-जर्रे का एक-दूसरे में लिपट-लिपट कर टूट जाना, आसमान से टपकता हुआ कोई अनजान वीराना, जैसे माधव को सब कुछ बता दिया करता। ममता को पहाड़ी के उस छोर पर खड़ी देखकर माधव को लग रहा था, एक बार फिर मौत उसके करीब आकर ठहर गयी थी और तभी तो शायद उसने आगे बढ़कर ममता को रोक लिया था।

काफी देर बाद माधव को लगा कमरे की छत, जमीन सब घूम रही थी और वह खुद उनके साथ चक्कर लगा रहा था। उसकी आंखें बंद होने लगीं। वह दरी के ऊपर लेट गया। वह बार-बार उन्हें ढकेल देता, लेकिन कुछ आवाजें तो जैसे उसका पीछा नहीं छोड़ रही थीं। तभी उसे महसूस हुआ, कोई उसे धक्का देकर जगा रहा था। न जाने कितनी मुश्किल से, खुद अपने आपमें जूझते हुए माधव ने देखा, गजा उसे बार-बार ढकेल रहा था।

"क्या है बे···" माधव उछलकर बैठते ही फिर लुढ़क गया।

"जब मतलब की बात होती है, तू सो जाता है, साला!" गजे ने कहा।

"हूं···" माधव सभलकर बैठ गया। झिनकू ने दूसरी बोतल खोलकर उसके हाथ में दे दी।

"तेरे को बोल देता हूं···तू साला हम्हारा पैसा दे दे।" मोटे ने कहा।

"दे देंगे यार!" माधव नशे में बोला।

"तू झूठा है, माधव!" झिनकू ने झिड़की दी।

"मुझे झूठा मत कह रे!" माधव दर्द में कराहा।

"तू झूठा है!"

"तू झूठा है!!"

"हां-हां तू झूठा है!!!" तीनों ने दाव फेंका।

'कैसे?" माधव ने कहा।

"कितनी बार तूने कहा, कभी एक पैसा भी दिया तूने!"

गजे ने ललकारा, "हम्हारे पैसे हराम के हैं क्या!"

"हां···हां!" मोटे ने सहमति प्रकट की।

"मैं क्या करूं···यार···इधर कड़की ने मार रखा है अपने को!"

इसीलिए तो यह हजार भिजवाए हैं तेरे लिए। पालेंगे यह, बड़ा करेंगे। लाखों की जायदाद की मालिक होगी तेरी बेटी। जा ले आ उसे।" गजे का दबाव माधव की पीठ पर बढ़ता जा रहा था। उधर झिनकू और मोटे ने उसे उठाकर खड़ा कर दिया। गजा भी उठकर खड़ा हो गया और उसने माधव के कान में, "ले आ अपनी बेटी को", कहकर हल्का-सा आगे को ढकेल दिया। माधव अंदर की तरफ चल दिया।

माधव कब अन्दर आया था, यह ममता उसी तरह नहीं जान पाई जैसे बारह साल पहले, उस ऊंचे टीले पर खड़े होकर, टीले से लगी हुई खाई में छलांग लगाने का इरादा करते वक्त नहीं जान पाई थी। लेकिन बारह साल पहले के माधव में और आज के माधव में जमीन-आसमान का फर्क आ गया था। जिंदगी के दौर में वह माधव तो कब का मर चुका था। यह तो उसकी लाश थी जिसमें न जाने कौन हैवान किस बदनसीबी और बरबादी का साया बनकर समाया हुआ था। शरीर वही था, रूह कोई और थी। धड़कनों के साथ उठती-बैठती न तो वह पहचान थी और ना ही वह गर्माहट जिसके अपनत्व में जुड़कर वह बारह साल पहले उस टीले से उतरकर माधव के साथ चली आई थी।

ममता शायद जान ही न पाती, अगर एक बार फिर उसकी उंगलियों में माया के बदन की कंपकपी न पैठने लगती। माया के कांपते हुए बदन में धीरे-धीरे उसने अपना चेहरा ऊपर की तरफ उठाया, तब कहीं जाकर उसकी नजर माधव पर पड़ी। लेकिन इससे पहले उसकी समझ में कुछ आए, वह कुछ कहे, माधव ने अपनी बेटी को, एक झटके में खटोले से नीचे उतार लिया।

माया चीखकर जमीन पर पसर गई। माधव उसका हाथ पकड़कर खींचता हुआ बाहरी कमरे में ले गया। बाहरी कमरे तक पहुंचते··· पहुंचते उसके हाथ से माया फिसल गई। माधव के हाथ से फिसलते ही माया उठकर खड़ी हो गयी। लेकिन माधव ने एक झटके में उसके बाल पकड़कर, सीधे दरी की तरफ ढकेल दिया। माया गजे, झिनकू और मोटे के ठीक सामने दरी पर जाकर गिर पड़ी।

इतनी देर में ममता बाहर निकल आई। इसी बच्ची के लिए ही तो

ममता जिन्दा थी, खूंखार गुंडों, शराव की वोतलों और सिगरेट के धुएं के बीच अपनी वेटी को पड़ा हुआ देखकर ममता के दिमाग में खून चढ़ने लगा। माधव की पीठ थी उसकी तरफ। वह हांफ रहा था और लड़खड़ाता हुआ दस-दस के नोट की गड्डी की तरफ वढ़ रहा था। तभी अचानक दाहिनी तरफ से, पूरा जोर लगाकर ममता ने, विफरी हुई शेरनी की तरह, माधव को दीवार की तरफ ढकेल दिया। झपटकर उसने माया को उठा लिया। इससे पहले गंजे, झिनकू और मोटे की समझ में कुछ आए, वह करीव-करीव दौड़ते हुए अन्दर की तरफ चली गई। अन्दर घुसते ही, उसने माया को छोड़ दिया और अन्दरूनी दरवाजे को वन्द करके सांकल लगा दी।

ममता ने जव माधव को धक्का दिया, वह हिसाव लगा रहा था। वोतल में शराव वाकी थी और सामने दरी पर हजार रुपये के नोट रखे थे। गंजा वापस तख्त के ऊपर जाकर लेट गया था, मोटा उछलकर पीछे चला गया था और झिनकू ने वाहरी दरवाजे की चौखट पर खड़ा होकर वोतल मुंह में लगा ली थी। माधव और दरी के वीच थोड़ा-सा फासला वचा था। वह करीव-करीव घिसट रहा था। उसकी सांस फूल रही थी। उसके चेहरे से पसीने की धार वह निकली थी। दरी पर रखे हुए नोट, छोटे-वड़े आकार में, कैमरा के जूम की तरह, दूर वड़ी दूर से करीव आते जा रहे थे। एक झनकदार आवाज, ताल, स्वर और गूंज में डूवी हुई एक महीन खूव-सूरत आवाज, उसे सुनाई देने लगी थी। माधव ने उस आवाज से चेहरा भी जोड़ लिया। वह चेहरा था दुलारी का जिसने चन्द दिनों पहले ही उससे पांच सौ रुपये मांगे थे, अपने इलाज के लिए। गाहे-वगाहे माधव, दुलारी के कोठे पर पहुंच जाया करता। वह एक गजरे और मिठा[illegible] दोने पर माधव को अपना सव कुछ दे दिया करती। माधव को दु[illegible]

बढ़ाया। उसी वक्त दाहिनी तरफ से ममता ने पूरा जोर लगाकर उसे धक्का दिया था। ममता के धक्के को माधव बर्दाश्त नहीं कर सका। वह सीधा खिड़की से लगी दीवार के पास जाकर गिरा। उसका सिर, दीवार के निचले हिस्से से लड़कर भिड़ गया था। एक बार उसने उठने की कोशिश की लेकिन फिर गिर पड़ा।

झिनकू निहायत डरपोक किस्म का आदमी था। उसने माधव को गिरते हुए देखा और फिर बिफरी हुई शेरनी की तरह ममता को अंदर आते हुए देखा। इसी बीच मोटा भागकर तख्त के नीचे छुप गया था। इससे पहले गंजा उसे और कुछ करने के लिए उकसाए, झिनकू दबे पांव बाहर निकलकर बस्ती के अंधेरे में खो गया।

अंदर का दरवाजा बन्द होते ही गंजा तख्त से उठकर खड़ा हो गया। उसने मोटे को तख्त के नीचे घुसते हुए देखा था। लेकिन मोटे से पहले उसे माधव की खबर लेनी थी। माधव की तरफ बढ़ते वक्त उसने पहले तो वह बोतल लात मारकर उछाल दी जो जल्दी में मोटा तख्त के किनारे छोड़ गया था और फिर कमरे के दूसरे कोने में पड़े माधव के पास पहुंच गया।

तब तक मोटा भी बाहर निकल आया था। उसने गंजे की तरफ देखा जो माधव के करीब जाकर बैठ गया था। गंजा असल में माधव को उठाने की कोशिश कर रहा था, लेकिन माधव भला कहां उठने वाला था। वह तो उस स्थिति में पहुंच गया था जहां उसे किसी चीज की सुध बाकी नहीं बची थी। तभी माधव को छोड़कर गंजा उस छोटे दरवाजे के पास पहुंच गया जिससे होकर ममता अंदर गई थी।

गंजे को अन्दरूनी दरवाजे की तरफ जाते हुए देखकर मोटा भी आगे बढ़ आया। वह दरी के किनारे तक आ गया था तब उसे दरी के बीचो-बीच बोतल से दबे हुए नोट दिखाई दिए थे। एक पल में उसने माधव को देखा और दरवाजा पीटते हुए गंजे को देखा और दूसरे ही क्षण झुककर उसने नोट उठा लिए। अभी मोटे ने पूरी तरह नोट उठाए भी नहीं थे कि उसे गंजे की तेज आवाज सुनाई दी। गंजा चीखकर उसे बुला रहा था,. दरवाजा तोड़ने के लिए। गंजे की आवाज के साथ ही कुछ नोट मोटे के हाथ से छूटकर गिर पड़े। तभी पीछे मुड़कर गंजे ने मोटे की हरकत देख

ली और उसकी तरफ दौड़ा। गंजे को अपनी तरफ दौड़ते हुए देखकर मोटा सर पे पैर रखकर बाहर की तरफ भाग गया। गंजे ने पहले तो दरी पर बिखरे हुए नोट उठाए और फिर मोटे को पकड़ने चल दिया।

ममता के पास वक्त नहीं था। माया को गुंडों के बीच से उठाते समय, उसने वह नोट की गड्डी देख ली थी जिसकी तरफ माधव लड़खड़ाता हुआ बढ़ रहा था। उसे मालूम था, एक और हमले का उसे सामना करना था। वह दरवाजा जिसके पीछे वह थी, जरा-सी हरकत से लात मारकर खोला जा सकता था। ऊपर से तीन गुंडे वहां मौजूद थे, शराब की बोतलें थीं और नोट की गड्डी थी।

ममता ने बेचैनी से इधर-उधर देखा। तभी उसे अन्दरूनी दरवाजे के पीटने की आवाजें सुनाई दीं। गंजा, मोटे को दरवाजा तोड़ देने को उकसा रहा था। ममता पीछे हटकर आंगन में आ गई। आंगन में पहुंचते ही उसकी नजर उस दरवाजे पर पड़ी जो पिछली गली में खुलता था। उसने तेजी से आंगन का बाकी हिस्सा पार किया और दरवाजा खोलकर गली में निकल गई।

दो

घर के बाहर निकलते ही ममता ने बेतहाशा भागना शुरू कर दिया था। माया भी उसके पीछे दौड़ रही थी। ममता को उस वक्त कहीं भी, किसी भी ऐसी जगह पर पहुंच जाने की जल्दी थी, जहां पर माया को वह कुछ दिनों के लिए छोड़ सके। उसे मालूम था, अपने घर में माया के लिए कोई ठिकाना नहीं था। माधव वहशियत के उस मुकाम पर पहुंच चुका था, जहां उसके लिए अच्छे और बुरे में फर्क करना तो दूर रहा, खुद अपनी बेटी माया को चन्द पैसों के लिए या शराब की एक बोतल के लिए बेच देना मामूली बात थी। उसके चारों तरफ अंधेरा था और वह भागती चली जा रही थी। उसे कोई ऐसी जगह नहीं नजर आ रही थी, जहां वह माया को छोड़ सके। काफी दूर निकल आने के बाद,

जब उसे विश्वास हो गया, कोई उसका पीछा नहीं कर रहा था, वह पानी के एक नल के पास रुक गई। तब कहीं जाकर उसे माया का ख्याल आया। घबड़ा कर उसने पीछे मुड़कर देखा तो कुछ दूर पर माया दौड़ती हुई आ रही थी। उसके चेहरे पर खौफ था, दहशत थी और नन्हे-नन्हे न जाने कितने सवाल थे। वह दौड़कर मां से लिपट गई। माया कुछ देर तक मां को देखती रही और तभी उसने रोना शुरू कर दिया। उसकी सिसकियों की आवाज, वातायन के खालीपन में, दूर-दूर तक खाली हवाओं के झोकों को छूकर लौटने लगी। उस वीरान सड़क पर ममता की समझ मे जब कुछ भी नही आया तो वह भी फूट-फूटकर रो पड़ी। मा को रोता हुआ देखकर माया की सिसकिया रुकने लगीं और वह ममता को चुप कराने लगी।

दूर-दूर तक ममता के सामने काली लहराती हुई सड़क थी और था एक मुर्दा हुआ सन्नाटा। बस्ती से कुछ बाहर निकल आयी थी वह। उस दिन कितने दिनों बाद एक अहसास ममता के अन्दर करवट बदलने लगा था। जहा एक तरफ उसके सामने अनेक सवाल थे, उन सवालों से जुड़ा हुआ, अनन्त विस्तार मे फैला हुआ, रेत का गुबार था जिसमे घिरी हुई सी वह, पल-पल के लिए, संघर्ष कर रही थी, वहीं दूसरी तरफ एक कसक थी, बीते हुए दिनों की वह यादें थी, जिन्होंने उसे जिंदगी के उस मुकाम पर ले जाकर पटक दिया था, जहा जी सकना और मर जाना बेमानी था, उसके लिए।

ममता हमेशा से ऐसी नही थी, माधव हमेशा से ऐसा नहीं था। यह तो वक्त था, जो न जाने कहां से एक भयानक, घिनौनी शक्ल में सामने आकर खड़ा हो गया था। छोटी-सी थी वह जब उसके जीवन मे शिवा आ गया था। एक सुनहरे ख्वाब की तरह, जिंदगी के हर लमहे में, धड़कन मे समाया हुआ, कितना-कितना प्यार वह अपनी सासों मे बटोर लिया करती थी। एक दिन उसे पता लगा था शिवा ने दौलत के लिए किसी और से शादी कर ली है। तब कितना [illegible] टूटकर बिखर गई थी। अपने जिस्म से, अपनी रूह से, दुनिया की हर शै से उसे नफरत हो गई थी। वह जान देना चाहती थी [illegible]

लिए मरती वह, यह सवाल था उसके सामने उस समय ! जिस शिवा ने उसे धोखा दिया, उसके लिए वह जिंदगी मिटा दे, खत्म हो जाए, यह कौन-सा भरम था, यह कौन-सी कुर्बानी थी, माधव ने ही तो उसे बताया था। एक सैलाब की तरह माधव उसकी जिंदगी में आया था और उसकी नफरत, उसकी निराशा, उसके सारे-समूचे अस्तित्व को बहा ले गया था। सब कुछ पीछे छूट गया था। और फिर उस समय दूर-दूर तक, पीछे कहीं भी कुछ भी रोक सकने वाला नहीं था उसके पास। शिवा ने कुछ भी तो नहीं छोड़ा था पकड़ सकने के लिए।

माधव की हालत बिगड़ने लगी। एक के बाद एक नौकरी मिली उसे, लेकिन कहीं टिक नहीं सका वह। नाकामियों ने माधव को तोड़ना शुरू कर दिया था। एक बार जब उसका टूटना शुरू हो गया, तब उसे ममता भी रोक नहीं पाई, वह टूटता ही गया। और धीरे-धीरे सब खत्म हो गया। ममता की जिंदगी में बदनसीबी दबे पांव नहीं आई थी, लेकिन उसकी समझ में यह कभी नहीं आया था, वह कैसे माधव को बचाए और कैसे को बचाए।

इतने दिनों बाद, घर से निकल आने के बाद, सुनसान सड़क के किनारे रात के सन्नाटे में, अपनी रुलाई के बीच, ममता को वह लमहा याद आया, जब शिवा से अलग होने के बाद उसे मौत को गले लगाने का ख्याल आया था, जब वह जान देना चाहती थी, तब माधव ने उसे ऐसा नहीं करने दिया था, क्योंकि जान देने का मकसद शिवा था और शिवा का भरम टूट चुका था। लेकिन उस दिन ममता को लग रहा था, उसने माधव की बात मानकर गलती की थी। कौन किसका होता, तब कुछ तो खुद अपने आप में जुड़ता-घटता रहता। जब इतना कुछ घट गया था, अगर वह जबरदस्ती जी लेने की जिद न करती तो उसे इतना न गिरना होता। वह मौत कितनी खूबसूरत होती, वह मकसद कितना हसीन होता !

उस दिन एक बार फिर ममता के मन में वही ख्याल कुलबुलाने लगा था। लेकिन अगले ही क्षण उसने कुचल दिया उस ख्याल को, जिसे कितने-कितने साल पहले, उसने शिवा के चले जाने के बाद माधव के कहने पर एक बेकार बलिदान समझकर कुचल दिया था। उस वक्त, उस दिन

माया थी उसकी वजह। एक नन्हीं, फूल-सी नाजुक बच्ची, जो उसकी बेटी थी, उस वक्त जो खौफ और दहशत के अंधेरों में भटक रही थी और जो उससे लिपटी हुई, अपनी भोली निगाहों से, नन्हें हाथ फैलाकर उससे उस जिंदगी की भीख मांग रही थी जिसका उसे हक था और जो तब तक उसे कभी मिली नहीं थी। धीरे-धीरे ममता की रुलाई का दौर कम होने लगा। उसने माया की तरफ देखा। एक पूरी जिंदगी थी उसके सामने। अगर वह किसी तरह माया को बचा ले जाए तो भी शायद उसके जीने का और उसके न मर जाने का कुछ मकसद बच रहेगा। लेकिन सवाल था, वह करे क्या? माया को लेकर जाए तो जाए कहां? माया को बचाए कैसे? माया के बालों पर, तब हाथ फेरते हुए, अपने करीब चिपटाते हुए, ममता ने दूर, बड़ी दूर बेचैन निगाहों से देखा, खालीपन में डूबते हुए, उतराते हुए। एकाएक उसके सामने शिवा का चेहरा घूम गया। पत्थर-सा बोझ था। शीशे की रेत के कण, जैसे उसकी रग-रग में घुसने लगे थे। न जाने कितनी शंका, न जाने कितना संदेह, न चाहते हुए भी, अपनी खुद्दारी, अपने अभिमान को कुचलते हुए भी ममता धीरे-धीरे उठकर खड़ी होने लगी। उसने महेश मेहता के यहां जाने का फैसला कर लिया था। शहर के जाने-माने रईस महेश मेहता ही थे, ममता के वह शिवा। महेश मेहता उर्फ शिवा ने ही तो ममता को उस मुकाम पर लाकर पटक दिया था, जहां उसके चारों तरफ मजबूरियों, हिकारतों का दलदल था, जिसमें वह धंसती चली जा रही थी।

ममता जब तक महेश मेहता के बंगले पर पहुंची, काफी रात गुजर चुकी थी। वहां तक पहुंच जाने के बाद, ममता को लग रहा था, महेश मेहता का सामना कर सकना इतना आसान नहीं था और फिर महेश मेहता पहले जैसे नहीं थे। वह तो एक काफी बड़ी ट्रेवल एजेंसी के मालिक थे। ऐसा नहीं था जो वह इतने दिनों तक उनसे कभी मिली नहीं थी। माधव ने यह घर भी नहीं छोड़ा था। पुराने प्रेम-पत्र लेकर माधव ने शिवा को ब्लैकमेल किया था। इस सिलसिले का ममता को बड़े दिन बाद पता चला था। महेश मेहता ऊंचे ओहदे पर थे, उनके औलाद नहीं -
आध बार उन्होंने ममता से मिलने की कोशिश की थी। यह

हुए भी ममता को अजीब-सा लग रहा था। एक क्षण को उसके अंदर वापस लौट चलने का विचार आया था। लेकिन माया को लेकर जायेगी कहाँ, यह सवाल था उसके सामने। लेकिन उससे बड़ा सवाल था, उस आदमी के सामने दामन फैलाने का, जिसने उसकी जिंदगी में वह आग लगायी थी, जिसमें जलते हुए, सुलगते हुए, वह खाक हो चुकी थी। यही था वह आदमी जिसने उसके मासूम सपने तोड़ डाले थे, उसे बरबाद कर डाला था और किसी सस्ते चोर की तरह उस वक्त उसे छोड़कर भाग गया था, जब वह अकेली हो गई थी, बिल्कुल अकेली।

महेश मेहता के बंगले के अंदर बाईं तरफ एक पतली सड़क थी और दाहिनी तरफ दूसरी सड़क। दोनों सड़कों के बीच तिकोने किस्म का बगीचा था, जिसमें बेंगन-बेलिया, मालती, केना के फूल लगे थे। फूलों की कतार से हटकर, गोलाकार हौदे के अंदर फुहारा था, जिसके चारों तरफ स्पाट लाइट लगी थीं। बायीं ओर दाहिनी सड़क के किनारे पर पन्द्रह-बीस फीट के फासले पर, लम्बे खंभों पर गोल ढक्कन के अन्दर से बिजली के बल्ब की रोशनी आयतन के आकार में निकल रही थी। तिकोने बगीचे के बाद, सामने के फाटक से सीधी चढ़ाई पर फैली हुई इमारत का पोर्टिको था। पोर्टिको के अंदर एक गाड़ी खड़ी थी। पोर्टिको से लगे हुए बरामदे की छत के ऊपरी किनारों पर, दोनों तरफ, गिलास की शक्ल के लैम्प की रोशनी, पिछले हिस्से से अंधेरे को और ज्यादा बढ़ा रही थी। हल्की-हल्की हवा के झोंकों के बीच, झींगुर की आवाज, खड़खड़ाते हुए पत्तों के बीच कभी-कभी किसी जानवर का निकल आना, रोशनी के हिलते हुए साये और माहौल में गमकती हुई फूलों की खुशबू, किसी आने वाले लमहे के इंतजार में जैसे रुकी हुई थी, थमी हुई थी।

ममता के लिए फैसला कर पाना बड़ा मुश्किल था। फिर भी न जाने क्यों वह बायीं तरफ वाली सड़क पर, माया का हाथ थामे हुए चल दी। फाटक के अंदर घुसते वक्त तक उसे मालूम नहीं था, वह नहीं जानती थी, उसे महेश मेहता से मिलना भी था या नहीं। वह सोच रही थी, अपने अंदर के जजबात की पकड़ से बाहर निकल पाने की कोशिश कर रही थी। उसके सामने न तो कोई अंजाम था और नहीं कोई असलियत। वह तो बस

अपने आप, चाहे बिना चाहे, चुपचाप, धीरे-धीरे बंगले के अंदर चली आई थी। वह अंदर जाना भी चाहती थी और वापस भी लौट जाना चाहती थी। तभी न जाने कहां से जमीन घूमने लगी थी, फूल-पत्ते, पेड़-पौधों की डालियां हिलने लगी थीं। थकन के मारे बेबस होकर पोर्टिको से जरा-सी दूर पर ममता लड़खड़ा कर गिरने लगी थी, तब माया ने उसे पकड़कर सहारा दिया था।

जिस वक्त बंगले की बाईं सड़क पर चक्कर खाकर ममता गिरने लगी थी, दाहिनी तरफ से महेश मेहता का बूढ़ा नौकर आ रहा था। उसने अपने क्वार्टर से पोर्टिको तक का रास्ता पूरा कर लिया था। वह पोर्टिको के अंदर घुसकर बरामदे की सीढ़ियों पर चढ़ने वाला था, तभी उसकी निगाह माया पर पड़ी जो अपनी छोटी-सी बांहों में लड़खड़ाती हुई ममता को संभालने की कोशिश कर रही थी। बूढ़ा नौकर बरामदे की सीढ़ियों की तरफ से मुड़कर सीधे बाईं तरफ की सड़क की तरफ दौड़ लिया था। उसके हाथ में झोला था, कंधों पर गमछा, ऊंची धोती के ऊपर बढ़ी और झुर्रियों वाला चेहरा, मिचमिचाती आंखों पर मोटे फ्रेम वाला चश्मा था। बूढ़ा नौकर ममता तक पहुंचने की कोशिश कर रहा था। वह लड़खड़ाती हुई ममता को देख रहा था और देख रहा था, बेबस माया को जो ममता को संभालने में खुद भी गिरी जा रही थी। ममता के करीब पहुंचकर उसे सहारा दे, इससे पहले बूढ़ा नौकर खुद ठोकर खाकर गिर पड़ा था। उसका झोला, उसका गमछा, उसका चश्मा छिटक कर गिर गया। बूढ़े नौकर को दौड़ते हुए तो माया ने देखा नहीं था। इसीलिए जब वह सामने आकर गिरा तो माया के मुंह से तेज चीख निकल गई, वह डर गई थी। तब तक ममता बैठ चुकी थी। माया की चीख ने उसकी तंद्रा को एक झटके से जगा दिया था। उसने माथे पर हाथ रखा हुआ था। अपने दाहिने हाथ को धीरे-धीरे ऊपर की तरफ ले जाते हुए, वह उठने की कोशिश करने लगी। इस बीच बूढ़ा नौकर अपना गमछा उठाकर धूल झाड़ने लगा था। गमछे में उलझा हुआ उसका चश्मा उसे मिल गया था। धूल झाड़ना छोड़कर उसने पहले आंखों पर चश्मा चढ़ा लिया। उस वक्त ममता उठकर खड़ी होने लगी थी। बूढ़े नौकर की निगाह उसके पैरों से ऊपर की तरफ

बढ़ने लगी थी। तभी माया ने ममता से पूछा था, "मां! पानी पियोगी ना?"

माया के शब्द बूढ़े नौकर के कान में जब पड़े थे, उस वक्त वह सड़क पर बैठा हुआ, ममता के चेहरे को घूर रहा था।

एक तेज रफ्तार में सनसनाता हुआ तीर, एक घुमनी, एक चक्कर बूढ़े नौकर के अंदर पैंठने लगा था। उसने अपने को संभाला और एक झटके में उठकर खड़ा हो गया। अब वह ममता के ठीक सामने था। उस बंगले का फाटक, बाईं तरफ की सड़क से लगा हुआ बगीचा, फूल-पत्ती, पेड़-पौधे, डाल-डालियां, आसमान, जमीन बूढ़े नौकर को कुछ नहीं दिख रहा था। दिख रही थीं, उस वक्त उसे तो बस ममता की आंखें और आंखों से जुड़ा हुआ ममता का चेहरा। दर्द में छटपटाते हुए, अंतर की गहराइयों से उभरती हुई टीस और कांपते हुए हाथों को उठाकर, बीच की उंगली अलग करके, बूढ़े नौकर ने ममता की तरफ उठाते हुए कांपती हुई आवाज में कहा था, "ममता! तुम!"

ममता को लगा, बड़े दिनों बाद, न जाने कितने-कितने दिनों बाद किसी ने उसका नाम लिया था। कौन था वह, किसने उसका नाम लिया था? उसका कोई नाम भी था, उसे याद नहीं था, फिर भी उसका नाम तो था और किसी ने उसे बुलाया था। यह नाम उसका नाम, उस नाम को कहने वाली आवाज कोई जानी-पहचानी थी। जैसे उसकी जहनियत के विस्तार के किसी टूटे हुए हिस्से से जुड़ी हुई आवाज लौट-लौट कर, न जाने कहां से आकर, दस्तक दे रही थी। पोर्टिको के बगल की छत पर लगी हुई गिलास की शक्ल की बत्ती की रोशनी, सीधे बूढ़े नौकर के चेहरे पर गिर रही थी। बूढ़ा नौकर उस वक्त, दाहिनी सड़क की तरफ मुंह किए खड़ा था, ठीक ममता के सामने। ममता ने पहचानने की कोशिश की। जहां उसकी आंखें बूढ़े नौकर को देख रही थीं, वहीं दूसरी तरफ उसका मन, उसका दिमाग, यादों के दरीचों में टटोल-टटोल कर कुछ खोज रहा था, कुछ पहचान रहा था और तभी; बड़ी कोशिश के बाद, वह याद का टुकड़ा फिसलते-फिसलते, उसकी पकड़ में आ गया था, जिसके साथ एक खुशी-भरी चीख निकली थी उसके कांपते होंठों से,

"रामू काका···"

"हां ममता, बेटी···" बूढ़ा नौकर अपना सिर हिला रहा था। एक सहारा मिला था। बचपन की यादों से जुड़ा हुआ किसी नाम का सहारा मिला था। तभी जब बूढ़े नौकर ने ममता के कंधे थपथपाना शुरू किया था, वह उसके सीने में मुंह छिपाकर रोने लगी थी।

ममता रो रही थी, बूढ़ा नौकर रो रहा था और माया देख रही थी, कभी बूढ़े नौकर को और कभी अपनी मां ममता को।

"कहां थी तू ममता ?···मैंने तो सबर कर लिया था, कहीं मर-खप गई होगी तू !" बूढ़े नौकर ने गमछे से आंसू पोंछते हुए कहा था।

बूढ़े नौकर के सीने से अपना सिर उठाते हुए, डबडबाती हुई पलकों को झपकाते हुए ममता ने कुछ कहने की कोशिश की लेकिन शब्द गले में ही फंस गए थे।

"बोल बेटी···कह डाल !"

"तुमने ठीक सोचा था, रामू काका ! मैं तुम्हें जिंदा दिखती हूं क्या ?"

"नहीं बेटी···नहीं, ऐसा न कह···मैं तेरा बाप नहीं हूं, फिर भी क्या बाप से कम प्यार किया था मैंने ?"

"काका !"

"आओ अंदर चलो बेटी···" बूढ़े नौकर ने झोला उठा लिया था। यह रामू काका का हुक्म था या बूढ़े बाप की फरियाद, यह ममता की समझ में नहीं आया, लेकिन जब बूढ़े नौकर ने उसके कंधों पर अपना एक हाथ रखा तो वह खुद-ब-खुद उसके साथ चलने लगी थी।

थोड़ी-सी सड़क का फासला पार कर बूढ़ा नौकर, ममता और माया पोर्टिको से बरामदे के अंदर दाखिल हो गए। आगे बढ़कर बूढ़े नौकर ने जाली का दरवाजा खोलकर ममता और माया को अंदर किया और फिर जाली के दरवाजे में चिटकनी लगाकर, दूसरा दरवाजा भी बन्द कर दिया। गैलरी के बगल में दाहिनी तरफ महेश मेहता की बैठक थी। बूढ़ा नौकर दोनों को बैठक के अंदर ले गया और उन्हें सोफे पर बैठाकर, करीब-करीब भागता हुआ अंदर की तरफ गया। ममता ने इस बीच अपनी अस्त-

व्यस्त धोती को ठीक कर लिया था और माया के सिर पर हाथ फेरने लगी थी। तभी बूढ़ा नौकर अंदर से वापस आ गया। उसके हाथ में दो गिलास पानी के थे। उसने एक गिलास ममता को दिया और दूसरे गिलास से माया को पानी पिलाने लगा। लेकिन माया ने गिलास ले लिया और पानी पीने लगी। बूढ़ा नौकर माया के गिलास लेते ही अंदर चला गया, "अभी बुलाता हूं साहब को" कहते हुए।

ममता देख रही थी, महेश मेहता का वैभव। उस आलीशान बंगले की ऊंची छत वाली बैठक में, कीमती कालीन के ऊपर पैर रखते हुए उसे डर लग रहा था। धूल-भरे पैर, मैले-कुचैले कपड़े पहनकर, गद्देदार सोफे पर बैठते वक्त उसकी रूह कांप गई थी। उसे बार-बार अपनी गलती का अहसास हो रहा था, वह सोच रही थी, आखिर वह यहां आई क्यों? माया के लिए ना? लेकिन अगर महेश मेहता ने माया को रख लेने से मना कर दिया तो? फिर माया उनकी लगती कौन है? माया को वह रखने वाले ही क्यों थे? उसका कौन-सा हक था, किस रिश्ते से वह यहां आई थी? और फिर इतने दिनों बाद, आज, इस हालत में, जब वह पूरी तरह टूट चुकी थी, क्या उसे यहां इस तरह, रात के वक्त आना चाहिए था? न जाने कितने सवाल उसके अंदर घूम रहे थे, उसे, उस वक्त, खुद अपने आप से घिन आने लगी थी। एक तरह की वितृष्णा, एक खास तरह का डर, उसके अंदर उठकर खड़ा होने लगा था। उसने माया की तरफ देखा था। माया उस वक्त अपना सिर उठाए, वह सब कुछ देख रही थी, जो उसने कभी सपने में भी नहीं देखा था, जाना था। उसके अंदर का मोह, एक बार उसे कमजोर बनाने लगा था। क्या कभी वह खुद ऐसी जगह रह सकती थी? ममता ने माया की जगह स्वयं को रखा और तब उसे माया की नादान निगाहों में एक हसरत, एक सुनहरे ख्वाब की परछाई नजर आई थी। पर दूसरे क्षण उस अनजाने उधार के सुख की चाहत को कुचल डाला था उसने। वह उठकर खड़ी हो गई। उसके उठकर खड़े होते ही माया भी चौंक कर उठ गई थी। ममता ने इतनी देर में वहां से चले जाने का फैसला कर लिया था। वह सोफे के सामने से चलकर माया के करीब आई, उसने माया के सिर पर हाथ फेरा और दरवाजे की तरफ बढ़ने

लगी, तभी उसे महेश मेहता की आवाज सुनाई दी थी, "क्या देख रहा हूं, ममता · तुम···" एक आश्चर्यजनित खुशी के साथ महेश मेहता ने कहा था। *अब तो ममता के लिए चला जाना मुमकिन नहीं था।* महेश मेहता के आ जाने के बाद, उनके शब्दों से झलकती हुई खुशी ने, काफी हद तक ममता की झिचक दूर कर दी थी। वह दरवाजे से वापस लौट आई और उसी सोफे के पास खड़ी हो गई, जहां से उठकर अभी बाहर जाने लगी थी।

"हां, शिवा! आज मैं तुमसे कुछ मांगने आई थी।" ममता की आवाज में दर्द था।

"ममता! तुम मुझसे कुछ मांगोगी कभी, ऐसा सौभाग्य मेरा है क्या? कितना कर्ज है, तुम्हारा मेरे ऊपर!"

"कर्ज?"

"हां! पूरी एक जिंदगी का कर्ज, जिसे सात जन्म में भी चुका पाऊंगा भला?"

"वह मैंने कब कहा। मैं यहां किसी हक से तो आई नहीं!"

"हक मानो तो है, न मानो तो···अच्छा बैठो तो।"

"यह माया है, मेरी बेटी," ममता ने सोफे पर बैठते हुए कहा।

"जानता नहीं हूं क्या?" माया को दुलराते हुए महेश मेहता ने उसे अपने पास खींच लिया। माया एक पल को झिझकी, फिर ममता की तरफ देखने लगी। ममता के चेहरे पर कोई विरोध न देखकर वह महेश मेहता के पास बैठ गई।

"क्या हालत है ममता तुम्हारी? हे भगवान, क्या इस पाप से मैं कभी उबर पाऊंगा?" महेश मेहता ने सांस निकालते हुए कहा।

"कौन-सा पाप? किस कर्ज की बार-बार याद दिलाते हो तुम?" ममता ने सोफे पर अपने कपड़े ठीक करते हुए व्यंग्य से कहा।

"नाराज हो न···बहुत नाराज हो मुझसे, फिर मुझे कुछ कहती क्यों नहीं···?"

"अब उन बातों को कहने से क्या होगा? वह वक्त की मार थी··· शायद मेरी ही तपस्या में कुछ कमी होगी।"

"नहीं···नहीं···कभी नहीं··· तुम्हारी तपस्या···इस तरह तुम्हारा"

जी लेना यही तो है वह पीड़ा जो मेरे मन को सालती रहती है। तुम्हारा न होना''मुझे लगता है,'''जैसे खालीपन'''घुप अंधेरों में जैसे हर वार मुझसे कुछ-न-कुछ फिसलकर छूट जाता रहा है।"

"शिवा, मैं जरा जल्दी में हूं।" ममता ने वात काट दी थी।

"वोलो न ममता !"

"हमारी हालत तो तुम्हें पता होगी न ?"

"हां !" महेश मेहता ने धीरे से कहा।

"इधर कुछ दिनों से माधव कितना गिर चुका है, इसका भी अन्दाज होगा तुम्हें ?"

"कुछ-कुछ पता है मुझे।"

"उस घर को, जिसमें मैं रहती हूं, जहां मेरी वच्ची है, माधव ने एक ऐसी घिनौनी तस्वीर का हिस्सा वना दिया है, जहां अव और जी सकना मुमकिन नहीं है। माधव एक वहशी जानवर वन गया है। शरावी, जुआरी तो कई होते हैं लेकिन यह चीजें अव तक उसके जिस्म को नहीं, उसकी रूह को मार चुकी हैं।"

"मैंने कोशिश की थी, माधव को समझाने की'''"

"कोई नहीं समझा सकता है उसे ! अव वह खत्म हो चुका है''' मैं भी खत्म हो चुकी हूं। नशे की परत से उवरते ही उसकी हिंसा शुरू हो जाती है। घर से जेवर-गहने, कपड़े-लत्ते तो कव के विक चुके थे और अव'''"

"और अव'''?"

"और अव जंगली, खूंखार जानवर की तरह मेरी इज्जत'''" ममता फूट-फूटकर रोने लगी थी।

"मैं एक वार और कोशिश करता हूं'''।"

"उससे होगा क्या, सवसे कर्ज लिया है उसने ! पैसे-पैसे का मोहताज है वह। गुंडे, शरावी, वदमाश उसके साथ आते हैं, और घर में वैठकर कच्ची-पक्की शराव पीते हैं, जुआ खेलते हैं, उसके साथ'''माधव के साथ, उसकी वीवी का, उसकी वेटी का सौदा करते हैं। कई वार मेरी

इज्जत लूटने की कोशिश हो चुकी है। कितनी बार मेरे कपड़े उतर चुके हैं।"

"तुम ममता उसे छोड़ क्यों नहीं देती ?"

"मैं अपने लिए नहीं आई हूं यहां।"

"फिर भी अगर तुम तलाक लेना चाहो···"

"मेरा सब कुछ चुक गया है, मुझे भुला दो शिवा !"

"नहीं ममता ! मैं···मैं तुम्हें भुला सकता हूं भला ! मैं तो कहता हूं, तलाक लेकर यहाँ क्यों नहीं आ जाती ?"

ममता कुछ देर महेश मेहता को घूरती रही, "मैं यह तो न कहूंगी शिवा, तुम एक कमीने इन्सान हो, लेकिन हां, इतना जरूर कहूंगी, यह बेशुमार दौलत, यह रुतबा जो है तुम्हारे पास, इसे पाने के लिए ही तो तुमने मुझे छोड़ा था न ?"

"लेकिन इसे पाने के बाद···"

"इसे पाने के बाद, उसे छोड़ने के बाद, ऐसा हुआ, वैसा नहीं, यह सब कायर कहते हैं। तुमने शिवा ! इस दौलत को पाने के लिए, मुझे छोड़ा था न ! और आज जब वह औरत नहीं रही, जिसकी वजह से तुमने यह दौलत पाई, तो फिर वहीं पहुंच जाना चाहते हो, जहां से तुमने अपना खेल शुरू किया था !"

"ममता, मुझे समझने की कोशिश करो—वह औरत बदचलन थी, इसका पता मुझे बड़ी देर बाद लगा था।"

"और अब ! मुझे बदचलन बनाना चाहते हो ?"

"मैंने ऐसा तो नहीं कहा···"

"तुम सब एक जैसे हो, सब कुछ कर डालने के बाद, उस हर चीज का जवाब है, तुम्हारे पास जो तुमने भोगी है, जिसका तुमने उपभोग किया है।"

"मैंने क्या पाया है और क्या भोगा है·· मैं ही जानता हूं। कभी कहा तो नहीं तुमसे। आज जब तकदीर ने तुम्हें ऐसे मुकाम पर पहुंचा दिया था···"

"लेकिन वह मुकाम ऐसा नहीं है, जहां हम मिल सकें।"

"क्यों ?"

"तुमने मुझे समझ क्या रखा है, शिवा ! इस आलीशान बंगले में, ऐशो-आराम की इस जगह पर, तुम्हारे साथ मैं रहूंगी···उस दौलत को मैं भोगूंगी, जिसने मेरा संसार उजाड़कर रख दिया था···फिर हमारे और क्रिमनल्स के बीच फर्क ही क्या रह जाएगा ?···मुझे इसमें न लपेटो शिवा ···थोड़ा-सा सुख जब मेरे भाग्य में नहीं था, तो इतना सुख, इतना आराम भोग पाऊंगी भला !"

"ममता ! यू आर रीयली ग्रेट। आई रेसपेक्ट यू !"

"ग्रेट क्या हूं, मुझे वह सब कह लेने दो, जिसके लिए मैं यहां आई हूं। आज तो हद हो गई ! यह नन्हीं-सी बच्ची, छोटी उम्र से अपने बाप के कारनामे देखती रही है। माधव के जुल्म, उसका वहशीपन, घर की मनहूसियत, इसके अंदर खौफ की न जाने कितनी अंधेरी ढलानें बना गया है। यह कभी संभल पाएगी, इसका शक है मुझे। थर-थर कांपने लगती है यह माधव को देखकर। घर में गुण्डे-बदमाश जो आते हैं न, इधर कई दिनों से इसकी ताक में थे। आज उन लोगों के हाथ माधव ने इसे, अपनी बच्ची को बेच दिया था। बड़ी मुश्किल से इसकी जान बचाकर भागी हूं।"

"ओ गॉड !" महेश मेहता का चेहरा तमतमा गया था।

"तभी तो लाई हूं, इसे तुम्हारे पास !"

"लेकिन तुम कहां जाओगी ?"

"और कहां, उसी नर्क में।"

"तुम मेरी बात मानती क्यों नहीं ?···यहां नहीं रुकना चाहती हो न, न रुको, कहीं और तुम्हारे रहने का इंतजाम कर सकता हूं मैं।"

"लोग तुम्हारी रखैल कहें मुझे, यही चाहते हो न ?"

"यू आर डिफीकल्ट टू अंडरस्टैंड, वेरी डिफीकल्ट, ममता !"

"अब मैं जाऊंगी शिवा ! कहीं माधव यहां आ गया तो···"

"यह जिन्दगी, कितनी मुश्किल चीज है न ?"

"है भी और शायद नहीं भी···"

"लेकिन, तुमने इसे और अधिक मुश्किल नहीं बना दिया है क्या ?"

"मैंने···तुम···तुम शिवा, मुझे दोष दे रहे हो···"

"मैं तुम्हें दोष दूंगा, भला ! मैं तो आज अपनी भूल का पश्चात्ताप

करना चाहता हू।"

"कुछ भूलें ऐसी होती हैं, जिन्हें ठीक नहीं किया जा सकता···और फिर जिन्दगी से पूरा-समूचा, बिना टूटे हुए निकल जाना, कितना कठिन होता है···है न शिवा।"

"सच में!"

"अच्छा तो मैं चलती हू, अब मेरी बच्ची का ख्याल रखना।" ममता का गला रुंध गया था। सोफे से उठकर वह माया के पास आकर रुक गई। बैठक के बीच वाली गोल मेज के पास महेश मेहता खडे थे। उन्होंने इसी बीच अपना पाइप सुलगाना शुरू कर दिया था। उधर माया की समझ मे कुछ भी नही आ रहा था। इतने बडे घर मे, इस कीमती साज-सामान के बीच, इतने बडे-बड़े लोग, कितनी बडी बातें कर रहे थे। उसका तो मासूम दिल धडक रहा था, उसका नन्हा-सा दिमाग हिसाब लगा रहा था, बस यही सोच रही थी, कही उसका भी ऐसा ही घर होता, जहां वह एक राजकुमारी की तरह रहती! यह तो परियों का देश था, किसी खूबसूरत ख्वाब मे, उस वक्त वह डूबती जा रही थी, खोती जा रही थी, जब ममता उसके करीब आकर रुक गई थी।

मां के करीब आते ही, माया उठकर खडी हो गई थी। ममता ने अपने दोनों हाथ फैला दिए थे, जिनमें आकर वह समा गई। खूब प्यार किया था ममता ने उसे। उसके माथे पर, उसके बालो पर हाथ फेरा, उसके गाल चूमे, उसे अपने सीने से चिपका लिया। माया बेहद उदास हो गई थी। डरी हुई, सहमी हुई, वह मा से लिपटी जा रही थी। उधर किसी अनजाने दर्द की कचोट मे कराहते हुए, ममता ने धीरे-धीरे माया को उसी तरह अलग किया था जैसे कोई अपने जिस्म का हिस्सा, अपनी जहनियत का टुकड़ा, अपनी रूह का जजबा अलग करे। अंदर से छटपटाते हुए भी ममता ने अपने आसू रोक लिए थे और माया के कान मे फुसफुसाते हुए कहा था, "तुझे बेटी यही रहना है। आज से इन्हें अपना पापा समझना और मुझे भूल जाना।"

एक मा के लिए यह बहुत बड़ा फैसला था, लेकिन उसे मालूम था, वह कुर्बानी उसे देनी थी। अफसोस क्या करना था उसे, अफसोस करने से

होना भी क्या था, इसीलिए तो उसने अपने मन को मार लिया था, अपने आंसू भी कुचल डाले थे। और फिर अफसोस तो तब होता, उसे होता जिसने पहले कुर्बानी न दी हो। आज इस वक्त तो उसे लग रहा था, उसकी जिन्दगी बारूद का एक ढेर थी, जिससे उबलकर वक्त-बेवक्त, एक आग का दरिया, आज से नहीं, हमेशा-हमेशा से, उसके अंदर उसके मन को, उसके शरीर को, उसकी आत्मा को निगलता रहा है। वह जानती थी, खुद को बचा पाना उसके लिए नामुमकिन था, लेकिन अगर कहीं माया बच जाय तो शायद, मरने से पहले कोई तो काम वह कर जाएगी।

"यहीं रहना और मुझे भूल जाना!" बस इतना ही कह पाई थी ममता उस वक्त अपनी बेटी से। इसके बाद उससे और कुछ कहा नहीं गया था। उसने शिवा को नहीं देखा, माया को नहीं देखा, उस बैठक को, दीवार को, किसी चीज को नहीं देखा और दरवाजे की तरफ चल दी। लेकिन वह आगे नहीं बढ़ पाई। उसका आंचल माया के हाथ में था। उस आंचल में अपने को लपेटते हुए, वह एक बार फिर माया के पास लौट आई। उसके हाथों से अपना आंचल छुड़ाया, माया का माथा चूमा और भागकर बैठक से बाहर चली गई।

ममता जब तक बैठक से लगी हुई गैलरी पार करके पोर्टिको तक पहुंची, महेश मेहता आ गए थे। "ममता, रुक जाओ! मैं तुम्हें गाड़ी से छोड़ने चलता हूं।" महेश मेहता ने कहा।

इससे पहले कि महेश मेहता अंदर की तरफ गाड़ी की चाभी लेने को चलें, ममता ने उन्हें रोक दिया, "क्या हो गया है, शिवा तुम्हें?" इतनी रात गए तुम मुझे छोड़ने चलोगे!"

"नहीं तो क्या अकेली जाओगी?" महेश मेहता ने पीछे घूमकर ममता से पूछा।

"मैं रामू काका के साथ चली जाऊंगी। तुम अंदर जाओ शिवा, माया अकेली है ना।"

"तो मैं रामू काका को भेजता हूं।" कहकर महेश मेहता अंदर चले गए।

ममता उसी रास्ते से होकर बंगले से बाहर जा रही थी, जिधर से

अभी कुछ देर पहले वह आई थी। रामू काका उसके साथ था और दोनों चुपचाप बंगले के बाहर निकल आए थे। बंगले के बाहर निकलकर ममता और रामू काका ने पैदल ही बस्ती की ओर चलना शुरू कर दिया। लेकिन कुछ ही दूर चलना पड़ा था उन्हें जब एक रिक्शा मिल गया था। रिक्शे में पहले ममता बैठी और फिर रामू काका। आधी रात गुजर चुकी थी। सड़क पर सन्नाटा था। कुछ दूर निकल आने के बाद ममता ने ही पहल की थी, "रामू काका! मेरी बेटी का ख्याल रखना!"

"अरे ममता! इस बात की तुम जरा भी चिंता न करना। तेरी बेटी को मैं वैसे ही पालूंगा, जैसे मेरी अपनी बेटी।"

"अब मैं कभी नहीं आऊंगी रामू काका!"

"क्या कह रही हो तुम···अपनी बेटी से नाता तोड़कर जा रही हो?"

"और क्या काका!" ममता की आंखों से दो आंसू टपककर रामू काका के हाथों पर गिर पड़े थे।

रामू काका के हाथ पर टपके हुए आंसू ममता के मन में जागती हुई उस टीस से निकले थे, जो पहली बार अपनी बेटी को छोड़कर आने वक्त पैदा हुई थी। एक थरथराहट, एक हनक, हुमकती हुई उसके अंतस्तल में कंपकंपी की लहर दौड़ा गई थी। उसके सामने काली रात में डूबा हुआ आसमान था और दूर-दूर तक फैली हुई सितारों की वह दुनिया थी, जिसमें न जाने कितने-कितने दिनों में वह ढूंढ रही थी, अपनी किस्मत का एक सितारा। इधर कुछ दिनों से उसे लगने लगा था, उसका सितारा वही था जो टूटकर आसमान से गिर जाता था और न जाने कहां वातायन के अंधेरों में खो जाता। उसने कितनी-कितनी बार उस सितारे को ढूंढा था, तलाश किया था। और आज वह फिर देख रही थी उसी आसमान की तरफ, अनगिनत सितारों के बीच, कहीं से टूटकर कोई सितारा गिरे, एक बार, सिर्फ एक बार, गिरने के बाद वह सितारा उसकी मुट्ठी में समा जाय और वह फिर कभी ना खोले उस मुट्ठी को।

"ममता! याद है तुझे···"

"क्या काका?" ममता ने आसमान से अपनी नजर

पलकों से रामू काका की तरफ देखा।

"आज से बारह बरस पहले, इसी तरह तू मेरे साथ रिक्शे में बैठकर आई थी।"

ममता ने अपनी आंखें दूसरी तरफ फेर लीं।

"शिवा उस दिन पहली बार नौकरी पर जा रहा था और तू मेरे साथ उसे स्टेशन छोड़ने गई थी।"

"हां काका !" ममता ने धीरे से कहा।

"और इसी तरह, तेरी आंखों से दो आंसू टपककर मेरी हथेली पर गिरे थे।"

"काका ! मैं बड़ी अभागिन हूं। उस दिन शिवा को छोड़कर आई तो फिर शिवा से न मिल सकी और अब अपनी बेटी को···"

"ऐसा ना कह···मैं तो हूं न···और फिर तेरा शिवा पहले जैसा नहीं है।"

"यह बात नहीं है काका !"

"तब ?"

"हर मां अपनी बेटी को डोली में बैठाकर विदा करती है और एक मैं हूं···"

"तू मजबूर है···"

"हां काका ! माधव के होते हुए भी··"

बस्ती के करीब वाली सड़क पर रिक्शा पहुंच चुका था। ममता ने रिक्शा रुकवाया और उतर पड़ी।

"काका, अब तुम जाओ···"

"तू अपना घर नहीं दिखाएगी मुझे ?"

ममता ने रामू काका की तरफ देखा। उसकी आंखें गीली होने लगी थीं। रामू काका की तरफ ज्यादा देर नही देख पाई थी वह। उसने अपनी आंखें नीचे की तरफ झुका लीं और नाखून से जमीन कुरेदने लगी।

"तुम्हें तो याद होगा काका !"

"क्या ?"

"क्या-क्या सपने थे घर के !"

"हां !" रामू काका के मुंह से ठंडी सांस निकल गई।

"तो यह घर अब क्या देखोगे काका !···मैं चलती हूं।"

रामू काका के जवाब का इंतजार नहीं किया ममता ने और पीछे मुड़कर चली गई। रामू काका दूर तक ममता को जाते हुए देखता रहा और जब ममता उसकी आंखों से ओझल हो गई तब अपनी पलकें पोंछते हुए वह रिक्शे में आकर बैठ गया।

ममता गली की तरफ से ही घर के अंदर आई थी। आंगन में आकर उसने देखा, दरवाजा अभी तक अंदर से बंद था। वह चुपचाप आकर खटोले के पास खड़ी हो गई। तभी उसे माधव का ख्याल आया। थके मन से उसने कुंडी नीचे की तरफ गिराई और दरवाजा खोल कर उसने देखा, बाहरी कमरे में कोई नहीं था। वह बाहरी कमरे में आ गई। उसने बाईं तरफ देखा, जहां माधव बेदम, बेहोश-सा पड़ा हुआ था। ममता धीरे-धीरे माधव की तरफ बढ़ने लगी। माधव के करीब आकर कुछ देर देखती रही। उसी वक्त उसे घर के खुले दरवाजे की याद आई। माधव के पास से हटकर वह बाहरी चौखट तक आई और उसने दरवाजा बंद कर दिया। दरवाजा बंद करने के बाद वह वापस माधव के पास पहुंच गई। एक बार उसने सोचा वह माधव को उठाकर तख्त पर लेटने के लिए कहे, लेकिन दूसरे ही क्षण उसे अहसास हो गया कि इस स्थिति में माधव को उठाना ठीक नहीं होगा। वह वापस तख्त के पास गई और वहां से एक तकिया उठाकर उसने बड़ी मुश्किल के बाद, माधव के सिर के नीचे रख दिया और खुद वहीं बैठ गई।

ममता उस वक्त माधव को देख रही थी। माधव बड़ी गहरी नींद में सो रहा था। उसकी सांस तेज चल रही थी और उसकी गर्दन एक तरफ को लुढ़क आई थी। माधव के पास से कच्ची शराब के भभके आ रहे थे। एक तो बेटी को छोड़कर आई थी वह, ऊपर से शिवा ने उससे माधव को छोड़कर अपने साथ रहने के लिए कहा और उसने बड़ी सख्ती से शिवा के प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। ऊपर से लौटते वक्त रामू काका ने पुरानी यादों के जख्म कुरेद दिए थे। ममता का मन एक अजीब-सी तपन में जलने लगा था। शराब की भभक माधव के मुंह से बराबर आ रही थी। पूरे

कमरा जैसे शराव की भट्टी-सा जल रहा था। चारों तरफ वोतलें उल्टी-सीधी पड़ी हुई थीं।

ममता को याद आया जब पहली वार माधव शराव पीकर आया था। उसके पैरों पर गिर पड़ा था, उससे माफी मांगी थी उसने। उसे लगा वेचारा माधव भी उतना ही वदनसीव था जितनी वह ! जिंदगी ने माधव को कभी संभलने का मौका ही नहीं दिया। उसे लगा जिंदगी और मन, हकीकत और सपना यह दो अलग-अलग चीजें हैं। और जिस वक्त यह एक साथ जुड़ती हैं, वह वक्त बहुत पीछे, वहुत पहले छूट गया था। कसूर न तो माधव का था और न ही नियति का, कसूर तो था सिर्फ उस भरम का जिसे एक वार टूट जाने के वाद उसने जोड़ने की कोशिश की थी। वह थक गई थी। माधव के कच्ची शराव के भभके जव उससे और वर्दाश्त न हुए तो वह उठकर अंदर चली गई।

तीन

ममता के चले जाने के वाद महेश मेहता ने माया को बड़े प्यार से थपथपाया और धीरे-धीरे उसे दीवान की तरफ ले गए। दूध का गिलास उसे उठाकर दे दिया। कुछ हिचक के वाद माया ने एक वार में ही दूध पीकर गिलास मेज पर रख दिया। माया के दूध पी लेने के वाद, महेश मेहता ने उसे दीवान पर लिटा दिया और अंदर जाकर एक चादर ले आये। माया के सिर के नीचे कुशन रखने के वाद उन्होंने उसे चादर उढ़ा दी।

माया को सुला देने के वाद महेश मेहता को एक सुकून मिला। उनके अकेले मन में कहीं एक अहसास करवट वदलने लगा। यह अहसास उनके अंदर रह-रहकर गुदगुदी मचा रहा था। उन्होंने सारी वत्तियां वन्द कर दीं, सिर्फ वैठक के कोने में रखे हुए लैंप को जला दिया। माया को चादर उढ़ाते वक्त, पहली वार उन्होंने ध्यान से उसे देखा तो देखते रह गए थे। वह विलकुल ममता का प्रतिरूप थी। वही तीखे नाक-नक्श, गोरा रंग,

बड़ी आंखें। भद्दे कपड़ों में भी, उस वक्त माया बेहद खूबसूरत लग रही थी। बार-बार उसे देखते रहने को जी चाहता था।

माया के पास से अलग हटकर, महेश मेहता एक आराम कोच पर अधलेटे होकर बैठ गए। उनके मन में, उनके दिमाग में, उस वक्त एक धुंध छाई हुई थी। ममता को बाहर तक छोड़कर, बूढ़े नौकर को ममता के साथ भेजकर लौटने के बाद बार-बार उन्हें ममता की बातें कुरेद रही थी। और मन में माया को देखकर एक नया अहसास करवटें बदलने लगा था। इन दोनों के बीच एक फासला था, जिसे पूरा करने के संघर्ष में, उनकी शख्सियत जूझ रही थी।

उनके अकेले, एकाकी जीवन में ममता ने ऐसी चोट कर डाली थी, जिसे सहन कर लेने के बाद भी, मन में कहीं पर कोई चीज कुरेद रही थी। अपने को कितना छोटा पाया था उन्होंने! उनके सामने, जहां एक तरफ सब कुछ होने हुए भी जैसे कुछ नहीं था, और दूसरी तरफ पूरी तरह टूट जाने के बाद भी, ममता जैसे एक बड़ी ऊंची जगह पर खड़ी होकर, किसी पाक रोशनी में नहायी हुई, बार-बार उन अपराधों का हिसाब मांग रही थी, जो उन्होंने किए थे और जिनकी अनुभूति हमेशा-हमेशा से उन्हें तड़पाती रही थी। वह आलीशान बंगला, समूचा वैभव, प्रभुत्व और सारा सुख भी उस अनुभूति की यातना से कभी उन्हें मुक्ति नहीं दिला सका था। दूर बड़ी दूर से बजती हुई शहनाइयां धीरे-धीरे कम होती जा रही थीं और महेश मेहता को लग रहा था, वह एक चोर की तरह, जिंदगी के कोने-किनारों में घुसकर ऐशो-आराम के वह टुकड़े बटोरते रह गए जो उनके किसी काम न आ सके। दूसरी तरफ आग का एक गोला था, जिसमें ममता भस्म होती जा रही थी।

···तभी महेश मेहता के चारों तरफ, गोलाकार में, हल्के लाल रंग की रोशनी होने लगी। वहां सफेद फ्राक पहने हुए दूध में नहाई-सी, पैरों में महावर लगाए हुए, माया आकर खड़ी हो गई। उसके सीने पर हल्की-हल्की गोलाइयां थीं···वह धीरे-धीरे थिरक रही थी, अपनी मौज में डूबी हुई, मस्ती में नहाई हुई। वातायन के किनारे-किनारे से तभी न जाने कितने साजों की, तरंगों की हल्की-हल्की धुन फूटने लगी। उस धुन पर

माया ने तब नाचना शुरू कर दिया। लेकिन कुछ ही देर बाद, एक झन्नाटे-दार आवाज के साथ, एक डरावना, बदशक्ल, काले चेहरे, बड़े दांत और लंबे बालों वाला इंसान, माया की तरफ बढ़ने लगा। उसे देखते ही माया का थिरकना रुक गया। वह डर गई···उसने चीखने की कोशिश की, लेकिन चीख गले से निकलकर उसके तालुओं में चिपक गई। उसने भागने की कोशिश की, लेकिन उसके पैर जम गए। उसके चेहरे के मोहक अंदाज और रंग जैसे किसी ने नोचकर अलग फेंक दिए थे और उनकी जगह ले ली थी खौफ और दहशत ने।

वह भयानक किस्म का आदमी, बराबर माया की तरफ बढ़ता रहा। तभी उस आदमी ने माया के चारों तरफ हिंसात्मक हाव-भाव और डरावनी हरकतें करनी शुरू कर दीं। माया उसके चंगुल से निकलने के लिए तड़पने लगी···छटपटाने लगी। चारों तरफ तेज किस्म की धुन बज रही थी···धम, धुत, डीह···ढी···धा···धी···ढन···ढन ! लाल रंग की गोलाकार रोशनी कभी धीमी कभी तेज होती, जिसके साथ संगीत की तर्ज बदल जाती और तभी एक धमाका हुआ संगीत का ! लाल, नीली, पीली, बैंगनी रंग की तमाम रोशनी गडमड होती हुई जैसे किसी विस्फोट में मिली हुई, जुड़ी हुई बिखर गई। लाल रंग की गोलाकार रोशनी बन्द गई। संगीत की धुन नहीं थी, तर्ज की गति नहीं थी। बस थी एक खामोशी, एक घुटा हुआ सन्नाटा, जो खुद अपने आप में भिनभिना रहा था। लंबी-लंबी सांसें चल रही थी, जैसे कोई दौड़-दौड़कर अंधेरे में टकरा रहा हो, अनगिनत, चलती-फिरती खामोश छाया से···

महेश मेहता की आंख खुल गई थी। कमरे में अंधेरा था। वह दोनों हथेलियां रगड़ रहे थे। उनका चेहरा पसीने से लथपथ था। उनके पैर कांप रहे थे। उन्होंने उठकर बैठक की बत्ती जला दी और दीवान के करीब जाकर माया के पास खड़े हो गए। माया खामोश नींद की गहराइयों में डूबी हुई थी। वह कुछ देर यूं ही, उसके पास रुके रहे, तभी उन्हें याद आया वह किस्सा जो ममता ने माया के बारे में बताया था।

दोनों हाथों से अपना चेहरा पोंछते हुए, महेश मेहता मैंटल पीस की तरफ बढ़े। मैंटल पीस के ऊपर से उन्होंने पाऊच और पाइप उठाया।

पाऊच से पाइप साफ करने वाला चाकू निकाला। चाकू से पाइप साफ करने के बाद, पाइप उन्होंने सेंटर टेबल पर रख दिया। पाऊच से तबाकू की पत्तियां निकालने के बाद, हथेली पर रखकर कुछ देर रगड़ते रहे। उनकी आंखें झुकी हुई थी, माथे पर पसीने की हल्की बूंदें थी और बीच-बीच में, उनका हाथ काप जाता था। तबाकू के छिलके तैयार करने के बाद उन्होंने पाइप भर लिया। होठो के बीच, गाउन की जेब मे लाइटर निकालकर उन्होंने पाइप जलाया और लंबे-लंबे कश लेने लगे। पाइप से धुआं उनके मुह के अंदर जाकर नाक के नथुने से निकल रहा था। गहरे कश में खिंचकर धुएं के छल्ले चारो तरफ फैलने लगे। महेश मेहता के दिमाग की धुंध छटने लगी। तब कही जाकर उन्हें उस अहसास की गर्माहट का भी पता लगा जो माया के आने में उनके सीने में बार-बार उछाल मार रही थी। उन्हे लगा, उनके अंदर की वह मुर्दा ठंडक धीरे-धीरे निकलकर भागने लगी।

अपने बाप के घर से निकल आने के बाद माया के लिए महेश मेहता के घर का माहौल नया था, अजूबा था। इतना सुख, इतना ऐश्वर्य, इतनी दौलत, उसने सपने में भी नही देखी थी। ममता के चले जाने के बाद, कई दिनो तक वह गुमसुम, उदास, खोई-खोई-सी रहा करती थी। अंधेरे से उसे डर लगता था। दूर-दूर तक माधव की लाल-लाल आखें, उसका पीछा किया करती। शराब के नशे में धुत, उन तीन शोहदो के बीच, उस दिन जब माधव ने उसे पटक दिया था, तब उसने अपनी पाक निगाहों से, उनके वहशी चेहरो को देखा था। डरी हुई हिरनी जैसी किसी खौफनाक मंजर को देखकर भागने लगे और भागते-भागते किसी ऐसी जगह पहुच जाए जहा हवा मे, जहा माहौल में, जहा हर चीज उसे महफूज लगे, बेसाख्ता, बेलाग, खुली हुई, महकदार! माया के नन्हे से दिल ने महेश मेहता के घर को अपना घर मान लिया था। कुछ ही दिनो में वह ममता को भूल गई, माधव को भूल गई, वह गदगी, वह घिनौनापन, सब कुछ भूल गई।

ममता तो न मिलनी थी उन्हे और न मिली, हां ममता का प्रतिरूप जो माया की शक्ल में उभरकर आ रहा था, उनके पास जरूर था। पहले तो अपनी उदास जिंदगी में, डूबते हुए तिनके की तरह, उन्होंने माया

को गले लगाया था; लेकिन धीरे-धीरे माया एक तेज चढ़ते हुए नशे की तरह उनके ऊपर हावी होती चली गई। एक खूबसूरत अहम् का, एक खूबसूरत टुकड़ा, जैसे जानी-पहचानी उम्र की गलियों से, गलिआरों से निकलकर अचानक सामने आ गया था।

महेश मेहता के सामने दूर तक एक तराशा हुआ, निखरा हुआ, एक हसीन नजारा था, जिसकी पाक रोशनी बार-बार उनके अंदर रोमांच की, अनुभूति की अनगिनत तरंगें उठा दिया करती। चंद दिनों में ही माहौल और कपड़ों की वजह से माया का रूप निखर आया। तब वह, गरीबी-विपदा में पली हुई, खौफ और दहशत के अंधेरों में भटकती हुई, माधव की लाल-लाल आंखों और गुंडों की घिनौनी हरकतों से सहमी हुई माया नहीं थी। तब तो वह स्वच्छंद हिरनी की तरह अठखेलियां करती हुई, खिले हुए फूल की महक की तरह, महेश मेहता के इर्द-गिर्द छाई जा रही थी, लिपट रही थी। शाम की चाय के बाद से रात के सोने तक, महेश मेहता बस माया के साथ रहते। उसके साथ खेलते, पढ़ते-पढ़ाते, घूमते, खाते-पीते।

कितने-कितने दिनों बाद, दर्द से छटपटाती हुई उनकी अंतरात्मा ने कोई ऐसा आधार पाया था, जिसे छू-भर लेने से चारों तरफ महक में डूबी हुई नन्हीं-नन्ही फुलझड़ियां फूटने लगतीं। माया के उठने से पहले, वह जाग जाया करते। माया का अच्छे स्कूल में दाखिला करवा चुके थे वह। स्कूल जाने के लिए तैयार होने में वह माया की मदद किया करते। नहाना-नहलाना, स्कूल की ड्रेस पहनाना, किताबें-कापी, पेंसिल का पूरा इंतजाम करने के बाद, वह माया के साथ नाश्ता किया करते। माया को स्कूल छोड़ते हुए, समय से पहले, वह दफ्तर पहुंच जाया करते। स्कूल से छुट्टी होने पर महेश मेहता, माया को लेते हुए, घर आ जाते। उसकी ड्रेस वगैरा बदलकर, उसके साथ दोपहर का खाना खाते। कुछ देर आराम करने के बाद माया को सुलाकर वह दफ्तर चले जाते। थोड़ा-सा काम ही करते महेश मेहता दफ्तर में। वहां उनका जी नहीं लगता। बस पांच बजते ही दफ्तर छोड़ देते और सीधे घर आकर माया के साथ चाय पीते। हमेशा से महेश मेहता ऐसे नहीं थे। सवेरे आठ बजे से रात नौ बजे तक दफ्तर के काम में मशगूल रहा करते थे। ममता को छोड़कर जब उन्होंने मधु से

शादी की थी, तब मधु की मां जिंदा थी। शादी के बाद महेश मेहता घर-जमाई बनकर रह गए थे। उनकी पत्नी मधु के कोई भाई-बहन नहीं था। मधु के घर में यह कोई नई बात नहीं थी। मधु के बाप भी करीब-करीब इसी तरह घर के मालिक बने थे। हालांकि महेश मेहता और मधु के बाप में एक खास फर्क जरूर था। जहां वक्त के साथ न दौड़ सकने के कारण मधु के बाप गुजर गए थे और मधु की मां मालकिन बन गई थी, वहां मधु के गुजर जाने के बाद, महेश मेहता वैसे ही स्मार्ट, हैंडसम और चुस्त थे। महेश मेहता को पढ़ाई-लिखाई और नौकरी के चक्करों में काफी दिनों तक बाहर रहना पड़ा था। बड़े दिनों बाद उन्हें मधु के चाल-चलन के बारे में पता चला था। क्लब जाना, डांस करना, ड्रिंक करना, ताश खेलना मधु की जिंदगी का हिस्सा था। उधर महेश मेहता के पास मधु के लिए वक्त नहीं था और तब तक मधु को भी उनकी कोई खास जरूरत नहीं रह गई थी। महेश मेहता में काम करने की लग्न थी और मधु के अंदर दूसरे मर्द से दोस्ती करने की भूख।

मधु की मौत के बाद, इतने बड़े बंगले में महेश मेहता बस अकेले ही मंडराया करते। उन दिनों ममता की याद में डूबे रहने पर, जब वह अपने वक्त का हिसाब करते तो उन्हें लगता, एक खूबसूरत इमामबाड़े में, कीमती फर्नीचर, कालीन, एअर कंडीशनर और फैंसी पर्दों के बीच उन्हें जिंदगी ने दफन कर दिया था। जब तक दफ्तर में रहते, उनका जी लगा रहता, लेकिन घर तो उन्हें काटने को दौड़ता। जहां एक तरफ मधु की हरकतें, उसके चाल-चलन से दुखी रहते वह, वहां दूसरी तरफ बार-बार उन्हें ममता के प्रति किए गए अपने अन्याय का भी अहसास हुआ करता। इसी-लिए तो उस दिन जब ममता, माया को लेकर उनके पास आई थी, तब सबसे पहले जिस ख्याल ने उनकी जहनियत को छेड़ा था, वह था, अकेले-पन की ऊब से निकला हुआ, बेजार जिंदगी से जन्मा एक अहसास, ममता को फिर से पा लेने का। यही ख्वाहिश तो बार-बार उनकी रगों को छेड़ा करती।

लेकिन ममता, गरीबी, जुल्म, हिकारत और अपमान के अंधेरों में भटकते हुए भी, उस मिट्टी से बनी हुई औरत थी,

मुकाम पर, उस आदमी के पास लौट सकने वाली नहीं थी, जिसने उसे धोखा दिया था। वह यह भी जानती थी, दो मुर्दा जिंदगी, जिंदादिल नहीं बन सकती थीं। उधर महेश मेहता का मन बार-बार ममता के लिए तड़पता। वह ममता को कैसे बताते जो अपनी बेशुमार दौलत और बे-हिसाब प्रभुत्व से न जाने कितनी औरतें खरीद चुके थे। लेकिन हर औरत के साथ सोने पर उन्होंने बस ममता को ही तलाश किया था। ममता भला कहां मिलती उन्हें ! हां, उसकी बेटी माया उनके घर में आ गई थी। माया का हंसना, माया का बोलना, उसके चेहरे की शिकन, उसके अंदाज, उसकी अदाएं ममता की तरह थीं : न जाने उन्हें कितनी बार लगता, उम्र का फासला तोड़कर ममता अपने शुरू के दिनों में लौट आई थी।

ऐसे दिनों में, एक दिन महेश मेहता अपनी बैठक में माया के साथ अध-लेटे हुए बैठे थे। माया उनकी जांघ पर सिर रखे हुए थी। वह माया के लहराते हुए बालों से खेल रहे थे। लैंप से धीमी-धीमी रोशनी आ रही थी और ग्रामोफोन पर एक धुन बज रही थी। धीरे-धीरे बालों से खेलते-खेलते महेश मेहता शोख आवाज और अदाओं के साथ, माया के गुलाबी गालों पर हल्की-हल्की प्यार की चपत लगाते हुए गुनगुना रहे थे। गुनगुनाते हुए जब उनकी आवाज तेज होने लगी, तब माया भी उठकर बैठ गई और उनके साथ तरन्नुम मिलाकर गाने लगी—

वन एण्ड टू, आई लव यू
लेट्स प्ले द गेम आफ लव
थ्री एण्ड फोर एंड वांट यू मोर,
लेट्स प्ले द गेम आफ लव
फाइव एण्ड सिक्स एण्ड किस मी क्विक
सेवन, ऐट एण्ड नाइन
टिल द एण्ड आफ टाइम,
लेट्स प्ले द गेम आफ लव।

गाना खत्म होने के पहले महेश मेहता खड़े हो चुके थे और अपनी उंगली गोल-गोल नचाते हुए बार-बार गाना गा रहे थे। वह बीच-बीच में

घूमते जा रहे थे, चक्कर लगा रहे थे और हंसते जा रहे थे। गाना खत्म होने पर माया दौड़कर उनसे लिपट गई थी। महेश मेहता ने माया को उठाकर ऊपर तक उछाल दिया और फिर हाथ पकड़कर उसे गोल चक्करों में घुमाने लगे थे। माया उनके हाथों को मजबूती से पकड़े हुए घूम रही थी, चक्कर लगा रही थी'''उसके पैर जमीन से ऊपर थे। महेश मेहता ने जैसे ही उसे जमीन पर रोका, वह उचककर दोनों हाथ उनके गले में डालकर झूल गई। हंसी में खिलखिलाते हुए महेश मेहता के गालों को वह बार-बार चूमने लगी'''फाइव एण्ड सिक्स किस मी क्विक गाते हुए।

एक नशीला अंदाज, उम्र की कगार को लांघकर महेश मेहता के अंदर जागने लगा था। कितने-कितने दिनों बाद, उनके जीवन में वह घड़ी आई थी, जब वह हंस रहे थे, गा रहे थे, बच्चों की तरह खेल रहे थे।

हर दिन महेश मेहता के लिए खुशियों की बहार लेकर आ जाता। उनकी मुर्दा जिंदगी में माया ने जान डाल दी थी। उसकी मासूमियत, हसीन अदाओं में डूबी हुई ख्वाब की तरह खूबसूरत उसकी शख्सियत, बार-बार हवा के झोंको की तरह लहराती हुई उनसे लिपट जाती।

माया के साथ हसते-खेलते दिन गुजरते चले जा रहे थे, तभी एक दिन महेश मेहता, माया को सुलाकर खुद सोने जा रहे थे तो बूढ़े नौकर रामू ने माधव के आने की बात कही थी। माधव का नाम, रामू काका के मुंह से माधव का नाम, महेश मेहता के दिलो-दिमाग पर बिजली बनकर गिरा था। उन्हें लगा था, पैर के अंगूठे से सिर के बालों तक कोई आग की लहर पल-भर में उन्हें जला गई थी। ऐसा नहीं था, जो उन्हें माधव के आने की उम्मीद नहीं थी या फिर वह समझते थे, माया के यहां रहने को माधव कभी नहीं जानेगा या फिर जान लेने के बाद, आएगा नहीं। बस इस बात को वह इन दिनों भूले हुए थे। असल में वह खुश थे, संतुष्ट थे, अपने चारों तरफ का माहौल जो माया से जुड़ा हुआ था, उन्हें लग रहा था, उनकी पकड़ में आने लगा था। तभी किसी भयावह ख्वाब की तरह एक दिन माधव आकर खड़ा हो गया था। किसी अनजाने डर की कंप-कंपी उनके दिमाग के कोने-कोने में फैल गई। एक गंदी मरोड़ हुई उनके पेट में, जिसके साथ ही तालुओं से उभरकर एक कसैलापन उनके मुंह में

भर गया। एक पल खामोश रहने के बाद उन्होंने बूढ़े नौकर से माधव को नीचे बैठाने के लिए कह दिया था और खुद ठंडी सांस भरकर गाऊन पहनने के लिए, अंदर की तरफ चले गए थे।

महेश मेहता के आने पर माधव उठकर खड़ा नहीं हुआ और न ही उसने कुछ कहने की कोशिश की। बस ड्राइंगरूम की हर चीज को तौलता रहा, जांचता-परखता रहा, जैसे कोई दरिंदा अपने शिकार को तौल रहा था।

"कैसे हो माधव, ममता तो ठीक है ना?" महेश मेहता को ही पहल करनी पड़ी।

माधव की तंद्रा में विघ्न पड़ा और एक जहरीले नाग की तरह वह उबल पड़ा, "मुझे मालूम था हमें देखकर आपको ममता का ही ख्याल आएगा।"

"क्या?"

"ममता···ममता···ममता नाम की एक औरत मेरी बीवी है, जिसकी आपसे आशनाई है। उस बेवफा औरत से तो मैं बाद में निपटूंगा," धव हांफ रहा था, "पहले यह बताइए माया कहां है?"

महेश मेहता को इसी चीज का डर था। माधव के नाम से अभी कुछ देर पहले जो कंपकंपी हुई थी, पेट में जो मरोड़ पैदा हुई थी, वह इसी डर से थी। इतने दिनों के भीतर माया उनसे जुड़ चुकी थी, उनके दिल से, उनके दिमाग से, उनके हिस्से-हिस्से से जुड़ चुकी थी। पहले तो उन्हें ख्याल ही नहीं था, लेकिन धीरे-धीरे एक खौफ उनके अंदर घर करता जा रहा था कि अगर किसी दिन माधव सामने आकर खड़ा हो गया और उसने माया को मांगा तो उनके पास क्या जवाब होगा? और आज भूले हुए ख्यालों की तह से उठकर माधव आ ही गया था। उन्हें सामना तो करना ही था, यह सोचकर दूसरे ही क्षण उन्होंने अपने को संभाल लिया, "माया, क्या हुआ माया को?"

"क्या हुआ माया को?" माधव ने चिढ़ाते हुए कहा, "मजाक समझ रखा है, किसी की बेटी को छुपाकर रख लेना इतना आसान नहीं है।"

"माधव! चले जाओ यहां से···तुम अपने को बाप कहते हो···हैवान

हो तुम'''इंसानियत के नाम पर कलंक हो तुम !"

"हूं तो ! आपको मुझसे रिश्ता बनाना है क्या ? मैं तो अपनी बेटी लेने आया हूं।"

"न दूं तो ?"

"तो'''" माधव गुर्राया, "तो मैं पुलिस के पास जाऊंगा।"

"पुलिस ? पुलिस की धमकी और मुझे ? मेरा ओहदा जानते हो ?"

"जानता हूं'''जानता हूं, लेकिन उसका जवाब है मेरे पास'''अख-बार वालों से कह कर आपके कारनामों का चिट्ठा छाप दूंगा'''तब'''तब क्या करेंगे आप ?"

महेश मेहता की समझ में आने लगा था। वह जरा आगे बढ़े और उन्होंने माधव के कंधे पर अपना हाथ रख दिया, "माधव ! बोलो, कितने पैसे चाहिए तुम्हें !"

"पैसे'''मुझे पैसे नहीं'''अपनी बेटी चाहिए !"

"मत लो अपनी जुबान से यह पवित्र नाम ! अगर उसे अपनी बेटी मानते हो, तो यह भी जानते होगे, किस तरह वह रहेगी यहां।"

"हर मोह की कीमत होती है, अगर आपको उससे मोह हो गया है," माधव हंसने लगा, "तो ठीक है, माया यहीं रहेगी।"

"कितने पैसे दूं ?"

"दस हजार?"

"फिर तो नहीं आओगे यहां ?"

"अभी नहीं !"

"फिर कब ?"

"अगर जिन्दा रहा तो'''" माधव ने बदमाशी से मुस्कराते हुए कहा।

"लेकिन यहां इस घर में, वादा करो, कभी नहीं आओगे।"

"यहां नहीं तो फिर कहां ?"

"कहीं नहीं'''सिर्फ टेलीफोन'''वह भी दस महीने बाद।"

"मुझे मंजूर है !"

"तो अभी जाओ, कल दफ्तर में आ जाना !"

"लेकिन कुछ पैसे अभी चाहिए मुझे।"

महेश मेहता ने गाऊन की जेब से एक हजार रुपये निकाले जिसे झपटकर माधव ने ले लिया और नोट गिनते हुए, लड़खड़ाता हुआ बाहर चला गया।

महेश मेहता का मन बड़ा उदास था। रात-भर वह सो नहीं सके थे। न जाने कितनी दूर तक उनका पीछा करती रही थी वह काली छाया जो इधर कई बार से, उनके अंदर से उभर कर सामने आ जाती। उसे पकड़ कर, उसे छूकर, उसे जानने की तमाम कोशिश कर डाली थी उन्होंने, लेकिन हर बार उनकी पकड़ से छूटकर बस अंधेरे में वह खो जाती। कई बार ऐसा होता जब रात के वक्त माया मुस्कराती हुई, गुड नाइट कहकर बेडरूम में सो जाने के लिए चली जाती तो अपने बंगले के बागीचे, बरामदे से लेकर कमरों तक वह घूमते रहते। कई बार, कई-कई दिनों तक उन्हें नींद नहीं आती। जब कभी आराम कुर्सी पर लेटकर उनकी आंख जरा देर के लिए लग जाती तो वही डरावनी छाया, उनके इर्द-गिर्द मंडराती और कभी उन्हें लगता वह छाया, एक-दो प्रतिरूप में घिरती हुई, छुपती हुई, गोल घेरों में माया की तरफ भद्दे इशारे करते हुए आगे की तरफ बढ़ती रहा करती।

माया को स्कूल छोड़कर उस दिन वह घर लौट आए थे। उनकी तबियत कुछ ठीक नही थी। एक घबराहट, एक बेचैनी उनके अंदर घट-घटकर बढ़ रही थी। गाड़ी खड़ी करने के बाद, वैसे ही वह सीट पर बैठे रहे। फिर थके हाथों से गाड़ी का दरवाजा खोलकर वह बाहर निकले और धीरे-धीरे घर के पिछले हिस्से की तरफ चल दिए। कुछ ही दूर चले होंगे महेश मेहता, तभी रामू दौड़ता हुआ उनके करीब आया। "मालिक !" रामू की आवाज में डर था, बेचैनी थी। बूढ़े नौकर की आवाज जैसे पैनी काट बना गई थी उनके अंदर! उन्होंने बिना कुछ कहे, धीरे-धीरे बूढ़े नौकर की तरफ मुड़कर देखा।

"मालिक ! माधव मर गया···सुना आपने, माधव का खून हो गया।"

"क्या ?"

"हां मालिक ! ममता ने उसका खून कर दिया !"

"ममता ने खून कर दिया?"

"हां मालिक !"

"कब ? कैसे ? कहां ?"

"कल रात में किसी समय उसने माधव के ऊपर पत्थर की सिल पटक दी थी।"

"माधव को तो जाना ही था एक दिन···फिर ममता ने यह सब क्यों किया ?" अपने आपसे कहते हुए महेश मेहता गाड़ी की तरफ बढ़ने लगे। गाड़ी में बैठकर उन्होंने बूढे नौकर रामू को बुलाकर कहा, "माया से कुछ ना कहना काका ?"

"नहीं मालिक ! कभी नहीं !!"

महेश मेहता जब तक ममता के घर पहुंचे, माधव की लाश पोस्ट-मार्टम के लिए जा चुकी थी। ममता को पुलिस ले गई थी।

पुलिस स्टेशन में नामी, रुतबेदार और शोहरतमंद महेश मेहता आए थे, यह एक बड़ी बात थी। चारों तरफ अदब और हुजूरत का माहौल था! तभी तो जब ममता ने महेश मेहता से मिलने से इंकार कर दिया, तो पुलिस स्टेशन के दरोगा, सिपाही, कान्स्टेबल, मुंशी, सब के सब ममता के पीछे लग लिए थे। समझा-बुझाकर उसे महेश मेहता से मिलने के लिए राजी कर लिया था उन्होंने।

ममता असल में दबे पांव महेश मेहता से मिलने आई थी। उस समय उसके अंदर न तो मौन का सन्नाटा था और न ही जिंदगी की उम्मीद। उस वक्त उसे न तो अपनी नियति से कोई शिकायत थी और न ही महेश मेहता से कोई गिला। वह तो, उस वक्त, जिंदगी की तमाम-तमाम हदों को पार कर किसी ऐसे मुकाम पर पहुंच चुकी थी, जहां उसके लिए किसी चीज को पा लेना या खो देना, बेमाने था। जैसे कोई हार मान ले, सब कुछ छोड़कर जी सकने या मर जाने की तमन्ना तक से नाता तोड़ ले, जैसे धड़कनों के अंदर सालती हुई कोई पीड़ा दूर-दूर तक बंद अंधेरों में छटपटाती हुई, वापस लौटकर वहीं आ जाए जहां से वह उठी थी, जहां उसने करवट बदली थी। ममता का महेश मेहता से न मिलने का फैसला ऐसी ही मनःस्थिति से उपजा था। वह तब किसी से क्या मांगती, जब धीरे--

"लेकिन कुछ पैसे अभी चाहिए मुझे।"

महेश मेहता ने गाऊन की जेब से एक हजार रुपये निकाले जिसे झपटकर माधव ने ले लिया और नोट गिनते हुए, लड़खड़ाता हुआ बाहर चला गया।

महेश मेहता का मन बड़ा उदास था। रात-भर वह सो नहीं सके थे। न जाने कितनी दूर तक उनका पीछा करती रही थी वह काली छाया जो इधर कई बार से, उनके अंदर से उभर कर सामने आ जाती। उसे पकड़ कर, उसे छूकर, उसे जानने की तमाम कोशिश कर डाली थी उन्होंने, लेकिन हर बार उनकी पकड़ से छूटकर बस अंधेरे में वह खो जाती। कई बार ऐसा होता जब रात के वक्त माया मुस्कराती हुई, गुड नाइट कहकर बेडरूम में सो जाने के लिए चली जाती तो अपने बंगले के बागीचे, बरामदे से लेकर कमरों तक वह घूमते रहते। कई बार, कई-कई दिनों तक उन्हें नींद नहीं आती। जब कभी आराम कुर्सी पर लेटकर उनकी आंख जरा देर के लिए लग जाती तो वही डरावनी छाया, उनके इर्द-गिर्द मंडराती और कभी उन्हें लगता वह छाया, एक-दो प्रतिरूप में घिरती हुई, छुपती हुई, गोल घेरों में माया की तरफ भद्दे इशारे करते हुए आगे की तरफ बढ़ती रहा करती।

माया को स्कूल छोड़कर उस दिन वह घर लौट आए थे। उनकी तबियत कुछ ठीक नही थी। एक घबराहट, एक बेचैनी उनके अंदर घट-घटकर बढ़ रही थी। गाड़ी खड़ी करने के बाद, वैसे ही वह सीट पर बैठे रहे। फिर थके हाथों से गाड़ी का दरवाजा खोलकर वह बाहर निकले और धीरे-धीरे घर के पिछले हिस्से की तरफ चल दिए। कुछ ही दूर चले होंगे महेश मेहता, तभी रामू दौड़ता हुआ उनके करीब आया। "मालिक !" रामू की आवाज में डर था, बेचैनी थी। बूढ़े नौकर की आवाज जैसे पैनी काट बना गई थी उनके अंदर! उन्होंने बिना कुछ कहे, धीरे-धीरे बूढ़े नौकर की तरफ मुड़कर देखा।

"मालिक ! माधव मर गया···सुना आपने, माधव का खून हो गया।"

"क्या ?"

"हां मालिक ! ममता ने उसका खून कर दिया !"

"ममता ने खून कर दिया?"

"हां मालिक !"

"कब ? कैसे ? कहां ?"

"कल रात में किसी समय उसने माधव के ऊपर पत्थर की सिल पटक दी थी।"

"माधव को तो जाना ही था एक दिन…फिर ममता ने यह सब क्यों किया?" अपने आपसे कहते हुए महेश मेहता गाड़ी की तरफ बढ़ने लगे। गाड़ी में बैठकर उन्होंने बूढ़े नौकर रामू को बुलाकर कहा, "माया से कुछ ना कहना काका?"

"नहीं मालिक ! कभी नहीं !!"

महेश मेहता जब तक ममता के घर पहुंचे, माधव की लाश पोस्ट-मार्टम के लिए जा चुकी थी। ममता को पुलिस ले गई थी।

पुलिस स्टेशन में नामी, रुतबेदार और ओहदेदार महेश मेहता आए थे, यह एक बड़ी बात थी। चारों तरफ अदब और हुजूरत का माहौल था! तभी तो जब ममता ने महेश मेहता से मिलने से इंकार कर दिया, तो पुलिस स्टेशन के दरोगा, सिपाही, कान्स्टेबल, मुंशी, सब के सब ममता के पीछे लग लिए थे। समझा-बुझाकर उसे महेश मेहता से मिलने के लिए राजी कर लिया था उन्होंने।

ममता असल में दबे पांव महेश मेहता से मिलने आई थी। उस समय उसके अंदर न तो मौत का सन्नाटा था और न ही जिंदगी की उम्मीद। उस वक्त उसे न तो अपनी नियति में कोई शिकायत थी और न ही महेश मेहता से कोई गिला। वह तो, उस वक्त, जिंदगी की तमाम-तमाम हदों को पार कर किसी ऐसे मुकाम पर पहुंच चुकी थी, जहां उसके लिए किसी चीज को पा लेना या खो देना, बेमाने था। जैसे कोई हार मान ले, सब कुछ छोड़कर जी सकने या मर जाने की तमन्ना तक से नाता तोड़ ले, जैसे धड़कनों के अंदर सालती हुई कोई पीड़ा दूर-दूर तक बंद अंधेरों में छटपटाती हुई, वापस लौटकर वहीं आ जाए जहां से वह उठी थी, जहां उसने करवट बदली थी। ममता का महेश मेहता से न मिलने का फैसला ऐसी ही मन:स्थिति से उपजा था। वह तब किसी से क्या मांगती, जब धीरे-

धीरे उसने खुद सब कुछ खो दिया था। एक था उसका अतीत, एक था उसका वर्तमान और आने वाले वक्त के ऊपर उसका भरोसा उठ चुका था। अतीत ने हमेशा उसके जजबातों को पकड़कर तोड़ डाला था। पहले उससे शिवा को छीना, फिर माधव को। वह उस माधव के छिन जाने का अफसोस नहीं कर रही थी जिसको उसने मार डाला था, वह तो रोती रही थी उस माधव के छिन जाने पर जिसने उसे मर जाने से बचाया था, कितने दिनों पहले !

लेकिन महेश मेहता से फिर भी वह मिलने चली आई थी महज इस-लिए, वह चाहती थी उसकी बेटी माया यह सब न जाने और यही एक बात तब उसे कहनी थी महेश मेहता से।

कुछ पल के लिए वह दूर चली गई थी, बहुत दूर ! उन जेल की सलाखों से, महेश मेहता से, उस सारे माहौल से वह दूर चली गई थी। ···उसने पाया था अपने आपको चंद घंटों पहले माधव की लाश के बगल में। वह पत्थर की सिल जो उसने माधव के सिर पर पटक दी थी, लुढ़क-कर थोड़ा नीचे आ गई थी और उसके ऊपर खून की पतली धार बहने ...। थी। हाथ में जब तक पत्थर की सिल थी, वह एक ममता थी और ह थ से निकलकर जब तक वह सिल माधव के सिर के ऊपर आकर गिरी थी, एक दूसरी ममता जैसे पहली ममता की छाया से निकलकर खड़ी हो गई थी। वक्त का वह लमहा, उसे न जाने कितने टुकड़ों में बांट गया था। जितनी तेजी के साथ उसके हाथ से सिल छूटकर गिरी थी, उतनी ही तेजी के साथ उसके बदन के अंदर, जांघों से लेकर माथे तक एक मुर्दा ठंडक व्याप्त हो गई थी। उसका रोम-रोम कांप उठा था। वह मुर्दा ठंडक उस सिल से कहीं ज्यादा वजनदार थी और फिर यह तो आज छूटकर ऊपर चली गई थी, इसने तो आज उसे न जाने कितनी यातना से मुक्ति दिलाई थी ! लेकिन उस मुर्दा ठंडक का आयतन, आकार और वजन कितने-कितने दिनों उसके पैरों से चिपटकर, लिपटा हुआ था, वह खुद उसमें समाती जा रही थी। एक विस्फोट हुआ था, एक धमाका हुआ था, जिसने एक ही झटके में उसे मुक्त करा दिया और उसके साथ दिमाग की नसों को झकझोर कर रख दिया था। एक अजीब-सी स्थिति थी। उसके सामने

उसका पति, उसकी बच्ची का बाप माधव मरा हुआ पड़ा था···जिसकी मौत खुद उसके हाथों हुई थी। ममता चारपाई के ऊपरी हिस्से से घूमकर पैंताने की तरफ आ गई। उसने बेजान, बेबस, बेजार माधव को देखा। ऊपर का हिस्सा उससे देखा नहीं गया। धीरे-धीरे उसकी नजर नीचे की तरफ माधव के पैर पर ठहर गई। वह कुछ देर माधव के पैर देखती रही और फिर वहीं जमीन पर बैठ गई। थोड़ा झुकते ही, उसके दोनों हाथ माधव के पैर पर थे और उसका माथा पैर के तल्लों पर !···

"ममता ! यह सब क्यों किया तुमने ?" महेश मेहता की फुसफुसाहट में दर्द था। वह शायद—यह छह शब्द उनके अंदर की कसक में डूब-डूबकर निकले थे।

ममता जब आई थी, महेश मेहता दूसरी तरफ देख रहे थे। तभी वह अपनी दुनिया के अंधेरों मे चली गई थी···खो गई थी। उसका मन उदास हो गया था, उसकी आखें भर आई थी, एक घुनघुनाता हुआ सन्नाटा उसके और महेश मेहता के बीच जगह बना चुका था। तभी तो ममता को देखकर भी महेश मेहता ने पहले कुछ कहा नहीं था। फिर शून्य मे देखती हुई उसकी नजर को पकडकर ही उन्होंने खुद तक को न सुनाई देने वाली आवाज मे ममता से सवाल किया था।

"ममता ! यह सब क्यो किया तुमने ?" महेश मेहता के यह शब्द ममता को दूर बडी दूर से सुनाई दिए थे और इन शब्दों की फुसफुसाहट मे बधकर वह अंधी ढलानों से लौटकर वापस आ गई थी। उसने देखा महेश मेहता को, उस माहौल को, जिससे वह इन चद लमहो के लिए दूर चली गई थी, और तभी उसे अपनी गीली आंखो का ख्याल आया था। ममता ने अपनी धोती के किनारे मे आंखें पोछ डाली और तब महेश मेहता को देखते हुए उसने कहा था, "यह तुम पूछ रहे हो, शिवा !"

"हां, इसलिए कि मैं तो जानता था, वह तुम्हे मार डालेगा लेकिन तुम···"

"मैं शायद ऐसा कभी नही करती···"

"बोलो ममता ! कह डालने से जी हल्का हो जाएगा।"

"एक बार फिर ममता महेश मेहता से अलग होने लगी। उसने अपना

चेहरा घुमा लिया और निगाहें दीवार पर गड़ा दीं, फिर जैसे अपने आप से कहने लगी थी, "कल शाम माधव जरा जल्दी आ गया था और उसने शराब नहीं पी थी बल्कि बोतल लेकर आया था। काफी और सामान था जिसे उसने मुझे बुलाकर दिया था। कितने सालों के बाद, वह मेरे लिए कपड़े लाया था···फूलों के गहने लाया था"···कहते···कहते ममता सुबकने लगी और कुछ क्षणों के बाद चुप होकर खुद-ब-खुद कहने लगी, "उसने जबरदस्ती करके मुझे नए कपड़े पहनाए थे, बड़ा मान किया था मेरा, खुद मेरे जूड़े में फूल लगाए थे। मिठाइयां थीं, फल थे, राशन का पूरा सामान उठा लाया था वह। क्या-क्या सामान लाया था वह, जैसे फिर से नई गृहस्थी बना रहा था। चादर. तकिया, तौलिया, गिलाफ, पर्दे, एक दर्जन से ऊपर साड़ी-धोती, ब्लाउज, पेटीकोट, पाऊडर, लिपस्टिक, क्रीम वह सब कुछ था जिसे देखने को हम तरस जाते थे। पहले तो मैंने वह सब छूने तक से मना कर दिया था। मैंने उससे कहा था, जुआ खेला होगा उसने और जीत के पैसे से वह सब लाया होगा, लेकिन नहीं माना उसने, मेरी कसम खाई, ईश्वर की कसम खाई, तब भी मैंने विश्वास नहीं किया, लेकिन जब उसने शराब की कसम खाई और हर तरह से मुझे विश्वास दिलाया कि उसने न तो कहीं चोरी की थी और न ही जुआ खेला था, तब मैं मान गई थी। मैंने बड़े मन से शृंगार किया था···उसने मुझसे खाना बनाने को कहा और मेरी इजाजत लेकर शराब पीने लगा। शराब पीने के पहले मिठाई और फल का प्रसाद चढ़ाया था, ठाकुर जी को! उसने खुद मुझे मिठाई खिलाई और मैंने सिर पर आंचल रखकर उसके पैर छुए थे···सारा बैर भूलकर उसने सच्चे मन से मुझे आशीर्वाद दिया था। एक नया संसार बसा रही थी मैं··· सपनों की नई दुनिया में खो जाने लगी थी। हम दोनों ने मिलकर घर सजाया था···वह पर्दे लगा रहा था···मैं चादर और तकिया। रेडियो लाया था वह···रेडियो पर गाना बज रहा था···अगर बत्ती जलाई थी। सब कुछ सजाकर नये कपड़े पहनकर नजर उतारी थी मैंने···" ममता फिर रोने लगी···फूट-फूटकर रोने लगी। महेश मेहता ने उसे रोका नहीं, उसे रोने दिया। बस चुपचाप देखते रहे। और तभी रोते हुए ममता कहने लगी, "उसने मेरा माथा चूमा था, मेरा लाड़ किया था। मेरे सिर पर हाथ फेरा

था, मुझे दिलासा दी थी। मैं दुआ दे रही थी ऊपर वाले को, ईश्वर से, भगवान से मैं कह रही थी जो कितने दिनों बाद मेरे दिन फिरने लगे थे। बड़े-बड़े दिनों बाद भले ही तरसा-तरसाकर कहीं से बहता हुआ वक्त का वह टुकड़ा आ गया था, जो कितना हसीन था, कितना प्यारा था। दूर-दूर तक जलती हुई रेत के बवंडर की घुमनी में फसे हुए तड़पते-तरसते मन को, प्यासे मन को जैसे प्यास बुझाने का मौका मिल जाए। वह चार-पांच घंटे न जाने कब गुजर गए थे और वह खाना खाकर बिस्तर पर लेट गया था। मैं भी सारा काम खत्म करके उसी के पास आ गई थी। मेरी मति मारी गई थी। मुझे लालच होने लगा था। इसी सुख··· इसने से मुख के लिए तो मैं हमेशा बेजार रहा करती थी। खुद अकेले इसे भोग पाऊंगी भला···यह मैं सोचने लगी थी। मुझे माया की याद आने लगी थी। मुझे लग रहा था, अगर यह सब सच था तो मैं अपनी बेटी को वापस ले आऊंगी। मां का मन मेरा, इस जरा से सुख में, बेटी को फिर से पा लेने का, अपने पास, अपने करीब रख सकने का अहसास करवट लेने लगा था। मैंने उसके सीने पर अपना सिर रखकर माया को वापस ले आने की बात कही थी···" ममता का चेहरा सख्त होता जा रहा था। उसकी आंखों की नमी जा चुकी थी और उसकी जगह धीरे-धीरे जैसे एक आग जागने लगी थी। माथे पर बल पड़ रहे थे और हाथ की उंगलियां कसने लगी थीं, बदन सीधा हो गया था, गर्दन उठाकर वह ऊपर छत की तरफ देखने लगी थी।

"शिवा ! उसने तुमसे दस हजार रुपये लिए थे ना ?"

"हां !" महेश मेहता ने धीरे से कहा।

"तो तुमने माया को खरीद लिया था।"

"क्या कह रही हो तुम ममता !"

"यह बात उसने मुझे कल बताई थी···उस वक्त बताई थी जब मैं उसके सीने पर सिर रखकर माया को वापस ले आने के सपने बनाने लगी थी। मेरी बेटी को उस तरह नहीं तो इस तरह बेच डाला था। यही तो चाहता था वह ना ! एक धमाका हुआ था, जैसे अनेक-अनेक छोटे-बड़े बारूद के ढेर मेरे अंदर फूटे थे और जिनके साथ एक बार में सब कुछ नष्ट हो गया था। असल में उसने यह सौदा अगर किसी और के साथ कि-

होता तो शायद मुझे ऐसा न लगता, मेरे ऊपर खून सवार न होता ! मैं रोई नहीं···मैंने उससे कुछ नहीं कहा, मुझे घिन आने लगी थी। मैं चुपचाप उठकर अंदर चली गई थी। मैंने वह कपड़े उतारे···फूलों का गहना नोचकर फेंक दिया और फिर से पुरानी धोती पहन ली···सारा सामान जो वह लाया था···मैंने जमा किया और फिर उसके पास पहुंची···लेकिन तब तक वह सो चुका था। नये कपड़े पहने हुए था वह, उसकी शक्ल, उसका रूप बदला हुआ था, नया बिस्तर था और उस पर आराम से वह सो रहा था। उसके चेहरे पर संतोष था, सुख था, अपनी बेटी का सौदा करने का सुख ! उसका वह सुख और वह सब देखकर मेरे अंदर नफरत का एक सैलाब उठा था और फिर मैंने···"

"सच में ममता ! तुम्हें देखकर ऐसा लगता है जैसे पैसे और पाशविकता की इस दुनिया में अभी सब कुछ चुक नहीं गया है। लेकिन फिर भी तुमने जीवन को कितना कठिन नहीं बना डाला है ?"

"दुनिया को मैं नहीं जानती शिवा ! मैं खुद तो चुक ही गई हूं। मैंने तो कुछ भी कठिन नहीं बनाया, सब कुछ कठिन बनता गया न ?"

"लेकिन ममता ! तुम घबड़ाना नहीं। मैं तुम्हारी जमानत का इंतजाम कर लूंगा।"

"किसलिए ?" ममता के चेहरे पर फीकी हंसी थी।

"तुम यहीं रहोगी क्या ?"

"और कहा जाऊंगी मैं ?"

"अपने घर और कहां ?"

"कौन-सा घर···मेरा घर कोई है क्या ?"

"मेरे दरवाजे···"

"नहीं शिवा ! अपने पति का खून करने के बाद कोई औरत कहीं और जा सकती है ?"

"जा सकती है···कहीं भी जा सकती है।"

"कहीं नहीं···कभी नहीं और तुम भी अब यहां न आना।"

"क्यों ?"

"माया के लिए और क्यों ?"

"हां, माया के लिए, लेकिन···"

"उसे कुछ न कहना···उसे कुछ न बताना" ममता फूट-फूटकर रोने लगी।

चार

ममता के चले जाने के बाद अब महेश मेहता के जीवन मे कुछ भी नही बचा था। टूटने-टूटने उम्मीद का वह आखिरी कतरा जो ममता के साथ जुड़ा था, खत्म हो चुका था। कैसा मायावी खेल जिन्दगी उनके साथ खेल रही थी ! महेश मेहता सोचते-सोचते उलझन के दायरो मे घूमने लगते। माया उम्र के सैलाब मे उन्हे बहाकर लिए जा रही थी। उनकी और माया की उम्र में 25 साल का फर्क था। वक्त की दौड मे वह माया का साथ कहां तक दे सकेंगे, इसकी भी चिन्ता थी उन्हे। न जाने क्या होता जा रहा था। माया जब भी उनके करीब आती, उनसे चिपट जाती, तो उनके खून का दौरा तेज हो जाता। ममता के हमेशा-हमेशा के लिए चले जाने के बाद माया उसी रूप मे, उसी उम्र मे, जैसे सिमटकर आ गई थी उनके सामने, उनके पास। लेकिन वह छाया, ममता का वह रूप, वह प्रतिबिम्ब कितना मोहक था, कितना नशीला था ! जहां एक तरफ उन्हे डर लगता, वही दूसरी तरफ उनके अदर यह अहसास करवटें बदलने लगा था कि माया के बिना जिंदा रहना उनके लिए कितना मुश्किल था।

उस दिन दफ्तर से लौटने मे जरा देर हो गई थी। माया वही दीवान पर लेटी हुई थी। उसके चेहरे पर एक मस्ती-भरी, लुभावनी मुस्कराहट थी। उसने एक बार करवट बदली और फिर अंगडाई ली, एक ऐसी अगड़ाई जिसने उसके बदन के जोड, कटाव, उभार मोहक बना दिए थे। भरपूर जवानी जैसे उसके कपडो में समा नही पा रही थी और वह बेचैन-सी, उनीदी अंगड़ाइयो से फूटकर निकलती हुई अदाओ से उस कमरे के पूरे माहौल में खुमार के हल्के-हल्के बुलबुले जगा रही थी। माया जिस दीवान पर लेटी

थी, वहां से कुछ दूर पर महेश मेहता खड़े थे। वह दीवान से अलग हटकर मैंटलपीस के पास आ गए। उन्होंने मैंटलपीस पर अपना पाईप रख दिया और वहीं खड़े होकर माया को देखते रहे। लेकिन उनके अंदर चल रही, रूहानी और जिस्मानी कशमकश ने उन्हें ज्यादा देर तक खड़ा नहीं रहने दिया और वह माथा पकड़ कर वहीं जमीन पर बैठ गए। उन्हें लग रहा था उम्र की उस डगर पर, उनके लिए, माया के साथ, जोश और मस्ती के सैलाब, तरंगों से बंधे रहना, सवेरे से रात तक किसी जागरूक पूर्ण रूप से जागरूक हस्ती का हिस्सेदार बने रहना, कितना मुश्किल होता जा रहा था।

माया उन्हें एक पल को भी छोड़ने को तैयार नहीं थी। वह तो महेश मेहता के इर्द-गिर्द एक बेल की तरह लिपटती चली गई थी। उसके लिए दुनिया के सारे मर्द माधव थे या माधव के वह लफंगे दोस्त जिनकी भयानक यादें, माधव की लाल-लाल आंखों के खौफ के ऊपर चढ़कर किसी डरावने मंजर का हिस्सा बनकर, उसके अंदर करवटें बदलती रहती। फिर माधव ने कौन उसे ठहरने दिया था। तेरह साल की उम्र में, स्कूल के एक ...ने बेरहमी से, उसके साथ बलात्कार किया था। इसकी चर्चा कुछ ऐसी चली, काफी दिनों तक उसका स्कूल जाना बंद हो गया। उधर जैसे बदनसीबी उसका इंतजार कर रही थी। कई महीनों बाद जब उसने स्कूल जाना शुरू किया, तभी एक पिकनिक पार्टी में कालेज के लड़कों ने कोल्ड ड्रिंक में नशीली गोलियां मिलाकर, उसकी छीछालेदर कर डाली थी। जिंदगी के ऊपर से जैसे उसका यकीन ही उठ गया था। सारी दुनिया उसके लिए एक डरावना सपना बनकर रह गई थी। अपने चारों तरफ हर मर्द उसे वहशी जानवर की तरह घूरता हुआ, भयानक चेहरे बनाता हुआ, जिद और जबरदस्ती का घिनौना मुखौटा लगाए नजर आता। माया की दुनिया धीरे-धीरे सिमटती गई और बस सिकुड़ते हुए महेश मेहता की छाती पर ठहर गई।

उधर महेश मेहता की खुद कुछ समझ में नहीं आ रहा था। एक तरफ उनको मौत की अंधी घाटियां नजर आ रही थीं और दूसरी तरफ माया एक मोहक सपने की तरह, उनकी बांहों में समाई हुई तड़प रही थी। वह सोच रहे थे यह कैसी जिंदगी, यह कौन-सी विडंबना थी जिसमें ईश्वर

ने उन्हें डाल दिया था। कभी तो उनकी रगों में एक झुनझुनी, सुन्न पड़ती हुई सर्द ठंडक पैठने लगती और दूसरे ही क्षण क्रोध की तपती हुई लहर उठती उनके जहन में, जिसके साथ, एक जलती हुई सांस का झोंका निकलता उनके अंदर से। दस साल—काश सिर्फ दस साल वह उम्र को पीछे ढकेल सकते। तब शायद वह सब कुछ मिल जाता उन्हें जिसके लिए वह हमेशा तड़पते रहे थे। एक मासूम बच्चे की तरह वह तलाशते रहे थे, जिंदगी के तमाम अंधेरों के बीच, प्यार का वह रास्ता, गर्माहट की वह रोशनी जो कभी नहीं मिली उन्हें। कभी मां की ममता, कभी ममता का प्यार, कभी मधु की बेवफाई, बस सब कुछ उनका यूं ही छिनता गया था। उन्हें लगता जैसे जिंदगी, कोई अजीब खेल उनके साथ खेल रही थी। कंधों पर फैले रेशमी बालों को सहलाते हुए, जब माया अपना चेहरा उनकी महफूज छाती में छिपा दिया करती तब कई बार उनके अंदर जिंदगी में बगावत कर देने का ख्याल जागने लगता। यह तो वक्त ने उन्हें जीते जी मार डाला था। *उनके सामने जोश के समंदर में लहराती हुई, झूमती हुई जवानी और* मस्ती के खुमार में डूबी हुई, बेपनाह हुस्न की मलिका माया थी और उस सबसे जुड़ी हुई थी ममता की वह तमाम मुर्दा यादें जो हमेशा-हमेशा उन्हें छेड़ती रहती थी। ममता को तो वह जिंदगी के दौर में कितना पीछे छोड़ आए थे। फिर भी ममता की याद चिन्दियों की तरह उड़कर वक्त-बेवक्त गुबार की शक्ल अख्तियार कर लेती। सब कुछ सह लिया करते थे वह! लेकिन जिस दिन ममता, माया को उनके घर पर, उनकी निगरानी में छोड़ गई थी, उन्हें लगा था, एक दोहरी तलवार थी, जिसके ऊपर चलते-चलते, कभी भी वह गिर सकते थे, खत्म हो सकते थे। वह तमाम ममता की यादें, जो मां की आखिरी हिचकी के साथ जुड़ी हुई थीं, एक-एक करके, खूबसूरत नशे की तरह, उनके सामने, उनकी आखों के सामने, दुबारा जन्म ले रही थीं, पल रही थीं, बड़ी हो रही थीं। महेश मेहता के सामने जिंदगी के दो हिस्से थे, और दोनों रूबरू खड़े थे। महेश मेहता को ममता से बेहद प्यार था। उस वक्त की ममता, जैसे एक बार फिर, कितने-कितने सालों के बाद, माया की शक्ल में, उनके ड्राइंग रूम में उस दिन आकर खड़ी हो गई थी। एक बार तो महेश मेहता को विश्वास नहीं हुआ था। लेकिन

सौफे के बगल में, कार्पेट पर महेश मेहता की फोटो पड़ी थी, जिसे एक हाथ में उठाकर वह देख रही थी। तभी वह उठकर बैठ गई। उसने टेप-रिकार्डर बंद कर दिया और दोनों हाथों से महेश मेहता की फोटो देखने लगी।

करीब तीन हफ्ते बाद महेश मेहता अस्पताल से घर आए थे। ये दिन माया ने एक मासूम खौफ में तड़पते हुए गुजारे थे। हर पल उसने ईश्वर से, महेश मेहता के ठीक हो जाने की दुआ मांगी थी। उसे मालूम था, दुनिया में वह कितनी अकेली थी और उसका रोम-रोम बस महेश मेहता के लिए धड़कता था। उनसे अलग जैसे उसका कोई अस्तित्व ही नहीं था।

उस दिन माया का जन्मदिन था। केक काटने के बाद माया के दोस्तों ने, अपने-अपने दोस्त लड़कों के साथ नाचना शुरू कर दिया था। जैसे-जैसे संगीत तेज होता गया, नाच की गत बढ़ती गई। कुछ लड़कियों ने माया को अपने बीच खींच लिया। जीन्स और ब्लाउज में वह किसी परी की तरह थिरक रही थी। महेश मेहता कमरे के एक कोने में खड़े हुए इन लोगों का नाच देख रहे थे। तभी माया ने उन्हें डांसफ्लोर पर आने का इशारा किया। उसे असल में किसी का साथ पसंद नहीं था। महेश मेहता के आने के बाद वह मस्ती-भरी अदाओं के साथ नाचने लगी। उधर महेश मेहता संगीत की लहरियों में इठलाती हुई माया के साथ नाच रहे थे। जैसे-जैसे नाच की रफ्तार बढ़ने लगी, महेश मेहता अपनी रफ्तार बढ़ाते गए। धीरे-धीरे लड़के और लड़कियों ने 'डांसफ्लोर' छोड़ना शुरू कर दिया। वे सब थककर चूर हो गए थे। लेकिन महेश मेहता नाचते रहे—नाचते रहे। वह सबसे अच्छा, सबसे जोशीला डांस कर रहे थे और माया उन्हें देखकर सम्मोहित हो रही थी। उसे महेश मेहता पर गर्व हो रहा था। संगीत बजाने वाले आर्केस्ट्रा के लोग भी थकने लगे, लेकिन महेश मेहता नाचते रहे। एकाएक उनकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया और वह डांसफ्लोर छोड़कर एक आरामकुर्सी पर बैठ गए। तालियों की गड़गड़ाहट के बीच माया भी डांसफ्लोर छोड़कर उनके करीब आ गई। महेश मेहता नाच खत्म होने पर बुरी तरह से हांफ रहे थे। पहली बार अपनी बढ़ती हुई उम्र

का पता चला था उन्हें। उनको हार्टअटैक हो चुका था—पहला हार्ट अटैक !

फिर शुरू हुए अस्पताल के चक्कर, दवाइयों का सिलसिला और माया अकेली रह गई थी। बड़ी मुश्किल से उसने वह दिन काटे थे। उस दिन भी महेश मेहता अपने कमरे में आराम कर रहे थे जब माया उनकी फोटो को देखकर गुनगुना रही थी। तभी वह बैठक में आ गए। उन्हें देख कर माया उठकर उनके पास चली आई।

"पप्पा···पप्पा, आप बैठ जाइए ना !"

"क्यों ?"

"मैं आपको देखूंगी पप्पा···आपको देखूंगी···बैठिए ना !"

"यह भी कोई बात है···मैं आपको देखूंगी !" उन्होंने चिढ़ाते हुए कहा।

"है ना बस, मैं देखूंगी, यह फोटो है ना, इसमें आप जितने अच्छे लगते हैं, उतने ही अच्छे हैं आप या उससे ज्यादा यह देखना है मुझे !" माया ने महेश मेहता को खींचकर सोफे पर बैठा दिया और खुद कार्पेट पर बैठ गई। उसने उनके घुटनों पर अपनी ठुड्डी की टेक लगा दी और सीने पर एक हाथ रखकर उनके चेहरे की तरफ देखना शुरू कर दिया ··काफी देर तक बस देखती रही।

"पप्पा···पप्पा !"

"हां बेटा !"

"कितने अच्छे हैं आप ! कितने स्वीट हैं···कितने प्यारे हैं आप ! कोई आपकी बराबरी नहीं कर सकता है।"

"अच्छा !" महेश मेहता की आंखों में आंसू थे।

"हां पप्पा, यू आर ग्रेट, यू आर टू गुड ! आई लव यू पप्पा, आई लव यू वेरी मच !"

"रियली ?"

"हां पप्पा ! मुझे तो हर वक्त चारों तरफ बस आप ही नजर आते हैं। यू आर सो काइन्ड। मैं देखती हूं पप्पा, यह तमाम लड़के, यह ढेर सारे आदमी कितने बेहूदे हैं, कितने क्रूअल हैं। आई हेट देम। मैं उन्हें स्टैण्ड नहीं

कर सकती।"

"नहीं···सब नहीं।"

"सब पप्पा ··आल आफ देम आर सेम।"

"इतनी कम उम्र में तुझे इतने दुख मिले हैं तो अब तेरा भी क्या दोष है···ओ गाड !"

"मेरी मां नहीं है पप्पा···मेरा बाप नहीं है पप्पा···मेरा कोई नहीं है पप्पा !"

"मैं तो हूं ना बेटा।"

"हां, बस आप हैं।" माया फूट-फूटकर रोने लगी।

"नहीं रोते बेटे···नहीं रोते···अच्छे लोग कभी नहीं रोते।" महेश मेहता खुद भी रो रहे थे, "स्टाप इट नाव, यू नो आई कांट स्टैंड टियर्स !"

"नहीं रोऊंगी पप्पा···मैं कभी नहीं रोऊंगी। आप हैं तो मेरे पास ! यू आर सो काइंड, यू आर सो ब्यूटीफुल !"

कुछ देर माया को देखते रहने के बाद, जैसे बड़ी हिम्मत बटोरकर महेश मेहता ने कहा, "मैं सोच रहा था ··" आगे न कह सके वह।

"रुक क्यों गए पप्पा, कहिए ना !"

"कह दूं।"

"हां।" माया ने भरे हुए गले से कहा।

"मैं भला कब तक तेरा साथ दे सकूंगा। जिंदगी है न, जाने कब धोखा दे दे ! सोचता हूं, अब तेरी शादी कर दूं।"

माया एकदम छिटक कर अलग हो गई। बड़ी दर्दनाक चीख निकली उसके मुंह से। जैसे वातायन के खालीपन में लहराता हुआ, तेज रफ्तार में कोई बड़ा-सा बोझ उसके माथे पर धम से आकर गिरा था।

"नहीं···पप्पा···नहीं।"

"क्यों, तेरी शादी तो होगी ना ?"

"नेवर पप्पा नेवर·· यू नो आई हेट देम आल। दे आर क्रुअल एण्ड डर्टी।"

"फिर भी शादी तो होनी है ना—आज नहीं, कभी तो।"

"कभी नहीं—कभी नहीं···मेरी नर्व्स में···मेरे जेहन की वेवलेंग

कोई समा सकता है···यू नो यू नो इट वेरी मच···" महेश मेहता चीखती-चिल्लाती, तड़पती हुई माधुरी को कुछ देर देखते रहे, एक गहरी आत्म-सात करती हुई निगाहों से ! उनकी खुद समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वह सब मिला भी तो तब, जब किसी काम का नहीं था उनके लिए। न जाने कब से उनका एक हाथ माया के कंधों पर फैले हुए रेशमी बालों को सहला रहा था और न जाने कब माया ने अपना चेहरा उनके सीने पर टिका दिया था।

और फिर सब कुछ धीरे-धीरे बदल गया। जिंदगी ने, महेश मेहता को जीते जी मार डाला था। उनके सामने जोश के समन्दर में लहराती हुई, झूमती हुई, मस्ती के खुमार में डूबी हुई माया थी, जिसका बेपनाह हुस्न बार-बार उनके करीब आता और दूर चला जाता। उसे अपने इतना करीब पाकर भी महेश मेहता के मन की गहराइयां अछूती रह जातीं। सब कुछ टूट जाता, बिखर जाता और तब यूं ही तड़पते हुए खामोश निगाहों से वह उजड़ता हुआ अपना संसार देखते रहते। जीवन ने हमेशा की तरह इस बार भी इतने करीब से उन्हें छला था, जो वह जान ही न पाए। कब सितारे टूटने लगे थे, कब आसमान फट पड़ा था। उनके मन के कोने-किनारे में बड़ी-बड़ी दरारें पड़ गई थीं, जिन्हें भरने के लिए माया का सहारा था। बस ! लेकिन माया उम्र का फासला तो नहीं भर सकती थी।

उस दिन माया के जन्मदिन की पार्टी के दौरान उन्हें पहला हार्ट अटैक हुआ था और तभी से उन्होंने माया की शादी की बात सोचनी शुरू कर दी थी। हर वक्त उन्हें इस बात का डर था, जो कहीं कुछ हो गया उन्हें तो माया का क्या होगा ? वह तो अकेली थी, बिल्कुल अकेली, उसका न तो कोई दोस्त था और न ही कोई साथी। दुनिया उसके लिए खौफ का ऐसा मंजर थी, जिसके पास भी वह नहीं जाना चाहती थी, जैसे जल जाएगी, मिट जाएगी। माधव से लेकर हर आदमी को उसने नफरत की निगाहों से देखा था। शायद इसीलिए उसके अंदर उसकी सांसों में, उसकी धड़कनों में वही अंधा विश्वास, वही घुटी हुई आस्था घर कर चुकी थी, जिसमें किसी के लिए कोई जगह नहीं थी।

महेश मेहता को एक फैसला करना था बहुत बड़ा फैसला ! जहां एक

तरफ वह माया को खोना नहीं चाहते थे। वहीं दूसरी तरफ माया, आने वाले वक्त में कैसे जियेगी, इसकी भी चिंता थी उन्हें। उधर माया को शादी के लिए तैयार भी करना था और अगर वह शादी के लिए तैयार भी हो जाए तो किसी ऐसे लड़के की तलाश करनी थी जो उनके मानदण्ड पर खरा उतरे। तभी उन्होंने माया को बड़ी मुश्किल से राजी करने के बाद, भोला चौधरी से उसकी शादी कर दी। उन्हें मालूम था, जिंदगी का हिसाब इतना आसान नहीं होता। कुछ छूट जाता, कुछ बिखर जाता। उनके लिए तो अब यह सब बेमाने था, उसका कोई मतलब नहीं था। इसीलिए उन्होंने हालातों से समझौता कर लिया और कलेजे पर पत्थर रखकर माया को विदा कर दिया। कहने को तो सब कुछ हो गया था, लेकिन महेश मेहता को इंतजार था सिर्फ यह देखने का जो उनका फैसला सही था और वह खुद कितना और सह सकने के काबिल थे। एक मुर्दा की तरह, लोहे की मशीन के बने हुए पुर्जों की तरह उन्होंने अपने वक्त को काटना शुरू कर दिया था।

उधर कई दिनों से महेश मेहता को माया की बड़ी याद आ रही थी। वह माया से मिलने के लिए सोच रहे थे। मन-ही-मन कितनी-कितनी बार उन्होंने अपने को रोका था, क्योंकि उन्हें मालूम था, उनके वहां जाने से, माया खुद उनके साथ चलने की जिद करने लगेगी। इसीलिए वहां जाने की बात बस हर दूसरे रोज पर टाल दिया करते।

लेकिन उस दिन दफ्तर से लौटकर जैसे ही वह घर के अंदर आए और अपनी छड़ी मैंटलपीस के पास रखने को बढ़े तो माया को वहां देखकर एक हैरतमंद खुशी उनके चेहरे पर झलक उठी।

"अरे रे ! तुम !"

"देखा…देखा आपने आज फिर देर कर दी !"

"लेकिन मुझे कुछ पता तो हो।"

"पता तो—क्या भला ?"

"यही जो यहां तू आई है। अच्छा बता तो सही, अकेले ही आई है या भोला भी आया है ?"

"नहीं !"

"तो फिर लड़कर आई है ?"

"आप तो जानते हैं पप्पा ! मैं लड़ सकती हूं भला !"

बस मेरा जी नहीं लगता वहां···मैं क्या करूं पप्पा, मेरा जी नहीं लगता···"

"तेरा पति है वह, भोला अच्छा लड़का है !"

"मैंने तो पहले ही कह दिया था ना।"

"कहा तो था तुमने···लेकिन अपने मन को समझाओ माया !"

"अच्छा आप बैठें तो," महेश मेहता के टाई की नाट ढीली करते हुए उसने कहा था, "कितने थके से लगते हैं आप, पप्पा, पप्पा, तबियत तो ठीक है ना ?"

"दो हार्ट अटैक के बाद अब तबियत कैसी होगी।"

महेश मेहता के होंठों पर उंगली रखकर माया ने उनके हाथ सहलाना शुरू कर दिया, "सच में पप्पा, आपको मेरी जरूरत है ना ?"

"भोला की जरूरत ज्यादा है। उससे भी ज्यादा तुझे भोला की जरूरत है।"

"मैं आपको छोड़कर नहीं रह सकती। दे आल आर टेरर टु मी आय टोल्ड यू !"

महेश मेहता के जवाब का इंतजार किए बिना, माया अंदर जाकर उनकी स्लीपर ले आई, जिसे उनके पास डालकर जूते, मोजे, कोट, टाई वगैरह लेकर अंदर चली गई। महेश मेहता उसे अंदर जाते हुए देखते रहे और चुपचाप काफी टेबल से अखबार उठाकर पलटने लगे। तभी उनकी निगाह दरवाजे की तरफ गई, जहां भोला खड़ा हुआ था।

"आओ भोला, आओ, बैठो ना।"

भोला चुपचाप आकर बैठ गया और कमरे में इधर-उधर देखने लगा।

"माया अंदर है, अभी लौटकर आया तो मैंने देखा उसे !" महेश मेहता ने हंसते हुए कहा।

"हां, मुझे मालूम है, वहां रह भी कैसे सकती है ? मैं उसे कहूं भी क्या ? जिसकी अपनी आमदनी न हो, जिसका बाप सटोरिया हो, जिस घर में इज्जत न हो···वहां···वहां तो, अब मैं भी नहीं रह सकता।"

"तो यहां आ जाओ ना।" महेश मेहता की आवाज में उम्मीद थी।

"नहीं···मैं घरजमाई नही बन सकता।"

"देखो भोला ! तुम्हारे घर की हालत मुझे पता थी···यह शादी मैंने तुम्हें देखकर की थी।"

"लेकिन आपने मेरे सटोरिए बाप का हिसाब लगाया था ?"

"तभी तो ! यहां आ जाओ···वक्त लगेगा···लेकिन सब ठीक हो जाएगा।"

"नही ··कभी नहीं। बस माया रहेगी यहां।"

"और तुम ?"

"मैं किसी लाज में रहूंगा···और क्या !"

"और खर्चा-पानी ?"

"उसके लिए नौकरी तलाश करूंगा ना।"

"नौकरी ! वो मेरे यहां मिल सकती है।"

"तब तो शायद कुछ दिनों के लिए यही ठीक रहेगा।"

"तो कल तुम दफ्तर आ जाना, आई शैल फिक्स समथिंग।"

माया को आते हुए देखकर महेश मेहता अंदर की तरफ चले गए थे।

"माया, मैं घर छोड आया हू।" भोला उठकर खडा हो गया।

"क्या !"

"हां, अब मेरी वहा तो गुजर नहीं होने की। मेरा दिमाग दिन पर दिन घुमता जा रहा है। बाप के सट्टों के नम्बर, खैराती, खुराकी किस्म के नम्बर बार-बार, बडे आकार मे, घनत्व में किसी कटखने कोड़े की तरह दिन-रात मुझे काटते रहते हैं।"

"फिर !" माया डरी हुई थी।

"पापा ने कल बुलाया है, किसी नौकरी के लिए।"

"मेरी तो कुछ समझ मे नही आता।"

"लेकिन मेरी समझ मे सब कुछ आ रहा है। एक बार बस व के चक्कर में आ गया। पापा की रकम पर नजर थी उसकी।"

"रकम !"

"हां रकम, लेकिन मुझमे ऐसा क्या था ?"

"पापा को बस शरीफ और सीधा लड़का चाहिए था ना ?" माया हंस रही थी।

"शरीफ ! सीधा !" भोला चौधरी ने ठहाका लगाया, "शरीफ हूं, तभी तो ठोकरें खा रहा हूं, सीधा हूं, तभी तो ठुकराया जाता हूं। दुनिया में जीने के लिए शरीफ और सीधा नहीं—क्रुक चाहिए, डबल क्रुक !"

"यू मीन क्रुक, यू वान्ट टु वी क्रुक !"

"इसमें बुराई क्या है, जी सकता है कोई सीधा बनकर ?"

"तुम्हें क्रुक बनने की जरूरत क्या है, यहां क्यों नहीं आ जाते ?"

"घरजमाई बनकर ?" भोला ने व्यंग्य से कहा।

"नाट दैट वे !"

"फिर है कोई नया नाम इसके लिए ?"

माया चुपचाप अपने नाखून कुरेदती रही।

"बस मैं यही नहीं कर सकता। सटोरिया बाप के साथ सीधा बनकर और यहां क्रुक बनकर नहीं रह सकता।"

"तो ?"

"मुझे थोड़ा वक्त चाहिए माया ! थोड़ा वक्त ! मैं मेहनत करूंगा। यह मेहनत यहां की दौलत, यहां के आराम से ज्यादा कीमती होगी। आय वान्ट टु वी सेल्फ मेड !"

"पापा को मेरी जरूरत है।"

"और मुझे ?" माया का हाथ पकड़कर भोला ने खींच लिया, "कम आन आज मैं वड़ा लोनली फील कर रहा था।"

"छोड़ दो मुझे···छोड़ दो !" माया ने हाथ छुड़ा लिया।

"क्यों छोड़ दूं, तुम बीवी हो, मेरी ब्याहता हो।"

"अधिकार जता रहे हो ?" भूल गए अपना वादा ?"

"याद है सब मुझे···लेकिन क्या छू भी नहीं सकता, लेट मी हैव ए किस प्लीज !"

"आय सिम्पली डोन्ट लाइक इट नाव !"

"सीधा हूं ना ! अरे कोई और होता, बस चमड़ी उधेड़कर रख देता और तब पूछता, डू यू लाइक इट नाव।" भोला ने चिढ़ाते हुए कहा।

माया उठकर खड़ी हो गई…पीछे की ओर हटते हुए…थर-थर कांपते हुए उसने कहा, "अभी कह रहे थे ना, यु वान्ट टु बी क्रुक ! इन फेक्ट, यू हैव बिकम क्रुक !" उसके चेहरे पर परेशानी, हैरत, अविश्वास था, "यू आर क्रुअेल, आर यू क्रुक ! …मैं जानती थी, यू आल आर सेम !" माया अंदर जाने के लिए मुड़ने लगी।

"नहीं…माया नहीं।" भोला की आवाज में दर्द था, "नाट दैट वे,. आय एम नाट क्रुवेल…आई लव यू…आय लाइक यू वेरी मच…लेट मी ट्राय…आय शैल मेक इट।"

"नहीं…नहीं…मैं तुम्हें ट्रस्ट करूंगी भला !" कहकर माया अंदर भाग गई।

भोला चौधरी को अपनी गलती का अहसास हो चुका था। उसने माया को खुद वादा किया था। उसने महेश मेहता से भी वादा किया था। लेकिन उस समय न जाने क्या हो गया था, वह कुछ देर बस यू ही खड़ा रहा था बैठक के बीचोबीच। जैसे माया की परछाईं से निकलकर कोई गूंज बार-बार उसके मन के कोने-किनारों से टकरा रही थी। कुछ देर बाद एक लम्बी सांस भरकर, वह बाहर चला गया।

एक तरह का समझौता कर लिया था महेश मेहता ने जिंदगी से। सब कुछ पीछे छूटता जा रहा था, तेज रफ्तार से गुजर चला था। महेश मेहता असल में मुकद्दर के धनी थे और हमेशा-हमेशा से जब सारे रास्ते बंद हो जाया करते, किसी-न-किसी रास्ते से निकलकर वह आगे का सफर तय कर लिया करते। उस दिन जब माया अपनी ससुराल से वापस लौट आई थी और फिर जब भोला चौधरी ने आकर उनके सामने माया के वहीं, उनके पास रहने का प्रस्ताव किया था, तो शायद यह निर्यात का वही दरवाजा था, जिसे उन्होंने खुद खुला छोड़ रखा था। जब माया वहां उनके पास रहने लगी, तब उनको पता लगा उस फर्क का जो उनके द्वारा आ जाने से पड़ा था। तिल-तिलकर टूटते हुए मन की इकाइयों से जुड़ते-घटते हुए अनेक सवालों का उन्हें जैसे जवाब मिलने लगा था।

माया के लिए तब अच्छा क्या और बुरा क्या था। जो कुछ था, वह महेश मेहता के पास था। उनके जोर डालने से, अपनी कसम देकर मजबूर

करने से उसने भोला चौधरी से शादी तो कर ली थी लेकिन वह भोला की होकर रह न सकी। पहली ही रात उसने भोला चौधरी से एक खुफिया समझौता कर लिया था। भोला ने उसे अपने साथ, बिस्तर पर लेटने के लिए मजबूर न करने की और महेश मेहता के यहां जाने से न रोकने की सौगन्ध उठा ली थी। एक लखपती बाप की बेटी जो खुद भी लाखों में एक थी, जिसका बेपनाह हुस्न, उसकी आंखों के सामने अनेक रंगों के ताने-बाने बुन रहा था, उससे भला भोला तब और क्या कहता !

भोला चौधरी के लिए सब कुछ नया था, अजूबा था। जैसे तेज रफ्तार में दौड़ते हुए घोड़े पर वह दूर—बहुत दूर निकल गया हो और तब भटकते-भटकते वह किसी ऐसी जगह पहुंच गया हो, जहां एक महल हो, एक राजकुमारी हो और साथ में बेशुमार दौलत की मिलने वाली मिलकियत हो। कई दिनों तक उसे विश्वास ही न हुआ। उसे लगता था, यह कोई सपना था। शक्ल-सूरत से वह अच्छा था, रामू काका के पास मिलने के ए आया करता था। पढ़ने-लिखने में अच्छा होने के साथ, उसके चरित्र में । और स्वभाव में सरलता थी। उन्हीं दिनों तो महेश मेहता की नजर सके ऊपर पड़ी थी। वह माया के लिए किसी लड़के की तलाश में थे। पहले तो काफी दिनों तक महेश मेहता उसे सब समझते-तौलते रहे थे। जब एक दिन रामू काका ने माया से उसकी शादी का जिक्र किया तो लगा था जैसे उसे पंख लग गए। दूर-दूर तक उसे सारा संसार कितना हसीन दिखाई देने लगा था। जैसे आसमान से उतरकर कितनी रहस्यमय निधियां, कोने-कोने से फूट-फूटकर निकल रही थीं और उनके नन्हें से मासूम मन में, उसकी भोली निगाहों में समा नहीं पा रही थीं। उसे लग रहा था जैसे वह उड़ता चला जा रहा था, अनन्त विस्तार में और उसके चारों तरफ एक खुशहाल जिंदगी थी, इतनी खुशियां थीं, जिनकी कल्पनामात्र से उसे रोमांच हो आता था। शादी की पहली रात को जब उसने माया को अपने करीब पाया तब उसे लगा जैसे हुस्न-नूर की एक परी न जाने कहां से आकर वहां बैठ गई थी। वह डर रहा था, माया को छू तक लेने से डर रहा था। उसका मन कर रहा था जो वह वहीं जमीन पर बैठ जाय और अपने आंसुओं से माया के पैर धो डाले, उसकी पूजा करे, उसे अपना सब

कुछ दे डाले। इन्हीं मनस्थितियों में तो माया ने उससे जो कुछ मांगा, उसने दे डाला था, और सुहागरात को वम करवट बदलकर सो गया था। फिर उसके सटोरिए बाप ने सारा मजा किरकिरा कर दिया था। उसके बाप की छिछोरी हरकतों ने उसके अंदर महेश मेहता की दौलत के लिए एक हिकारत पैदा कर दी थी। उसके बाप को पैसे का जितना लालच था और जिस तरह की कमीनी हरकतें वह करता था, उसने भोला के अंदर आत्मसम्मान का, खुद्दारी का एक ऐसा जजवा पैदा कर दिया था जिसमें महेश मेहता का घरजमाई बनना उसे स्वीकार नहीं था। न जाने कैसी-कैसी बातें उसके अंदर पैदा होने लगी। वह जीना चाहता था, लेकिन अपनी तरह। अपनी शर्तों पर वह माया को हासिल करना चाहता था। महेश मेहता को माया की और माया को महेश मेहता की जरूरत थी। भोला चौधरी अपनी बीवी माया को साथ रख सकने की स्थिति मे नहीं था। वह घर छोड चुका था। इसलिए उसे एक छोटी-मोटी नौकरी की तलाश थी और कोई रहने का ठिकाना भी चाहिए था। महेश मेहता ने उसे अपने दफ्तर में नौकरी दिलवा दी और उसके रहने का ठिकाना भी लाज मे करवा दिया था।

उधर महेश मेहता को तब तक इंडिया ट्रैवल्स के उत्तराधिकारी की भी तलाश थी। और दिन-पर-दिन माया के बिना रह सकना उनके लिए नामुमकिन होता जा रहा था। उन्होंने माया को इंडिया ट्रैवल्स मे काम सिखाना शुरू कर दिया था। हालातों की तहत महेश मेहता, माया और भोला चौधरी मे एक प्रकार का समझौता हो चुका था, एक अरेंजमेंट हो चुका था, जिसमें अपनी-अपनी जरूरत की सीमाओं में बंधे हुए यह सब, एक प्रकार से अलग-अलग होते हुए भी, एक-दूसरे से जुड़े रहने की लगातार कोशिश कर रहे थे। भोला चौधरी ने फिलहाल अपने को बिल्कुल अलग कर लिया था। वह महेश मेहता के घर शायद ही कभी आता। माया से भी वह बहुत कम मिलता। पहले तो महेश मेहता ने उसे पास खींचने की कोशिश की, लेकिन फिर उसकी खुद्दारी की जिद को समझते हुए, उसे अपने हाल पर ही छोड़ दिया था। एक बार फिर माया उनके पास थी और उनके जीवन मे एक बार फिर शक्ति का अनंत स्रोत उबलने लगा था, खुशियों मे वह चहकने लगे थे।

पांच

सब कुछ ठीक-ठीक चल रहा था, तभी इंडिया ट्रेवल्स में राजी खन्ना नाम का एक लड़का नौकरी के लिए आया। वड़े सरकारी ओहदेदार का वेटा था राजी, जिसे महेश मेहता को कारोवारी दस्तूर की वजह से, नौकरी देनी पड़ी थी। राजी असल में, वचपन से जवानी तक, साधारण स्कूल में पढ़ा था। स्कूल में लड़कियों से उसका कोई ताल्लुक नहीं था। नवजवान, साफ-सुथरा आकर्षक व्यक्तित्व था राजी का। उसके मन के विस्तार के हिस्से-हिस्से में, हसीन ख्याल में, मासूम तसव्वर में अनेक लड़कियां गुदगुदी मचाया करती थीं। लड़कियों को देख-देखकर कितनी-कितनी हसरत में वह तरसता रहता। उसे सिनेमा देखने और फिल्मी पत्रिकाएं पढ़ने का वेहद शौक था। फिल्मी मोहव्वत, हमेशा-हमेशा से उसके में, न जाने कितनी गडमड तस्वीरें वना देती और वह अकेले में उनकी ों में खो जाया करता। गली-वाजार और मोहल्ले की न जाने ी लड़कियों से उसने सोहवत करने की कोशिश की थी। वस नाकामी ही मिली थी हर वार उसे। उसके पास नाकामियों का एक लम्वा इतिहास था। इश्क में वह नाकाम रहता क्योंकि उसे इश्क करना आता ही नहीं था। शुरू के दिनों में, अंग्रेजी स्कूल में पढ़े लड़कों की तरह, उसने कभी किसी लड़की के साथ, अकेले में वैठकर वात तक नहीं की थी। किसी लड़की के साथ पिकनिक, डान्स या रेस्ट्रां में चाय तक पीने का उसे अवसर नहीं मिला था। राजी खन्ना वेहद डरपोक था। विस्तर पर लेटकर आंसू वहा लेना, लड़की के इश्क में तड़पना, उसका पीछा करना, उसके घर के सामने घंटों छुपकर खड़े होना और उसके महज दीदार के लिए वेचैन रहना, यह सव तो वह कर सकता था, लेकिन खुद उसके सामने जाकर अपने इश्क का इजहार कर देना, उसके लिए नामुमकिन था। न जाने कितनी वार, इस तरह उसके हाथों असफलता लगी। निराशा की उन घड़ियों में वह नशे की गोलियां ले लिया करता। धीरे-धीरे मैनड्रेक्स, वेस्परेक्स वगैरा नशीली गोलियां लगातार खाते रहने की उसकी आदत पड़ चुकी थी।

राजी खन्ना ने जब एजेन्सी में कदम रखा तो वहां दो लड़कियां थीं। एक थी शबनम, दफ्तर की टाइपिस्ट और दूसरी थी माया चौधरी। माया को देखते ही किसी स्वाभाविक प्रक्रिया के तहत कई अनचीन्ही प्रतिक्रियाएं होने लगी थीं उनके अंदर। उधर शबनम राजी खन्ना को चुपके-चुपके चाहने लगी। लेकिन राजी खन्ना ने शबनम की ओर देखा तक नहीं। अपनी पुरानी आदत के तहत वह माया से चुपके-चुपके इश्क करने लगा। दफ्तर में और बाहर थोड़ा-सा फासला रखकर वह माया का चुपके-चुपके, चोर निगाहों से पीछा किया करता। बड़ी हसरत-भरी निगाहों से, वह माया को देखता, देखता ही रहता। उसकी नशीली आंखों में माया किसी हसीन ख्वाब की तरह उनराया करती। मन में हूक, चेहरे पर तड़प, खोई-खोई निगाहों में, अनेक-अनेक रूप में माया, उनके ख्यालों में, कल्पना के कोने-किनारों से उतरकर उनके पास चली आती। मैनड्रेक्स की गोलियां इन अनुभूतियों की गहनता को बढ़ा देतीं और कुछ कर गुजरने के लिए वह तड़पता रहता।

दफ्तर में छित्तन बाबू बहुत पुराने आदमी थे। खिचड़ी बाल, अध-कचरी मूछों से घिरे उनके चेहरे पर एक फूहड़ मुस्कान हमेशा टंगी रहती। स्टील के कमानीदार गोल शीशे वाले चश्मे में, उनकी आंखों की पुतलियां जब-तब उलट जाया करतीं। बीस साल से ऊपर हो गए थे उन्हें एजेंसी में काम करते हुए। एक निहायत घिसे हुए, पिटे हुए, थुर्गेट किस्म छित्तन बाबू के जीवन में, घर···बीबी···बच्चों के सिवा, कुछ भी नहीं था। सीधी-सादी जिंदगी से उनका मन ऊब चुका था। रंगीन मिजाज तो वह थे लेकिन समय उनके साथ नहीं था। अपने बारे में उनको कोई खास गलतफहमी नहीं थी। बस उन्हें ईश्वर से यही शिकायत थी जो उनको उन अधेड़ उम्र तक, सिवाय घरेलू औरत और बेशुमार बच्चों के, उन्हें कुछ भी नहीं मिला था। सब कुछ होते हुए भी समझ-बूझ के धनी थे छित्तन बाबू। नंगी-अधनंगी औरतों की तस्वीरें, सिनेमा पोस्टर, कोकशास्त्रीय किताबों और नए फैशन की तितलियों को देखकर, वह हाय-हाय करने लगते। माया को उन्होंने, बारह साल की उम्र से, महेश मेहता के यहां, जवान होते हुए देखा था। एक तो उम्र का फासला, दूसरे बास की बेटी, माया

के बारे में बात करना एक गुनाह था ।

लेकिन उस बार उनकी कुदरती आंखों ने सब कुछ देख लिया था । दफ्तर में जिस तरह राजी, माया के ऊपर, लाइन मार रहा था, छिद्दन बाबू को ताड़ने में भला कितनी देर लगती । राजी के माध्यम से, माया तक अपना सम्पर्क मिलाकर, अपनी भड़ास निकालने का उससे अच्छा मौका भला उन्हें अब और कहां मिलने वाला था ।

काफी दिनों तक छिद्दन बाबू राजी को माया की तरफ, लगातार घूरते हुए देखते रहते थे । राजी की मेज उनकी मेज के बगल में ही थी । उस दिन माया फाइल के कागजात, रेफरेंस सेक्शन से लेकर, उनकी मेज के पास से निकली थी, तब छिद्दन बाबू ने राजी को छेड़ा था, "पटाखा है राजी साब ! पटाखा है ?"

"क्या ?" राजी को छिद्दन बाबू से ऐसी बात सुनने की उम्मीद न थी ।

"कुछ भी तो नहीं...मैंने तो सिर्फ आपके मन की बात कही । मन आपका, जबान मेरी थी ।"

"मन की बात...मेरे मन की बात ?"

"छोड़ो भी यार... हमें अपना ही समझो...दोस्ती निभाना जानते हैं ।"

"क्यों नहीं ?" राजी को अजीब लग रहा था ।

"एम० डी० का माल है, जरा धीरे से ।"

"एम० डी०...एस० पी० साहब...क्या कह रहे हैं आप ?"

"हमसे पूछो...सब देखा है, सब जाना है ।" आंख की पुतलियां उलटते हुए छिद्दन बाबू ने कहा ।

राजी अपनी कुर्सी छोड़कर छिद्दन बाबू के सामने आकर बैठ गया, "है कौन वे, छिद्दन बाबू ?"

"माया...माया चौधरी...भोला की बीबी !"

"भोला...वह भोला !" राजी ने मुंह बनाया ।

"नहीं...नहीं...जरा रुको तो गुरु...भोला तो बस नाम की खातिर है ।"

"भोला की बीवी है···भला···शादी कैसे हुई ?"

"छोड़ो भी···यह भी कोई शादी है···कुछ चाहिए तो ढकने के लिए ना !"

"ढकने के लिए ?"

"अरे हां, एम० डी० की पाली हुई है, अपने हाथों जवान किया है इसे।" छित्तन बाबू हाथ मल रहे थे।

"मतलब ?"

"यही कोई दस-बारह साल की थी, कहीं से उठा लाए थे, अकेले घर में जी बहलाने के लिए। फिर धीरे-धीरे जवान होती हुई माया नशे की तरह उनके ऊपर छा गई। बचपन से जवानी की देहरी तक, माया ने सिर्फ एम० डी० को ही जाना था, पहचाना था। उन्होंने उसे कब अपने से अलग होकर, आजाद जिंदगी जीने का मौका दिया ! और गुरु ! उन्होंने ही उसे तमाम खुफिया रिश्तों का अहसास कराया, जो जवान होने पर हर लड़की कहीं-न-कहीं से सीखती है। उसके बाद सब कुछ आसान होता गया।"

"क्या कह रहे हैं, छित्तन बाबू ! माया तो शादीशुदा है ना ?"

"हां ! उम्र ज्यादा हो चली थी एम० डी० साहब की, इसलिए उन्होंने एक साधारण आदमी से उसकी शादी कर दी। अरे भई ! ढके रखने के लिए भी तो कुछ चाहिए ना !···और भोला, वह तो नाकारा है, बेचारा जाने क्या बड़े लोगों के खेल ! बीवी के खर्च से बचाए हुए हैं उसे एम० डी० साहब, ऊपर से नौकरी दी है, रहने का ठिकाना कर दिया। ससुरा कहता है सेटल होने तक माया उनके पास रहेगी। अरे इस तरह कोई अपनी बीवी छोड़ता है क्या ! लोगों ने उसका नाम रखा छोड़ा है। सेटलमेंट !

"अब छोड़िए भी छित्तन बाबू !"

"मैंने तो छोड़ ही रखी थी बॉस के डर से ! अब आप न छोड़ देना। क्या जोड़ी रहेगी तुम दोनों की !"

राजी बिना जवाब दिए उठकर चला गया, लेकिन छित्त

वात उसे अच्छी लगी। वह जाकर अपनी कुर्सी पर वैठ गया और एक वार माया को उड़ती निगाहों से देखकर फाइल के कागजात उलटने लगा।

राजी का दिमाग वड़ी तेजी से घूम रहा था। उसने माया को व्याहता नहीं समझा था। वैसे माया के कंधों तक लहराते हुए रेशमी वाल, गोरा रंग, छरहरे वदन के कटाव और उभार, किसी मदहोश मोहकता में डूवे हुए थे। उसमें मस्ती भरी अदा थी। कभी जीन्स और शर्ट, कभी सलवार-कमीज, कभी स्कर्ट-व्लाउज और कभी-कभी साड़ी पहनती थी वह। उसकी चाल में, उठने-वैठने में, वोलने में, देखने में, उसके वजूद, उसके अस्तित्व में एक कमसिन खूवसूरती, एक अछूतापन था। वह जिधर से निकल जाती, माहौल महक उठता, जर्रे-जर्रे से खुशवू फूटने लगती, अनेक-अनेक रंगों से वनी हुई कितनी ही वृत्तियां उभर आतीं। राजी करता भी क्या माया को देख कर, दिल में कसक उठती और वह उसका दीवाना हो जाता। माया का सवसे वड़ा दोष था, उसकी सुन्दरता, उसका अनूठा रूप। कभी-कभी तो उसे छू तक लेने के ख्याल से डर लगता और कभी जैसे सिर पर जूनून सवार हो जाता। उसके हसीन चेहरे पर दोनों तरफ कुदरती गड्ढे पड़ते, जिनमें धंस जाने पर उभर सकना मुश्किल था। छित्तन वावू ने न जाने कितने सवाल उठा दिए थे। माया, भोला जैसे लीचड़ आदमी की वीवी थी, इसको स्वीकार कर लेना, इसे मान जाना उसके लिए वड़ा मुश्किल होता जा रहा था।

और फिर एम० डी० साहव के साथ, उसके खुफिया रिश्ते की वात भी छित्तन वावू ने उसे वताई थी। सच क्या था और झूठ क्या था, इसका उसे पता नहीं था, लेकिन मन की सीढ़ियों पर चढ़कर उसने माया के साथ अपने को जोड़ लिया था। उसे यह भी अहसास होने लगा था, जो हालातों में फंसी हुई माया को शायद उसकी जरूरत थी। फाइल के कागज देखने में राजी का मन नहीं लगा। वह अपनी कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया। उसने फाइल उठा ली। फाइल लेकर वह एम० डी० साहव के केविन से जरा दूर पर रखी हुई फाइलिंग कैविनेट के पास खड़ा हो गया। कैविनेट के ड्राअर पर लिखे हुए इन्डेक्सिग कोड को देखता रहा। उसने सवसे ऊपर वाला ड्राअर खोला और वहां से एक के वाद एक फाइल देखकर

'रिस्पान्सड टु अस' की फाइल निकाल ली। ड्राअर को बन्द करने के बाद, केबिनेट की टेक लगाकर वहीं, वह फाइल के कागजात उलटने-पलटने लगा

माया हाल के दूसरे कोने से, खरामा-खरामा, एक फाइल झुलाते हुए चली आ रही थी। उसकी निगाहों में शोख़ी-भरी मस्ती थी, ख़ुमार था। एक बार जरा देर के लिए वह भवानी बाबू की मेज के पास रुकी, फिर उसने रावत से बात की। उसे एम० डी० साहब से डेलीगेशन के दौरे की बाबत कई बातें तय करनी थीं। दफ्तर में चारों तरफ, किसी जहीन व्यस्तता का माहौल था। बाहरी लोग अपनी बुकिंग के लिए पूछताछ कर रहे थे। रावत से बात करने के बाद माया एम० डी० साहब के केबिन की तरफ चली। केबिन की तरफ मुड़ने से पहले उसकी नजर राजी पन्ना से मिली, जिसके साथ जैसे अपनत्व की, पहचान की लहर उठी और उसके महीन, लाल होंठों की दरार से दो शब्द निकले "हलो !" माया ने मुस्कराकर राजी की तरफ देखा और एक पल के लिए ठहर गयी।

दूसरे ही क्षण हड़बड़ाकर राजी ने जवाब दिया था, "हलो !" गालों के गड्ढों तक माया के चेहरे पर हल्की-सी हंसी की बिजली कौंध गई और वह केबिन के अंदर चली गई।

राजी के हाथ से फाइल छूटकर गिर गई। वह फटी-फटी निगाहों से माया की तरफ देख रहा था, देखता ही जा रहा था। केबिन के बन्द होते हुए दरवाजे को घूरता रहा था। चन्द लमहों के बाद वह अपनी कुर्सी पर बैठ गया और काफी देर तक बस शून्य में देखता रहा। हलो ''हलो, जैसे बड़ी दूर से, किसी ऊंचे पहाड़ी टीले पर खड़े होकर कोई कह रहा था, हलो'''हलो'''! यह वादियों की फुसफुसाहट थी या तनाव की दूरियों को लांघती हुई कोई महीन-मोहक'''मदहोश बना देने वाली आवाज़ ! कितने-कितने दिनों के इंतजार के बाद, कोई दिलो-दिमाग में सोए हुए उस शब्द को जगा रहा था जिसे सुनने की साध लिए वह एक लम्बी बीमारी के दौर से गुजरता रहा था। उसे तो इसका भी पता नहीं था, यह स्वप्न था या हकीकत ! इस शब्द को सुनने की हसरत के लिए वह कितना तड़पा था, वह कितना रोया था। उसका वजूद, इस शब्द का वजूद, उन यादों की

हस्ती कब की ढेर हो चुकी थी। वह तो अनजान, गुमनाम सांसों के लिए धड़कनों के लिए तरसता ही रह गया था। कितने दिनों के बाद एकाएक उसके जहन में यह शब्द, नींद की ढलानों से उठकर बैठ गए। उसे अहसास हुआ जैसे कोई जहर से बुझा तीर, तेज, बड़ी तेज रफ्तार में, हवा के संग, वातायन की दूरियों को लांघता हुआ, उसके मन में चुभ गया था। एक पल को तो लगा, सब कुछ झूठ था, सच तो था बस इस शब्द का जुड़ा होना, उस सारी उम्र से जो वह पार कर यहां तक आया था। लेकिन वह दस्तक, वह फुसफुसाहट, तनाव की दूरियों को लांघती हुई एक महीन-मोहक-मदहोश आवाज ! राजी का हाथ अपने माथे पर गया, जहां पसीने की बूंदें उभर आयी थीं। उसने एक लंबी सांस छोड़कर जेब से रुमाल निकाला, माथे का पसीना पोंछकर रुमाल जेब में रखा और क्लिप किए कागजों से एक सादा कागज निकाल कर लिखने लगा : "···माया···हलो···हलो··· हलो···माया···माया हलो···हलो···हलो···माया···माया···माया।" इस घटना ने राजी के सारे-समूचे जीवन को झकझोर कर रख दिया था। एक खुशनुमा, जजबाती सैलाब, नशीली परत-दर-परत से उभर कर रिसने लगा था। राजी के लिए एक जवान, खूबसूरत लड़की का अपने आप हलो कह देना एक बहुत बड़ी बात थी।

दफ्तर के सब लोग जा चुके थे, बस राजी अकेला बैठा एक पेंसिल से माया का लाइन स्केच बना रहा था। स्केच पूरा करने के बाद उसने तस्वीर को नाम दिया, डियर हलो ! तब कहीं जाकर उसने दफ्तर में चारों तरफ देखा। सब लोग जा चुके थे। कुछ पंखे चल रहे थे, कुछ बत्तियां जल रही थीं। वहां एक सन्नाटा भिनभिना रहा था। राजी उठकर खड़ा हो गया और वहीं से माया की मेज की तरफ देखने लगा। धीरे से अपनी कुर्सी खिसका कर वह माया की मेज के पास तक गया। एकाएक उसकी निगाहों के सामने, वहां रखा हुआ एक लेडीज रुमाल घूम गया। वह तेजी से घूमा और करीब-करीब दौड़ता हुआ, एम० डी० साहब के केबिन तक गया। उसने केबिन का दरवाजा खोलकर देखा। फिर पूरे दफ्तर का चक्कर लगाकर, बाहर तक देख आया। जब उसे किसी के भी वहां न होने का इतमीनान हो गया, तब वह वापस माया की मेज के करीब पहुंचा और

एक झटके से उसने रुमाल उठाकर अपनी मुट्ठी में बन्द कर लिया। उसके बदन में अनगिनत चीटियां रेंगने लगी जैसे उसके पोर-पोर में एक झुनझुनी —एक सुनसुनाहट हो रही थी। वह रुमाल को बार-बार चूमने लगा। रुमाल को सीने में, आंखों में लगाकर वह बार-बार फुसफुसाहट की आवाज में कह रहा था : हलो'''हलो'''हलो माया ! आई लव यू वेरी मच ! एक उपलब्धि, कुछ तो पा सकने का संतोष, एक छोटा-सा सहारा, झूठी-सच्ची आस्था की तरंगों में झूलता हुआ, खामोश कदमों से राजी दफ्तर से बाहर निकल गया।

और फिर हमेशा की तरह शुरू हुआ राजी के प्यार का सिलसिला। एक हलो के सहारे वह ख्वाबों के दरीचों में माया को सजाकर बिठाने लगा। एक गुमनाम मोहब्बत की खुशबू उसकी सांसों में, उसकी धड़कनों में पैठ चुकी थी। उसने माया के रुमाल, माया के स्केच, और हलो लफ़्ज़ के सहारे अपने चारों तरफ मोहब्बत का बवंडर खड़ा कर दिया था। राजी माया के रुमाल, माया के स्केच को न जाने कितनी-कितनी देर तक हसरत-भरी निगाहों से देखता रहता, कोरे कागज पर हलो लफ्ज को लिखता और चूम लेता।

दूर से ही वह प्यार-भरी निगाहों से माया के जिस्म के एक-एक कपड़े को उतार डालता और अंधेरी रातों में तसव्वुर के उतार-चढ़ाव में उससे प्यार करता। उसके संग रोता-हंसता। माया का उसने पीछा करना शुरू कर दिया था। उसके घर के सामने किसी पेड़, झुरमुट या झाड़ी में छुपकर, घंटों उसकी एक झलक देखने के लिए खड़ा रहता। दफ्तर में, कितनी बार माया की मेज के चक्कर लगाता और अक्सर योजनाबद्ध तरीके से उसके करीब जाकर हलो कहता, जिसके जवाब में माया गालों के गड्ढों तक महीन-मोहक मुस्कुराहट फैलाकर निहायत सलोने तरीके से हलो कह दिया करती। तभी राजी ने प्रेमपत्र लिखना शुरू कर दिया था। वह लिखता और फाड़ देता। लिखे हुए पत्र को फाड़ कर वह फिर लिखता। एक शब्द लिखता और फाड़ देता। सम्बोधन से आगे बढ़ने में उसे कई दिन लगे थे। कई दिनों के बाद, वह प्रेमपत्र का सम्बोधन, मात्र हलो तय कर पाया था फिर एक दिन उसने अपना प्रेमपत्र पूरा कर लिया। अपना प्रेमपत्र माया की

मेज पर एक फाइल के अन्दर रखकर वह माया के पत्र पढ़ने का इन्तजार करने लगा। तभी उसने देखा, माया ने वह फाइल, विना देखे ही, वाहर जाने वाले कागज की ट्रे में रख दी। इससे पहले कि चपरासी वह फाइल ले जाकर किसी को दे, राजी खन्ना ने वहाना वनाकर फाइल से अपना प्रेमपत्र निकाल लिया।

राजी मोहव्वत की जिस दर किनार गली से गुजर रहा था वह दफ्तर के लोगों की निगाहों से छिपा नहीं था। छित्तन वावू, और करीव-करीव सभी लोगों को उसकी हरकतों का पता लग चुका था। पहले तो वह सारे काम सावधानी से वचाकर किया करता था, लेकिन धीरे-धीरे एक तरह की लापरवाही उसके अंदर घर कर गयी थी। अपने अन्दर उठते हुए जजवात उसे मजवूर कर दिया करते और उसे इस वात का हिसाव ही नहीं रहता जो कव और कहां किस-किसने उसे क्या करते हुए देख लिया था।

छित्तन वावू का काम था आग लगाना और इन्होंने शवनम के मन में आग लगा दी। "राजी को छोड़ो, मैं कहता हूं शवनम, राजी छोड़ो," छित्तन वावू के यह अलफाज उसके जहन में तेज धार वाले छुरे की तरह सोख्ता-सोख्ता दफन यादों को काट चले थे। राजी को भूल जाना, उसे छोड़ देना, क्या इतना आसान था? उसके तसव्वुर में, उसके ख्यालों में हर वक्त वस राजी का नाम था। राजी के नाम की हरकत वार-वार, शवनम को गुदगुदाया करती। न जाने क्यों वार-वार उसका मन करता, वह दौड़कर राजी के पास चली जाये, उसके कदमों पर गिर पड़े, अपना जीवन, अपना सव कुछ उसे समर्पित कर दे। राजी उसकी दुनिया का वह हिस्सा वन चुका था जिसे जोड़ा तो जा सकता, लेकिन अलग नहीं किया जा सकता था। मन, शरीर और आत्मा तक समाया हुआ, वक्त के हर लमहे में वसा हुआ राजी, शवनम के लिए एक अजूवा ख्वाव वन चुका था। वह राजी को देखते-देखते, किसी अनजानी दुनिया में खो जाती, किन्हीं तनहाइयों में डूव चलती। राजी का ख्याल, उसकी चाहत जव इतनी प्यारी थी तो राजी कितना प्यारा होगा, इसका अहसास शवनम के अन्दर सुरसुरी छोड़ने लगता। उसने राजी के करीव जाने की वड़ी कोशिश की, उसे चाहा, उसे पूजा, लेकिन राजी तो न जाने किस दुनिया में खोया

हुआ था। वर्षों की तपस्या के बाद उसे एक लड़की, खुद-ब-खुद चाह रही थी, उसके करीब आने के लिए तड़प रही थी और तकदीर का खेल था जो राजी अनजान अंधेरों में भटक रहा था, उस माया के लिए जो उसकी नहीं बन सकती थी।

छित्तन बाबू शबनम के पास से उठकर दफ्तरी, चपरासी, भवानी बाबू और जूनियर रावत की मंडली में पहुंच गए। धीमी, चीखती हुई फुस-फुसाहट में, छित्तन बाबू शबनम की ओर, राजी की ओर और माया की तरफ, झटके देकर, हाथ फैलाकर, फूहड़ तरीके से, हवा बांधने लगे, "कयामत आने वाली है, बच्चू, इस दफ्तर में कयामत आने वाली है! इश्क का भूत सवार है, सबके ऊपर! शबनम मरती है राजी पर, राजी मारता है माया पर और माया मरती है, एम० डी० पर!" हो'''हो'''खी ई ई खी ही ही की आवाजों के बीच, किसी ने मुद्दा उठाया, "भोला'''और भोला को छोड़ गए, गुरु!"

छित्तन बाबू ने उछाल मारी, "अरे भोला! वह तो मरेगा'''खुद मरेगा स्साला देखना, कितना भी बेहया हो, रह सकेगा इस महौल में! भाग जाएगा किसी दिन सब छोड़कर।"

"क्या बात है, छित्तन बाबू, क्या मुद्दा पकड़ा है?" भवानी बाबू ने छित्तन बाबू को उठा दिया।

रावत की मंडली में अपना रंग जमाकर, अलमस्त अदा में छित्तन बाबू ने सिगरेट सुलगायी और मुट्ठी में दाबकर कश लेते हुए, वह अपनी मेज की तरफ पहुंचे ही थे, तभी दूसरी तरफ से आता हुआ राजी दिख गया। उन्होंने दूर से ही हाथ उठाकर, राजी को रोका और पास आते ही उसे ललकारा, "अरे राजी साब, क्या हुआ, कहां रह गए थे, भई?" तभी उनकी निगाह राजी के हाथ में दबे हुए एक पैकेट पर पड़ी, "अर्‌रे, यह क्या छिपाया जा रहा है, हमसे?"

"नहीं तो, कुछ भी तो नहीं है।" राजी ने बचने की कोशिश की।

"हम तो उड़ती चिड़िया पहचानने वाले हैं। क्या कुछ बताओ गुरु!"

राजी ने हारकर पैकेट छुपाना छोड़ दिया, "आपने देख तो लेकिन कहीं कहिएगा तो नहीं?"

"नहीं···कभी नहीं, उनके लिए है क्या ?"

"हां···उनके लिए स्कार्फ है, छित्तन वावू !" राजी ने धीरे से कहा।

"कोई खास मौका ?"

"नहीं तो।"

"फिर भी ?"

"आज उनकी वर्थ-डे है ना।"

"वाह···वाह, राजी साव, कितने गहरे हैं आप···जवाव नहीं··· आपका कोई जवाव नहीं।" छित्तन वावू जैसे झूला झूल रहे थे।

"न जाने क्यों छित्तन वावू, उनको देखकर वस दीवाना हो जाता हूं···सव कुछ टूटने लगता है।"

"उनका भी तो यही हाल है।"

"सच !" हल्की-सी चीख निकल गयी राजी के मुंह से।

"हां···सच, वस एम० डी० से छुटकारा दिलाना होगा।"

"क्यों ?"

"वच्चे हो अभी, अपने तजुर्वे से काम लो !" छित्तन वावू के स्वर में हिकारत थी।

"अच्छा !" राजी ने सहमत होते हुए कहा।

"तुम तो आज आए हो, मैंने तो शुरू से सव देखा है, जाना है।"

"मुझे तो लगता है उसे प्यार चाहिए···किसी ने उसे प्यार नहीं किया, उसे सहानुभूति की, प्यार की जरूरत है।"

"करेक्ट, टोटल करेक्ट !"

तभी एम० डी० साहव का चपरासी आ गया, "साव ने वुलाया है।"

"एम० डी० साव ने !" राजी ने चौंककर पूछा, "क्या वात है ?"

"साहव गर्म हैं···वहुत गर्म !"

"गर्म हैं···मेरे ऊपर !"

"और नहीं तो क्या मेरे ऊपर !" चपरासी हंसते हुए चला गया।

"घवड़ाना नहीं राजी साव, हम सव साथ हैं।" छित्तन वावू ने दिलासा दी। छित्तन वावू की वात का जवाव नहीं दिया राजी ने और एम० डी० साहव के केविन की तरफ चल दिया।

राजी के इश्क की चर्चा, दफ्तर के कोने-कोने में हो रही थी। टित्तन बाबू की लफ्फाजी, स्कैंडल उडाने का अंदाज, घुटी-घुटी फुसफुसाहट, चीखती हुई आवाजें, बवंडर की शक्ल में मंडरा रही थीं। हर रोज एक नया किस्सा, किसी न किसी नये अंदाज में शुरू हो जाता। ये तमाम बातें दफ्तर तक ही सीमित न रह सकी थीं। दफ्तर में आने वाले डाकिया, ठेकेदार, टैक्सी के मालिक, ड्राइवर, मिस्त्री, कारीगर और तमाम एजेंसी की सेवाएं हासिल करने वाले लोगों के जरिए, राजी का इश्क, राजी की मोहब्बत, अनगिनत रास्तों, दीवारों और घरों को पार करती हुई, शहर के कोने-कोने में जलती हुई आग की तरह फैल गई। बात सिर्फ राजी के इश्क की नहीं थी, उसमें जुड़ी हुई थीं, वे सारी कहानियां, वे सारे किस्से जो एजेंसी में, पिछली तीन पुश्तों में हुए थे। मधु की मौत, मधु के बाप के किस्से और माया और महेश मेहता उर्फ एम० डी० साहब के रिश्ते, जैसे नियति की डोर से बंधे-बंधे, एक समूची साजिश बनकर सामने आ गए थे। भोला की दयनीय स्थिति, उसके मटोरिए बाप का सौदा, माया के साथ स्कूल के माली का बलात्कार और फिर स्कूली लड़कों द्वारा माया के साथ सामूहिक बलात्कार, यह सभी सूत्र किसी-न-किसी तरह एक-दूसरे से जुड़े हुए, गर्म, सुलगते हुए अंगारों की तरह नयी, बेलगाम अफवाहों को जन्म दे रहे थे। और तभी शुरू हुआ था खतों का सिलसिला। बिला नागा, रोज दफ्तर में, माया के नाम एक खत जरूर आता। कभी-कभी तीन-चार चिट्ठियां आ जातीं। कोई माया को दिल देता, कोई जिंदगी ! किसी को रात में नींद नहीं आती, और कोई दिन-रात उसकी याद में तड़पता। कोई उसे नदी के किनारे बुलाता, कोई अंधेरी रात में, उसके कमरे में आ जाने की धमकी देता। माया एक नशा बनकर सबके ऊपर छा गई थी। उसका सुरूर, उसका प्रभाव सभी के दिलों को गुदगुदाया करता। नुमाइश में, जलसे में, होटल और रेस्टोरेंट में उसके नाम के रिकार्ड बजाये जाते। टेलीफोन पर माया की आवाज सुनकर, ठंडी-ठंडी सांस भरने के साथ, उसके चाहने वाले उसे अपनी बांहों में बुलाया करते, उसके होंठों को चूमने के लिए फ्लाइंग किस दिया करते, सीटियां बजाते।

धीरे-धीरे खतों की तादाद कम होने लगी, लेकिन फिर भी एक खत, खास तरह का एक खत तो जरूर आता। वह खत, खत नहीं होता बल्कि प्रोनोग्राफी की किताब का पन्ना होता। कभी-कभी उसके साथ नंगी औरतों की तस्वीरें होतीं तो कभी हाथ से बनाया हुआ स्केच। खत लिखने वाला, अपना नाम बस 'एक चाहने वाला' लिखकर छोड़ देता। हर खत में मिलने की तमन्ना थी, अकेले में लिपट कर प्यार करने की गुजारिश थी।

राजी जब केबिन का दरवाजा खोलकर, दबे पांव अंदर दाखिल हुआ, उस समय एम० डी० साहब पीछे की तरफ मुंह किए बैठे थे। केबिन का दरवाजा आटोमेटिक स्प्रिंग से धीरे-धीरे बंद होने लगा और जैसे दरवाजे के बंद होने की आवाज आई, एम० डी० साहब अपनी रिवाल्विंग कुर्सी को तेजी के साथ घुमाकर खड़े हो गए। उन्होंने होंठों के बीच दबे हुए पाइप को हाथ में लेकर मेज पर रख दिया। "यह सब क्या है'''वाट नानसेंस !" एम० डी० साहब के हाथ में माया के नाम आई हुई ताजी प्रोनोग्राफी किस्म की चिट्ठी थी !

"क्या सर ?" राजी ने हिम्मत करके पूछा।

"तुम'''राजी खन्ना तुम ! एक निहायत गिरे हुए, कमीने इंसान हो ! तुम आदमी हो या जानवर इसका भी पता करना होगा। तुम समझते हो '''क्या मुझे कुछ मालूम नहीं'''मैं सब जानता हूं'''आई नो आल''' क्या तुम्हें यह बताना होगा माया ब्याहता है'''शी इज मैरिड'''तुम्हारी इन बेवकूफियों का मतलब ? यह दफ्तर है'''दफ्तर !"

"सर !" राजी की कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था।

"माया मासूम है, अबोध है। तुम लोग अपनी गंदी, गिरी हुई हरकतों से उसका यहां आना बंद करा दोगे। लेकिन मैं ऐसा नहीं होने दूंगा।" "एम० डी० साहब ने चीखते हुए आगे कहा, "आज तुम्हें नोटिस मिल जाएगी'''गेट आउट फ्राम हियर, यू फूल, गेट आउट'''आई से गेट आऊट !" वह हांफ रहे थे।

एम० डी० साहब के केबिन से बाहर निकलते ही, छित्तन बाबू सहित दफ्तर के बाबू और चपरासियों ने राजी खन्ना को घेर लिया। उसके चेहरे पर मुर्दनी छाई हुई थी। एकदम, एक झटके से एम० डी० साहब ने उसकी

"चुप वे।" छित्तन वावू ने झिड़की दी।

"लेकिन दिल पर ताले लगा दें···आंखों में दरवाजे बांध दे ना।" राजी गुस्से में वोल रहा था।

"ऐसा ही है तो घर में रखो ना, छुपा लें सात पर्दों के पीछे, हम ना देखेंगे, ना कहेंगे।" छित्तन वावू ने दांव फेंका।

"भला इसमें एम० डी० को वोलना था···अगर एतराज करना हो तो भोला करे।" रावत ने फैसला कर दिया।

"यह तो दादागीरी···धींगामस्ती है सरासर।" दफ्तर के वावू ने टांग अड़ाई।

"ये राजी साव नादान हैं···भोले हैं···ये तो अभी आए हैं यहां और तुम सव जोकर हो···मैं जानता हूं···सव कुछ मैं जानता हूं।" छित्तन वावू ने झूलकर कहा, "माया को किसी से मिलने दिया है उन्होंने! उसके मासूम मन में नफरत के पलीते लगाए हैं एम० डी० साहव ने, वस अपने इर्द-गिर्द बांध कर रख दिया उसे!"

"यहां कौन राजी साव ने हमला कर दिया था।" पहला वावू वोला।

"हमला···कैसा हमला···कहां का हमला!" दूसरे वावू ने मसखरी में कहा।

दूसरे वावू की मसखरी पर सभी को हंसी आ गई। छित्तन वावू पहले तो कुछ क्षणों तक घूरते रहे और फिर उनके ऊपर भी हंसी का दौरा पड़ गया। वह पेट पकड़कर, काफी देर तक हँसते रहे। इतना काफी था, राजी को उतावला वना देने के लिए···कुर्सी पीछे खिसकाकर, वह उठकर खड़ा हो गया। वाहर निकलकर वह दो-एक कदम ही चला होगा, तभी उसके पैर लड़खड़ा गए और वह मेज की टेक लगाकर रुक गया। उसके तेवर देखकर सभी लोगों की हंसी रुक गई। सवके सव उसे तौलने लगे।

"हम एजेन्सी के मुलाजिम तो हैं···लेकिन एम० डी० साहव के घरेलू नौकर नहीं।" राजी गरज रहा था, "मुझे नोटिस देने को कहा है उन्होंने, कसूर क्या है मेरा? मन के अंधेरों में चुपके-चुपके जागती हुई रोशनी को रोक लेंगे वे···हमें गुलाम वनाकर रखेंगे,···आओ सव लोग चलते हैं···आज फैसला होकर रहेगा।"

"हां·· हां, चलो न ससुरो, रुक क्यों गए ? लड़का हिम्मत करेगा, तो हम पीछे रहेंगे भला।" छित्तन बाबू ने घोषणा की।

"लेकिन हमारा क्या है, हमने तो कुछ कहा नहीं है न।" पहले बाबू ने सवाल उठाया।

"मुझे तो मितली आ रही है।" कहकर रावत खिसकने लगा। उसके पीछे दूसरा बाबू, दफ्तरी और चपरासी भी चल दिए।

"भागो कुत्तो···भाग जाओ · तुम सब चकल्लस के लिए ही हो ना ···चलो राजी साब, हम चलते हैं आपके साथ।" छित्तन बाबू आगे बढ़ गए। राजी ने चलने के लिए जैसे ही कदम उठाया, वह फिर लड़खड़ा गया। छित्तन बाबू ने वापस लौटकर उसे गिरने से बचा लिया। तभी उनकी निगाह मैन्ड्रेक्स की गोलियों के पत्ते पर पड़ी।

"अरे राजी साब, ज्यादा ले ली थी क्या ?" गोलियों के पत्ते की तरफ छित्तन बाबू ने इशारा किया।

"नहीं···छित्तन बाबू, ये तो उनकी हरामजदगी पर थी···बड़ा गंदा लग रहा था, मुझे।" अपने को सभालकर एक झटका दिया राजी ने और तेजी से मेहता साब के केबिन की तरफ चल दिया।

रावत, भवानी बाबू, दफ्तरी और चपरासी का गुट राजी की मेज से खास दफ्तर की तरफ बढ़ा ही था, तभी सामने से, खाकी पेंट, दो जेब वाली बुशर्ट और चमड़े का झोला लिए हुए भोला आ गया।

"और लो···आ गए, दूल्हा राजा आ गए! भवानी बाबू ने झटके देकर कहा।

"अरे इन्हें क्या, ये तो चिकने हैं।" रावत ने चिपका दी

"चिकने नहीं···चिकने घड़े हैं।" भवानी ने जवाब मारा।

"घड़े हैं,···हां जी चिकने घड़े हैं···।"

रावत के कहते ही, हा, हा, ही, ही, हो, हो करके सब हसने लगे।

"आखिर है क्या ? कोई बोलेगा ?" भोला विषम परिस्थिति में फंस गया था।

"देखो···उधर देखो," राजी एम० डी० साहब के केबिन के अंदर घुस रहा था। उस तरफ इशारा करते हुए रावत ने कहा था।

"लेकिन क्या ?" भोला ने हड़बड़ाते हुए पूछा।

"अरे भोला, सच में तुम्हें कुछ पता नहीं ?···बिल्कुल गोबर हो क्या ···आखिर कैसे खसम हो···न इधर की खबर···न उधर का पता !" रावत ने मुंह बनाया।

"बको मत !" कह कर भोला छित्तन बाबू की तरफ बढ़ गया।

छित्तन बाबू, एम० डी० साहब के केबिन से लगे हुए खड़े थे, जब उनके पीछे, भोला आकर खड़ा हो गया। केबिन के अंदर से राजी के चीखने की आवाज आ रही थी।

वह चिल्लाकर कह रहा था—

"···आखिर, आपने, एम० डी० साहब, मुझे समझ क्या रखा है, मैं बेहूदा हूं···बत्तमीज हूं···आपने मुझे गाली दी···मुझे बेवकूफ कहा ! नौकरी से अलग करने की धमकी दी, मुझे केबिन से बाहर निकाल दिया ! माया पर मैंने कोई हमला तो नहीं किया। लेकिन यह सच है···हां···हां ···यह सच है, आई लाइक हर, आई लव हर ! दूसरों पर उंगली उठाने से पहले यह तो जान लिया होता, सर ! एक उंगली अपनी ओर भी इशारा ···ती है। अपने दामन से उठते हुए गन्ध के गुबार तो देख लिए होते। सारा दफ्तर, सारा शहर थू···थू करता है आपके ऊपर। न जाने क्या··· क्या कहते हैं लोग।"

"स्टाप इट ! आई से स्टाप इट !" एम० डी० साहब ने दहाड़कर कहा।

"स्टाप इट," राजी बिरा रहा था, "शुरू तो आपने किया था। अब यह खत्म नहीं होगा···चलेगा, दौड़गा। आप मेरा कर क्या सकते हैं ? नौकरी छीन लेंगे, यही ना ? काम करता हूं साब, काम ! भोला चौधरी की तरह खैरात नहीं लेता, देख लूंगा···मैं सबको देख दूंगा !"

"गेट आउट !" मेहता साब लगातार घंटी बजाते रहे। जैसे ही दौड़कर चपरासी आया, उन्होंने चीखकर कहा, 'थ्रो हिम आउट !"

लेकिन तभी राजी, दरवाजा खोलकर बाहर निकल आया जहां छित्तन बाबू उसका इन्तजार कर रहे थे। राजी को आता हुआ देखकर, भोला, पास में रखी हुई आलमारी के पीछे छुपकर खड़ा हो गया। उसने

सब कुछ सुन लिया था। उसका चेहरा सफेद पड़ गया था। माथे पर पसीने की बूँदें उभर आई थीं और उसके हाथ से झोला छूटकर जमीन पर गिर गया था।

उधर छितन बाबू, राजी का हाथ पकड़े हुए, दूसरे हाथ से उसकी पीठ ठोंकते हुए, हाल के किनारे तक ले गए उसे!

"शाबाश! राजी साब, शाबाश! आपने बेहद बाँध लिया है, तो हम पूरी तरह, आपके साथ हैं। हम भी पीछे नहीं रहेंगे। उस शाम भी थी, जब एम० डी० साहब उसे लाए थे। जवान होते हुए देखा है उसे! अरे देखा क्या है," हाथ नचाते हुए छितन बाबू ने कहा, "जवान किया है उसे। वह बेचारी करती भी क्या, उसने बरगला दिया उसे···उसके सामने पर डाल दिया और अब देखा नहीं जाता है। बात यहीं है बस···और कुछ नहीं!"

"मुझे तो यह बूढ़ा बदमाश लगता है।" राजी ने धीमी आवाज में कहा।

"और क्या···मैं तो दिल मसोसकर रह जाता था।" सीने पर झटका मारते हुए, छितन बाबू फैल गए, "लेकिन यार, सब कह डाला आज तुमने···और खुद वह डायलाग···वह सोचा चौधरी प्रेरणा को लेना है···क्या बात है, राजी साब···बिल्कुल शेर वाली डायलाग थी। बस जमा दी आज तुमने! जिंदगी-भर याद रखेगा साला, एम० डी० साहब का बच्चा!"

"छितन बाबू, दो टके की नौकरी के लिए, मैं अपने को बेचूंगा नहीं। अपने बारे [illegible] मैं अपने [illegible] तो उसकी सुनूंगा!"

"अरे [illegible]! [illegible] हुआ [illegible] एम० डी० भी तुम, [illegible] [illegible] था। लेकिन [illegible] पकड़कर पताना भी [illegible] लिया। और [illegible] इसने, पहले [illegible] भी [illegible] कर दिया।"

छितन बाबू ने [illegible] और [illegible], [illegible] बाबू, [illegible] [illegible] और

शवनम भी थी।

"छित्तन वावू, दिस इज नो गुड, ही शैल लूज जॉव !" शवनम ने तीखे स्वर में कहा।

"हू केयर्स, माई फुट !" राजी चीखा

"मैं तो कहती हूं, अभी मौका है, माफी मांग लो।"

"माफी ! मैं माफी मांगूंगा···मैं कोई भोला हूं मैडम !" राजी ने चिल्लाकर कहा, "मैं कोई भोला हूं।"

"हां जी ! अव माफी क्या मांगना !" भवानी वावू ने और आग लगा दी।

"नो···नो···माफी तो विल्कुल नहीं। कोई तो साला मर्द दिखा इस दफ्तर में। इधर भोला के आने के वाद सभी जनाने हो चले थे।"

"अरे···अरे···चुप करो, देखो तो भोला सुन रहा है।" छित्तन वावू ने रहस्यमय मुद्रा में कहा।

"भोला···हूं···सुनकर···करेगा क्या वेचारा ?" भवानी वावू के स्वर में दया थी।

"यू आर आल स्काउंडेल !" शवनम पैर पटकती हुई चली गई।

"अच्छा चलो, अभी तो सव लोग चलो, अपनी···अपनी सीट पर।" छित्तन वावू के इतना कहते ही, सभी अपनी-अपनी सीट की तरफ खुसर-पुसर करते हुए चले गए। राजी दफ्तर से वाहर जा चुका था। छित्तन वावू, मुट्ठी में सिगरेट दवाकर, कश पर कश लगाए जा रहे थे और साथ में भवानी वावू को अपने स्थित विश्लेपण से परिचित करा रहे थे। उधर माया की कुर्सी खाली थी, जिस पर निगाह डालकर छित्तन वावू ने जैसे ही भवानी वावू से कहा, "लगता है मन्थली कोर्स की वजह से आई नहीं।"

तभी न जाने कहां से निकलकर भोला सामने आ गया। भोला के चेहरे पर एक सोख्ता ठंडक, वर्फीली ठंडक थी···वर्फ की मजवूत सिल्ली की तरह, अपने अंदर तार-तार होती हुई नमी को वह सतही तख्ती में छिपाए हुए था। "छित्तन वावू !" वड़ी लाचारी से भोला ने कहा।

"छित्तन वावू की तो एक वार उसे देखकर जान सूख गई थी, लेकिन

जब उसे उन्होंने अपना नाम लेते सुना, तब जाकर कहीं उनकी जान में जान आई। "हां, भोला आओ···आओ न !" फिर भोला को भवानी बाबू की तरफ देखते देख उन्होंने कहा, "अच्छा भवानी, अब तुम जाओ, जाकर बैलेंसिंग कर लो, एम० डी० साहब के पास भेजनी है ना !"

"हां···हां, मुझे जाना चाहिए।" भवानी उठकर चला गया।

"आओ, भोला, बैठो ना !" छित्तन बाबू ने प्यार से कहा, लेकिन भोला बैठा नहीं। बस जरा और पास आ गया। लेकिन उसने कहा कुछ नहीं, चुपचाप दूर की तरफ शून्य में देखता रहा, जैसे अपने अंदर उबलते हुए, अनेक-अनेक सवालों में से कोई एक सवाल निकालकर उठा लेने की कोशिश में लगा था।

इस बीच छित्तन बाबू ने अपनी सिगरेट से दो-एक कश लगाकर सिगरेट को जूते से कुचल दिया। जिस जंगली तरीके से छित्तन बाबू ने बची हुई सिगरेट जूते से कुचली, उसे भोला देखता रहा था। उसे अपनी नियति कुछ कुचली हुई सिगरेट के टुकड़े सरीखी ही लगी थी।

"छित्तन बाबू !"

"हां भोला, कह डालो, मन में कुछ न रखो नहीं तो चुभेगा।"

"मैं वैसा नहीं हूं जो कसाई के बकरे की तरह मेंए ए मेंए करूं। जब हलाल होना था, हो गया ! लेकिन एक बात सिर्फ एक बात दहकते हुए अंगारे की तरह मुझे जला रही थी। मुझे आपसे कुछ पूछना था, बताएंगे ना ?"

"हां···क्यों नहीं !"

"सच···बिल्कुल सच ?"

"हां यार, पूछकर देखो ना !"

"बहुत बड़ी बात है, छित्तन बाबू, इसका कोई गलत जवाब न देना।"

"दस जूते मार लेना जो झूठ कहूं।" अपने दोनों कान पकड़कर छित्तन बाबू ने जिस समय यह कहा उस समय उनके चेहरे पर निहायत कमीनापन था।"

"तो यह सब सच है ?" भोला को खुद अपनी सख्त लेकिन धीमी फुस-फुसाहट जैसे बड़ी दूर से आती हुई सुनाई दी। छित्तन बाबू ने जवाब देने

के लिए मुंह खोला ही था, तभी उन्हें रोकते हुए उसने आगे कहा, "मेरी-आपकी कोई दुश्मनी तो नहीं है?"

"तोबा···तोबा···भोला ! अब तुमसे भला क्या दुश्मनी होगी !"

"तो फिर आपको···आपके बच्चों की कसम···सच बताना···बिल्कुल सच !"

छित्तन बाबू एक पल को अंदर तक कांप उठे, फिर भोला की जलती हुई निगाहों से अपने को बचाते हुए, दूसरी तरफ देखने लगे और तभी अपने को झटका दिया उन्होंने, जिसके साथ वह कंपकंपी, भोला की जलती निगाहों का प्रत्यारोपण छिटककर दूर चला गया, "हां भोला, तेरे साथ धोखा हुआ है !"

जैसे किसी तेज धार वाले औजार की तीखी काट से छटपटाते हुए··· आंखों में उबलते हुए आंसू रोकते हुए, दूसरे ही क्षण अस्फुट शब्द निकले भोला के कांपते होंठों से, "धोखा !" और वह चला गया।

भोला के चले जाने के बाद, एक पल को छित्तन बाबू स्तब्ध-से, निश्चल बैठे रहे। उन्हें लगा अनजाने में जैसे कोई बड़ा अपराध हो गया हो। लेकिन वह करते भी क्या, उनकी प्रकृति, उनका स्वभाव, स्वयं उनके ऊपर हावी हो जाता। उस समय अच्छा क्या था, बुरा क्या था, इसका फर्क कर पाने की क्षमता नहीं बची रहती उनके अंदर। ऐसे कुछ खास मौके होते जब उनकी रगों में दौड़ते हुए खून की रफतार तेज हो जाया करती, उनके दिमाग की जड़ें हिलने लगतीं, उनका रोम-रोम किसी तपती, सुलगती भट्टी की तरह जलने लगता और तब न जाने कौन-सी हिंसा उनके मन में जाग उठती। लाठी, बल्लम, बंदूक चलाना तो उन्हें आता नहीं, बस बातों की गोलियां दाग दिया करते। उन्हें लगा करता, दुनिया की हर चीज उनके खिलाफ है और अगर उनका बस चलता तो उस हर चीज को वह मिटा देना चाहते, जो उनके चारों तरफ मौजूद हो। आज से नहीं, हमेशा से ही, छित्तन बाबू ऐसे ही किसी मौके की तलाश में रहा करते, जब वह कहीं कुछ तोड़-फोड़ कर सकें। उनकी कुंठा, उनके अभाव, जीवन में सब कुछ उन्हें घट-घटकर ही मिला था। चाहते हुए भी जब वह कुछ न पा सके तो तरस-तरस कर जीते हुए, उनके अंदर काफी

दिनों पहले, एक खास तरीके की वहशियत जाग उठी थी। छित्तन बाबू की लड़ाई खुद अपने आप से थी, अपनी नियति से थी। फिर भी उनके अंदर, भोला को लेकर किसी खालीपन का अहसास करवट बदलने लगा, तो अपनी प्रकृति के विरुद्ध संघर्ष से बचने के लिए, छित्तन बाबू ने नई सिगरेट सुलगा ली और अपनी कुर्सी से उठकर, दफ्तर के दूसरे हिस्से की तरफ वह धीरे-धीरे गुनगुनाते हुए "मार कटारी मर जाऊंगी'''ओ बलमा, मार कटारी मर जाऊंगी" चल दिए।

तभी रावत ने उन्हें ललकारा—

"वाह गुरु मान गए'' लोहा मान गए।"

"क्या मान गए रावत के बच्चे!" बड़ी आसानी से छित्तन बाबू को वह निकासी मिल गई, जिसकी वह तलाश में थे। इसी निकासी के लिए ही तो उन्होंने 'मार कटारी मर जाऊंगी' गुनगुनाना शुरू किया था।

"एक तीर से तीन शिकार गुरु!" रावत ने तीन उंगलियां दिखाईं।

"तीसरा कौन गुरु?" छित्तन बाबू अब तक हल्के हो चुके थे।

"तीसरे हुए एम० डी० साहब! और कौन!"

"वो कैसे?"

"वो राजी को जब तक नोटिस देंगे, भोला खुद उनको नोटिस दे डालेगा। है ना, गुरुर ब्रह्म'''गुरुर विष्णु''"

"मेरा क्या, मेरा क्या है, जो दे उसका भला, जो न दे, उसका भला, सबका भला।"

"और माया का?"

"उसका तो सबसे पहले भला, सबसे आखिर में भला!"

"आओ गुरु चलते हैं।"

"कहां?"

"तीन टाक।"

"क्या बात है, आज इतनी मेहरबानी कैसे!"

"सच बताएं गुरु!"

"बोल बेट्टा बॉल!" छित्तन बाबू ने पुचकारते हुए कहा।

"आज लगा मुझे'''आपसे कुछ सीखना चाहिए। अगर यह लग्गा

वातों का यह अन्दाज कहीं मेरे पास होता, तो मैं कहां से कहां पहुंच गया होता !"

"तो श्रद्धा से पिलाएगा ना !"

"हां गुरु !"

"तो चल।" रावत का हाथ पकड़कर छित्तन वावू मस्ती में झूमते हुए बाहर निकल आए।

दफ्तर से लोग जा चुके थे, वस एक चपरासी, वाहरी दरवाजे के पास, स्टूल पर वैठा हुआ ऊंघ रहा था। उधर माया अपनी मेज पर नक्शा फैलाकर, मोटी, लाल, पीली, नीली पेंसिल से कुछ निशान लगाती जा रही थी। कुछ देर वाद माया ने पेन्सिलें रखकर नक्शा समेट लिया और एक फाइल उठाकर पलटने लगी। तभी उसकी निगाह, इतनी देर में, आकर खड़े हो गए राजी पर पड़ी। दोनों की निगाह मिली तो माया के चेहरे पर, पहले हल्की-सी शिकन आई और फिर साधारण वड़ी साधारण-सी मुस्कुराहट खेल गई, उसके चेहरे की गहराइयों तक। लेकिन राजी के ऊपर उस मोहक मुस्कुराहट की कोई भी प्रतिक्रिया नहीं हुई। वह तो गहरी चोट खाए हुए, किसी असीम मानसिक यातना से पीड़ित था। उसकी लाल-लाल आंखें दहक रही थीं, उसके वाल उलझे थे, कपड़े अस्त-व्यस्त और चेहरे पर ऐंठन थी। उसने माया को देखा···उसकी निगाहों के अन्दर तक··· गहराई तक पैठकर, कुछ देर देखता रहा। महज माया को देखते रहने तक की देर में, उसके चेहरे की ऐंठन दूर जा चुकी थी और आंखों की जलन दवने लगी थी। सिकुड़ती हुई पलकों का भार जैसे धीरे-धीरे हल्का होने लगा था।

कुछ देर चुपचाप देखते रहने के वाद राजी ने वड़े प्यार से कहा, "हलो !"

"हलो ! आप अभी तक गए नहीं !" माया ने खुश होकर जवाव दिया।

"नहीं···जानवूझ कर नहीं गया।"

"जानवूझ कर ?"

"हां, मैं तो सवके चले जाने का इंतज़ार कर रहा था।"

"सच में !"

"मुझे मौका चाहिए था···आई वान्टेड ए चान्स ! मिस माया !";

"मिसेज !"

"नेवर माइन्ड ! आई टेक यू एज मिस कोनली !"

"क्या, इतना आसान होता है सब ?"

"मेरे लिए तो कुछ भी आसान नहीं था, इट इज आलवेज डिफीकल्ट फार मी ! खैर, क्या एम० डी० साहब नहीं हैं ?"

"क्यों ?"

"ऐसे ही···मुझे कुछ कहना है।"

"क्या ?"

"यहीं या कहीं चल सकते हैं हम !"

"चल सकते हैं···लेकिन कहां ?"

"कहीं भी !"

"नहीं, पापा आएंगे···यहां लेने को मुझे !"

"कितनी देर में ?"

"दस मिनट तो लगेंगे !" माया ने घड़ी देखते हुए कहा, "फोन आया था उनका !"

"तो बैठ जाऊं मैं ?"

"श्योर !"

राजी बैठकर माया को प्यार की नजर से देखता रहा। माया ने शर्मा कर सिर झुका लिया। तभी राजी की आवाज दूर से जैसे बड़ी दूर से सुनाई दी, "कैसे कहूं···लगता है, आप न जाने क्या सोचें··· मुझे किसी और की परवाह नहीं, बट आई केयर फार यू।"

माया बस पेन्सिल से कुछ लकीरें बनाती रही।

तभी राजी ने उसके हाथ के ऊपर अपना हाथ रख दिया। [illegible] रहा है···बड़ी दूर से आया हूं···न जाने कितनी चढ़ाई··· [illegible] पगडंडियों पर गिरते···पड़ते यहां तक पहुंच पाया हूं। और [illegible] हिम्मत नहीं बच पाई है। उधर नीचे देखता हूं तो [illegible] कितनी गहरी ··भयानक खाई नजर आती है।" [illegible] की तरफ देख रही थी। "यह सब इतना आसान नहीं है···। [illegible]

आगे बढ़ाई, "यह तो मुझे पता था, लेकिन लोग इसे इतना मुश्किल बना देंगे···यह मैं नहीं जानता था। अब सबको मालूम हो गया है, तब मैं भी चुप नहीं रह सकता। आई लव यू ! आई लव यू वेरी मच। माया ! मैं तुम्हारे बिना जी नहीं सकता !"

माया अपने होंठ काटने लगी। उसकी सांस, उसकी धड़कन तेज होने लगी थी। "वैसे तो, इस तरह, शायद मैं कभी कह नहीं पाता···कभी नहीं। बस चुपके-चुपके···तुमको ख्वाबों के दरीचों में सजाकर चाहता···प्यार करता···लेकिन अब शायद मुझे यहां से जाना होगा···चले जाना होगा। और चले जाने से पहले···" राजी चुप हो गया था। माया ने आगे की बात जानने के लिए नादानी से पलकें उठाईं, फिर सब कुछ समझकर उसने नजर नीचे झुका ली, जैसे उसका इतना कुछ जान लेना काफी था।

"हां···चले जाने से पहले एक बार···सिर्फ एक बार···" माया को लग रहा था वह बैठी हुई तो थी लेकिन उसके नीचे से जमीन घूमने लगी थी, तभी राजी ने आगे बढ़कर उसे चूम लिया और फिर कहा, "माया, जीवन में पहली बार मैंने सब कुछ···अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया था।" माया के लिए यह सब इतना अप्रत्याशित था, इतना अचानक था, जो कुछ क्षणों तक वह चुपचाप ठगी-ठगी खड़ी रही, उसके चेहरे पर अनेक रंग बदलते-उतरते रहे और फिर हया के मारे उसने गर्दन झुका ली थी। तभी वह आगे बढ़ने के लिए चली, तो राजी ने उसे रोक लिया—"नहीं माया, इस तरह नहीं, मुझे मेरे सवालों का जवाब चाहिए। फिर एक सवाल होता तो यहीं जवाब मांग लेता, लेकिन मेरे सामने तो अनेक-अनेक सवालों की कतार खड़ी है, और उनके चक्रव्यूह में मैं उलझता जा रहा हूं। माया ! मुझे वक्त चाहिए वक्त···चले जाने से पहले बस थोड़ा-सा वक्त, जब मैं अकेले में सब कुछ कह दूं···सब कुछ जान लूं···प्लीज माया ! प्लीज !! आई वान्ट टु बी वेडेड मेन्टली एटलीस्ट !"

"आई० एम० ऑलरेडी वेडेड !" माया ने धीरे से कहा।

"नहीं···नहीं···वैसे नहीं ! मुझे मालूम है।" राजी ने छटपटाते हुए कहा, "मैं कैसे बताऊं···! ओ गॉड ! मुझे एक मौका दो, माया···सिर्फ एक बार ! जितना मैंने चाहा है तुम्हें, जितना प्यार किया है, उतना शायद कोई

तुम्हें प्यार नहीं करेगा, माया ! ट्राय टु अन्डरस्टेन्ड मी !" माया मेज के घेरे से बाहर निकल आई, तब राजी भी उठकर खड़ा हो गया, "क्या अच्छा नहीं लगा तुम्हें !" माया को कोई भी जवाब सूझ नहीं रहा था। "मेरा मन ···बड़ा अकेला है, मेरा मन ! जिस पहले दिन मैंने तुम्हें देखा था, बस उसी दिन से, हजार-हजार सुइयों की कसक घुसकर पैठ गई थी···और जिस दिन तुमने हलो कहा था, पहली बार, उस दिन मेरे अन्दर दौड़ते हुए खून के कतरे-कतरे में एक अनजाना अपनापन और उससे जुड़ा हुआ अधी दलानों का खालीपन उठकर बैठ गया था। मैं नहीं जानता, अच्छा क्या है, बुरा क्या, लेकिन इतना मैं जानता हूं" तुम ब्याहता हो, इसका पता शुरू में मुझे नहीं था और जब तक मैंने यह जाना बड़ी देर हो चुकी थी, माया ! बड़ी देर हो चुकी थी, बड़ी दूर आ चुका था मैं···"

तभी बाहर कार का हॉर्न बजा जिसके साथ माया बाहर जाने के लिए बढ़ी, लेकिन राजी की तड़प, उसकी लाचार निगाहों को देखकर वह रुक गई। राजी ने आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़कर जैसे ही कुछ कहना चाहा, बाहर से चपरासी दौड़ता हुआ आया। चपरासी के आ जाने से माया ने एकाएक अपना हाथ छुड़ा लिया। चपरासी ने कुछ दूर पर रुककर माया से कहा, "साहब···" चपरासी की बात माया ने काट दी, "तुम चलो, मैं आ रही हूं।" उसने मेज के ऊपर रखा हुआ अपना पर्स उठा लिया और दौड़कर, चपरासी के पहुंचने से पहले, बाहर पहुंच गई। राजी लाचार सा···बुझा··· बुझा, बस हसरत-भरी निगाहों से उसे चले जाते हुए देखता रहा। कुछ क्षणों तक यूं ही खोया-खोया खड़े रहने के बाद, एक लम्बी सांस निकालकर उसने जेब में रखा हुआ एक पत्र निकाल लिया। उस पत्र को उसने माया की मेज पर रखी हुई एक फाइल के बीच में रख दिया। फाइल बन्द करके उसने उसी जगह पर रख दी, जहां से उठाई थी और उसी रास्ते से बाहर निकल गया, जहां से माया गई थी।

इतमिनान कर लेने के वाद उस फाइल को उन्होंने उठा लिया जिसके अन्दर राजी ने माया के लिए पत्र रखा था। फाइल खोलकर उन्होंने पत्र निकाल लिया और वाहर की तरफ चलने लगे, तभी कुछ याद आने पर, वह मेज पर वापस लौट आए। अव तक वह पत्र उन्होंने जेव में रख लिया था, जिसे निकालकर, वापस फाइल में रख दिया। कुछ अनिश्चितता की स्थिति में छित्तन वावू सोचते हुए खड़े रहे, जैसे वह हिसाव वैठा रहे थे, गणित निकाल रहे थे। मन के भ्रम को दूर करने में उनको ज्यादा समय नहीं लगा। उनकी निगाहें एक वार फिर दफ्तर के चक्कर लगाने लगीं। जैसे ही उनकी नजर एम० डी० साहव के केविन के ऊपर पहुंची, उन्होंने फैसला कर लिया। अगले क्षण, विना सोचे-समझे, उन्होंने फाइल उठा ली और खामोश कदमों से एम० डी० साहव के केविन के अन्दर चले गए। कुछ देर वाद छित्तन वावू केविन से वाहर निकले तो उनके हाथ में फाइल नहीं थी।

एम० डी० साहव को उस दिन शाम की फ्लाइट से दिल्ली जाना था। उन्होंने जरूरी कागज, फाइल वगैरा ब्रीफकेस में रखने के वाद माया को । माया जैसे ही केविन में दाखिल हुई, एम० डी० साहव ने कागजों देखना छोड़ दिया।

"माया, अच्छा होगा···कुछ दिनों के लिए तुम दफ्तर से छुट्टी ले लो!"

"क्यों···पप्पा?"

"मुझे दो-चार दिन के लिए दिल्ली जाना पड़ेगा!"

"कव पप्पा!"

"आज···और कव!"

"मैं भी चलूंगी।" माया ने मचलकर कहा।

"अरे तुम," एम० डी० साव ने हंसते हुए आगे कहा, "वहां तुम क्या करोगी?"

"आपके सेक्रेटरी का काम!"

"मेरी तो वस दौड़ रहेगी···इधर-से-उधर···कई मीटिंग लगी हैं··· आई शैल वी वैरी विजी!"

"ओ पप्पा, आप तो···मुझे ले जाना नहीं चाहते हैं···ना ?"

"नहीं···ऐसा नहीं है···लेकिन···।"

"तो ठीक है···फिर मुझे छुट्टी लेने को क्यों कहते हैं भला ?"

"दफ्तर का माहौल ठीक नहीं है, ना ! मेरे लौट आने तक तुम्हारा यहां आना ठीक होगा···यही सोच रहा था मैं।"

"लेकिन मुझे रिपोर्ट बनानी है···डेलीगेशन का टूर साइन अप करना है जो।"

"ओह !" एम० डी० साहब ने समझ कर कहा।

"डोन्ट वरी पप्पा। मैं तो शबनम के साथ रहूंगी ना।"

तभी टेलीफोन की घंटी बजने लगी, एम० डी० साहब ने फोन उठाकर कहा, "हलो···हां···।"

"हां···हां !"

"ओ० के०···मैं अभी आता हूं।" कहकर उन्होंने फोन रख दिया और माया से बोले, "अभी···मुझे अभी जाना होगा, ऐसा करो, तुम अपने पेपर्स ले आओ और जब तक दिल्ली से लौटकर न आ जाऊं···यहीं मेरे केबिन में बैठकर काम करना। अब शायद तुमसे मिल नहीं सकूंगा··· मीटिंग से सीधे एअरपोर्ट जाना होगा।" जल्दी में एम० डी० साहब ने अपना ब्रीफकेस खोला और उसमें मेज पर रखी जरूरी फाइलें भर लीं और माया से कहा, "टेक केअर आफ योरसेल्फ ! गुड बाय ! एण्ड गुड लक !"

"गुड लक पापा ! फोन करियेगा !"

"श्योर···बाय !"

"बाय !"

एम० डी० साहब के चले जाने के बाद, माया अपने पेपर्स लेकर वहीं केबिन में काम करने लगी। तभी शबनम एक टाइप किया हुआ लेटर लेकर केबिन में आई।

"अर्‌रे दीदी ! तुम यहां हो !"

"शबनम तुम···तुम कब आईं ?"

"अभी तो।"

"आओ बैठो ना !"

"आप बिजी हैं और एम० डी० साहब !"

"अरे बैठो भी···पप्पा तो दिल्ली गए।"

कुर्सी पर बैठते हुए शबनम ने कहा, "राजी आपको पूछ रहे थे।"

"अच्छा···लेकिन क्यों।" माया ने चहकते हुए कहा।

"पता नहीं, आपकी मेज पर फाइल देख रहे थे, कोई कागज था उसमें।"

"फाइल···कागज?"

"कोई लेटर·· शायद उनका लिखा हुआ आपके नाम हो या फिर !" शबनम ने मटकते हुए कहा।

"लेटर···मेरे नाम···लेकिन मुझे तो मिला नहीं। क्या था···क्या लिखा था उसमें ?"

"नो आइडिया···"

"अरे शबनम···ये तुम्हारा राजी बड़ा नर्म है···बड़ा सीधा है।"

"वाह दीदी···वाह···चलो कोई तो मिला, जिससे डर नहीं लगता।"

"सच में ! उससे डर नहीं लगता !"

"फिर तो ठीक है।"

"लेकिन मुझे क्या है ?"

"बस दीदी···यही बात आपकी मुझे लग जाती है। आपका यह न्यूट्रल एटीट्यूड···जहां कुछ गुड है···अच्छा है·· आप चुप रह जाती हैं और सब जगह तो आपको डर लगता है।"

"क्या है, शबनम ! इतनी लम्बी बीमारी के दौर से गुजर चुकी हूं··· जो अच्छा-बुरा किसी अहसास तक से डर लगता है। उसे मान लेने की डिजायर तक मुझे लड़ते रहना पड़ता है।"

"ऐसा नहीं है जो मैं कोई राय दे सकती हूं, लेकिन फिर भी इतना कहना है मुझे, यू शुड टेक थिंग्स ऐज दे आर !"

"थिंग्ज आर नाट ऐज दे लुक !"

"दे लुक ऐज यू आर !"

"चलो ऐसा मान भी लो···तब भी मैं कुछ और सोच सकूं···इस

स्थिति में, मैं हूं कहां !"

"सोचना कुछ कम करो, दीदी !"

"पप्पा भी यही तो कहते हैं। अभी कह रहे थे, कहीं बाहर चलने को।"

"बाहर चलने को ?"

"हां, दिल्ली से लौटकर जस्ट फार ए चेंज !"

"कहां···कुछ सोचा है ?"

"मैं तो शिमला जाऊंगी या फिर कुल्लू !"

"कुल्लू !" शबनम ने हंसोड़ा मुंह बनाया।

"तू भी चलेगी ?"

"मैं···मैं भला क्या करूंगी ?"

"क्या करेगी तू," चिढ़ाते हुए, "मनोरंजन, और क्या !"

दोनों मनोरंजन शब्द पर हंसने लगीं और काफी देर तक हंसती रहीं। फिर एक-दूसरे को देखकर और जोर से हंसने लगीं। तब शबनम ने··· कुल्लू कहा, जिससे दोनों की हंसी और बढ़ गई। जैसे हंसी का दौरा पड़ गया था उनको।

तभी केबिन का दरवाजा खोलकर भोला चौधरी अंदर आ गया। भोला के चेहरे पर एक तनाव था, माथे पर सिकुड़न, उलझे बाल, लाल-लाल आंखें, गंदे कपड़ों में उसका हुलिया भयानक लग रहा था। उसके चुपचाप अंदर आ जाने से दोनों में से किसी ने भी उसे देखा नहीं था। भोला चौधरी उन दोनों को हंसते हुए···लगातार हंसते हुए देखता रहा लेकिन इससे उसके चेहरे का तनाव और खूंखार सहज में बदल गया। तभी शबनम की निगाह भोला के ऊपर पड़ी और उसकी हंसी गले में अटक गई। माया उस समय मुंह दूसरी तरफ किए हुए हंस रही थी जिससे शबनम की हंसी रुक जाने पर उसने एक बार धीरे से कहा, "कुल्लू ! अरी रुक क्यों गई कुल्लू !" फिर जवाबी हंसी का दौर न पाकर उसने आश्चर्य से शबनम की तरफ देखा। फिर उसका खुला हुआ मुंह और उसे दूसरी तरफ देखते हुए देख उसने भी अपनी नजर उधर ही घुमाई जिधर शबनम देख रही थी। और तब उसने भोला को देखा। माया की हंसी का दौर रुक चुका था। वह भोला के चेहरे के तनाव को देखकर खामोश हो··· थी

जैसे एकदम से रुकी हुई हंसी की रेखाएं उघड़कर गिर पड़ी थीं ।

"एम० डी० साहब कहां हैं ?" भोला ने सख्त आवाज में पूछा ।

"कौन पप्पा···वो···वो तो······।

"पप्पा···पप्पा···खूब···वाह···वाह, क्या नाटक करती है, कमाल का ड्रामा है !" भोला का चेहरा घृणा से सिकुड़ गया ।

"ड्रामा !" माया ने हैरत में कहा ।

"हां···हां···ड्रामा।" चीखते हुए···"एक निहायत गिरे हुए कमीने आदमी से और क्या उम्मीद की जाती···लेकिन तुम्हें···तुम्हें तो सोचना था···व्याहता हो, शादीशुदा हो।" माया ने शबनम की ओर देखा। "उधर क्या देखती हो।" भोला चिल्लाया, "देखना है तो मेरी आंखों में झांककर देखो···आज इतना कुछ जान लेने के बाद भी जिंदा हूं···दहकते हुए अंगारों पर लोटते हुए अपने अरमानों की खाक मुट्ठी में बन्द करके लाया हूं···तो सिर्फ यह कहने के लिए···तुम फाहशा हो ! जब मैं आता हूं, तो तुम्हें डर लगता है न ! अपने, मेरे साथ हुए खुफिया समझौते का ···ता। देती हो और उधर खुल्लम-खुल्ला उस छोकरे राजी के साथ इश्क की ·। बढ़ाती हो। चाहिए भी क्या तुम्हें माया और चाहिए भी क्या, कितना खरा, कितना परफेक्ट अरेन्जमेंट है तुम्हारा ! रात में पप्पा और दिन में राजी। क्यों···आखिर क्यों, मुझे क्यों फंसाया तुम लोगों ने···मैंने क्या बिगाड़ा था किसी का ? अगर एम० डी० साहब के साथ तुम्हारा गंदा, नापाक रिश्ता था, अगर राजी के साथ तुम्हें इश्क करना था, तो बीच में मुझे क्यों डाला···बोलो, इस सारी योजना में, मैं कहां आता हूं ?"

माया का चेहरा सफेद पड़ता जा रहा था, तभी शबनम उसके पास आकर खड़ी हो गयी, "स्टाप इट नाव, स्टाप इट, फार गाड सेक स्टाप इट !" शबनम भोला से भीख-सी मांग रही थी ।

"स्टाप इट !" भोला चिढ़ा रहा था, "अब सबको बुरा लग रहा है, ना! बुरा काम किया, तब ! मुझे फांसकर बलि का बकरा बनाया, तब ! मुझे उल्लू बनाया, तब ! मेरी बीबी बनकर मेरे साथ दगा की, तब ! मुझे बीच में डाला, तब ! मुझसे शादी की, तब ! बुरा नहीं लगा था !" भोला हांफने लगा था ।

केबिन के बाहर भीड़ हो चली थी। छित्तन बाबू दरवाजा खोलकर झाँक रहे थे। और लोग उनके पीछे खड़े थे। सभी के चेहरों पर असीम उत्सुकता थी, नये भेद जान लेने की खुशी थी। "हाँ, मेरी जरूरत थी ना, तुम लोगों को!" जरा देर रुककर भोला ने धीमी लेकिन सख्त आवाज में फिर कहना शुरू कर दिया—

"एम० डी० साहब को और शायद तुमको भी! लेकिन मेरे जैसा एक फर्जी खाविन्द खड़ा किया जाय, यह आइडिया, यह स्कीमिंग उनकी थी। अपने कुकर्मों को छुपाने के लिए…मेरा जैसा एक गधा चाहिए था! अरे कोई देखने वाला है!" भोला चिल्लाया।

"यह मेरी बीवी है, सी इज माय वाइफ और मैं…मैं…इसे छू नहीं सकता…आई जस्ट कान्ट टच हर!"

रुंधे हुए गले से थकी हुई आवाज में माया ने कहा, "ले चलो मुझे यहाँ से, किसने रोका है?"

"हाँ ले चलो यहाँ से!" हाथ मसलते हुए, तड़पते हुए, दीवार पर माथा पटकते हुए भोला सुबकते हुए कहने लगा, "जानती है यह बदजात! अच्छी तरह जानती है यह, जो मैं लेकर नहीं जा सकता…दो सौ रुपये की नौकरी है, रहने के लिए घर कहाँ से लाऊँ! लाज के कमरे में, जहाँ रहता हूँ, मुस्टन्डों का अड्डा रहता है, सब साले दारू पीकर धुत पड़े रहते हैं…ऐसी जगह, जानती है यह मैं नहीं ले जा सकता…रख नहीं सकता।" केबिन के अन्दर झाँकते हुए लोगों की तरफ घूमकर उसने आगे कहा, "एम० डी० साहब मुझे पाँच सौ की नौकरी दिलवा सकते थे, रहने के लिए अच्छा फ्लैट ले सकते थे मेरे लिए, लेकिन नहीं किया, उन्होंने यह सब नहीं किया, क्योंकि तब चिड़िया उनके हाथ से उड़ जाती और मेरी बीवी मेरे साथ रहने लगती ना!"

"मुझे जाने दो…प्लीज…प्लीज…" माया को आगे बढ़ते देखकर भीड़ छँटने लगी।

तभी भोला ने आगे बढ़कर माया के कंधे पकड़ लिए और उसे झक-झोरते हुए बोला, "नहीं सुना जाता है ना, मुझसे भी नहीं सुना जाता दिन-रात यही सब तो सुनता रहता हूँ। लेकिन आज तुम यह

मेरे साथ अब कोई खुफिया समझौता नहीं चलेगा। अब मैं तुम लोगों को ऐसा सबक सिखाऊंगा जिससे आने वाले वक्त में कोई बड़ा आदमी, कोई पैसे वाला, किसी लाचार, बेसहारा नौजवान की ओट में अपनी हवस का शिकार नहीं खेलने पाएगा। आई शैल टीच यू ए लेसन···ए लेसन फार लाइफ ! यू चीट···एण्ड दैट बास्टर्ड आई शैल सी हिम आलसो !" भोला भीड़ को चीर कर बाहर निकल गया, जिसके साथ केबिन का दरवाजा बंद करके दफ्तर के लोग भी खिसक गए।

भोला के जाने के बाद केबिन का दरवाजा बंद हो गया। अंदर थर-थर कांपती हुई माया को बेहोशी का दौरा पड़ने लगा था, जब शबनम ने उसे वहीं बड़े सोफे पर लिटा दिया। एम० डी० साब की मेज से पानी का गिलास उठाकर, शबनम माया के पास फिर आ गई। पहले उसने अपने पर्स से रूमाल निकाला, फिर उसे पट्टीनुमा बनाकर गीला किया और माया के माथे पर रख दिया। कुछ देर बाद माया ने आंखें खोलीं, तब उसे उठाकर शबनम ने पानी के दो-चार घूंट पिला दिए। तब तक शबनम ने सोफे पर एक कुशन रख दिया था। माया सोफे पर लेट गई। इस बीच वह चुप···बिलकुल चुप जैसे किसी खामोश गुफा में बन्द हो चुकी थी। वह फटी-फटी निगाहों से, एकदम सीधी लेटी हुई छत की तरफ देख रही थी। उसके बदन में कोई हरकत नहीं थी। बस कभी···कभी धड़कन···सांस तेज हो जाने पर, उसकी छातियां उठती-गिरती थीं। उसके चेहरे पर एक दहशत थी, कुछ दबा हुआ जहर में बुझा हुआ एक अनजाना खौफ उसके अंदर तक की सतह में घुस कर बैठ गया था। तभी उसके बदन में कुछ हरकत देखकर, शबनम पास की कुर्सी से उठकर, उसके करीब आ गयी। एक पल को दोनों की निगाहें मिलीं। माया जैसे कोई सहारा ढूंढ़ रही थी। शबनम की आंखों में पहचान थी, जिसकी वजह से उसकी निगाहें शबनम की आंखों पर टिकी रहीं और उनमें आंसू छलक आए··· उसकी पलकें गीली हो गईं। शबनम भी अपने को रोक नहीं पाई और फिर दोनों रोने लगीं। धीरे-धीरे उठती हुई ठुमक और अंदर ही अंदर टूटती हुई हिचकी को रोके रखने में उसके दोनों हाथों की मुट्ठियां भिंच गईं। फिर माया के फफक-फफक कर रोने के साथ, शबनम से भी चुप

नहीं रहा गया और उसने आगे बढ़कर माया को गले लगा लिया। उन दोनों के रोने की आवाज एम० डी० साब के केबिन में गूंज बनकर उठने लगी। दोनों कुछ देर तक यूं ही, एक-दूसरे से चिपटकर रोती रहीं। तभी बहते हुए आंसू पोंछते हुए माया ने भारी आवाज में कहा, "पप्पा, शबनम, पप्पा को बुलाओ!"

अपने आंसू पोंछते हुए शबनम ने सवाल किया, "कहां होंगे भला?"

"टूरिस्ट डिपार्टमेन्ट में, एअरपोर्ट या कहीं भी, थास्क हिम टु कम थैंक!

कुछ रुककर वह पुनः बोली—"मुश्किल होगा ना! फिर भी एक बार देखो ना, आय नीड हिम रिअली!"

"यस रियली!" कहकर शबनम बाहर चली गई।

माया के दिमाग पर धुंध की गहरी काली छाया बड़ी तेज रफ्तार से आती और गुजर जाती। वही अनजाना डर, वही पुराना खौफ जो माधव ने दस साल की उम्र में उसके अंदर डाल दिया था, उठकर बैठ गया था। चेहरे नए थे, जगह नई थी, माहौल दूसरा था, लेकिन और सब कुछ वैसा ही था। उसे लग रहा था, वह खौफ··· उसी भयानक शक्ल में बार-बार उसके करीब आकर उसे डकार जाना चाहता था। जैसे ही उस खौफ के करीब आने का अहसास उसे होता, उसका दम घुटने लगता और जब वह दूर जाने लगता तब उन लमहों के लिए उसकी सांस में एक नमी-सी आ जाती, कुछ आराम मिल जाता उसे!

कुछ ही देर बाद शबनम अंदर लौट आई। "दीदी! एम० डी० साब तो मिले नहीं, हां उनके लिए एअरपोर्ट पर मेसेज छोड़ दी है, वो फोन करेंगे। ही इज बुक्ड इन द फ्लाइट!"

"शबनम! लगता है, पप्पा से अब मुलाकात नहीं होगी।"

"ऐसा नहीं कहते, दीदी!"

माया चुपचाप शून्य में देखती रही।

"दीदी, चार बजे हैं, सैटर्डे, है ना! दफ्तर से सब लोग जा चुके हैं, आप जाएंगी घर?"

"घर···नहीं," माया के मुंह से हल्की-सी चीख निकल गई, "वहां

फिर आएगा वह ! कैसे फेस करूंगी मैं ! तू भी चल ना !"

"श्योर दीदी ! पर उससे पहले मुझे अस्पताल जाना है। मम्मी एडमिट हैं ना ! गाड़ी तो है नहीं, उधर से दूर पड़ेगा मुझे और फिर विजिटिंग आवर्स खत्म हो जाएंगे···या फिर आप भी चलो मेरे साथ !"

"मेरा इस वक्त कहीं जाने का मूड नहीं है···पप्पा के केबिन में हूं···बड़ा सेफ लग रहा है। फिर पप्पा फोन करेंगे ना !"

"ओ० के० फिर मैं हास्पिटल होकर आती हूं ! आप यहीं रुकेंगी तो ?"

"हां ! कितनी देर लगेगी तेरे को ?"

"एक घंटा, टोटल!"

"ट्राय टु मेक इट अर्ली।"

"ओ० के० !" शबनम ने पर्स उठाया और केबिन के दरवाजे तक जाकर जैसे ही हैन्डल घुमाने के लिए उसने हाथ बढ़ाया उसे माया की थकी हुई आवाज सुनायी दी—

"जल्दी आना शबनम ! कहीं देर ना हो जाए !"

"डोन्ट वरी, आई शैल बी क्विक एण्ड फास्ट !" केबिन खोलकर शबनम बाहर निकल गई।

सात

महेश मेहता न जाने कब के मर चुके होते। वह जिंदा थे तो बस इसलिए कि माया के कातिल को सजा हो जाए। माया की हत्या करने वाला कौन था ? उसने माया को क्यों मार डाला ? वह कौन-सी कमी थी जिसे वह पूरी नहीं कर सके थे ? कहां से ढूंढ़ कर वह लाते वह रोशन जिन्दगी का उनमान जिसने न जाने कितने पर्त-दर-पर्त ढके अंधेरों को चीरकर उजाले में बदल दिया था ! एक पूरी—समूची जिन्दगी जिसे ढोकर वह खींच रहे थे, माया के साथ जुड़कर इतनी तेज रफ्तार में दौड़ी

थी कि कब उनको ठोकर लगी, यह भी वह नहीं जान पाये थे। भूले-बिसरे रास्तों को पलटकर भी नहीं देखा था उन्होंने और किसी आसमानी उड़ान में वह चले थे वह। चारों तरफ रंगीन सितारों की दुनिया थी, गर्माहट थी और था कभी न समाप्त होने वाला खुशियों का दौर। टूट-टूट कर जीने वाले महेश मेहता एक समूची शख्सियत के मालिक बन चुके थे। उन्हें इस बात का अहसास होने लगा था कि उनकी जिन्दगी किसी नाकारा बदशक्ल, बदनुमा दायरे का हिस्सा नहीं बल्कि खुद में एक दौर थी। वह ऊंचाई, वह गहराई, उस धरातल का बार-बार उन्हें अपने पास खींच लेना जैसे किसी खुदाई करिश्मे का हिस्सा था, अब यही कुछ नहीं बचा था तब माया किसी फरिश्ते की तरह उनकी जिंदगी में आई थी। माया ने किसी खूबसूरत ताने-बाने में उन्हें बुन डाला था, जहां हर धड़कन, मचलती हुई महकती हुई खुशियों की चीज बन गई थी। उम्र की दहलीज, मौत की कगार लांघकर भी वह निकल आए थे। माया ही तो था वह नाम जिसकी असीम ताकत के सहारे अस्पताल और बीमारी से संघर्ष किया था उन्होंने। उन दिनों उन्हें यही लगता था जैसे सारी-समूची दुनिया में उन्हें कोई भी पराजित नहीं कर सकता था, ईश्वर भी नहीं, मौत भी नहीं। लेकिन कभी पराजित न होने वाले महेश मेहता उस एक बार जैसे अपना सब कुछ हार बैठे थे, खो बैठे थे। वह धरातल ही टूट गया था, जिस पर वह खड़े थे, वह इनसान ही बिखर गया था, जिसने उनकी जिन्दगी में रोशनी फैलायी थी। एक थके हुए, हारे हुए जुआरी की तरह उनके पास दांव पर लगाने के लिए कुछ भी नहीं बचा था। कत्ल माया का हुआ था, लेकिन उन्हें लगा था, मार वह डाले गए थे।

उन दिनों महेश मेहता एक जिन्दा लाश की तरह अपने आलीशान बंगले में रात की तन्हाइयों में माया की यादों को सीने से चिपकाए हुए भटकते रहते। माया के कपड़े, उसका बिस्तर, उसकी अनगिनत चीजों को बस सीने से लगाये हुए मन-ही-मन सुबक-सुबक कर रोया करते। र
वहीं आकर पता लगा था वह कितने कमजोर, कितने बेसहारा, अ
जिन्दगी का बोझ ढोते चले आ रहे थे। अपने को न जाने कितना
समझने वाले महेश मेहता को हैरत सिर्फ इस बात पर थी कि वह माया सके

को नहीं बचा पाए थे। माया को न बचा सकने के अहसास के साथ जुड़ा था कितनी-कितनी नाकामियों का सिलसिला ! उन्हें लग रहा था'''एक साथ हकीकत उनके सामने उजागर हो चुकी थी। उनके अन्दर'''खुद उनके अंदर आत्मविश्वास, अहंकार, बड़ाई के पत्तों के नीचे एक खुदगर्ज किस्म का इंसान छिपा था, जिसने वक्त के टुकड़े-टुकड़े में, अपने लिए सिर्फ अपने लिए सभी से सब कुछ छीन लिया था। ममता, मधु और फिर माया, सभी के साथ, उन्हें लग रहा था, उनका सलूक एक जैसा था।

ममता के साथ गांव के ऊंचे टीले पर, खाई के किनारे, जंगल की छांव में महेश मेहता ने अपना खेल शुरू किया था। न जाने कितने सपने, न जाने कितना ऐश्वर्य, न जाने कितनी खुशियों के रंग उन्होंने बटोर लिए थे। अपनेपन की उस पहिचान में उन्होंने दायरों में सिमटना नहीं सीखा, विस्तार में फैलना सीखा था। एक तेज दौड़ में ममता के साथ बुने हुए रंगीन सपनों, खुशियों के रंग और मन के समीकरण को पीछे छोड़कर, ऐश्वर्य की ओर बढ़ चले थे। तब उन्होंने एक पल को भी यह नहीं सोचा था कि ममता का क्या होगा, वह कहां जाएगी, क्या करेगी। सपने, खुशियां, ऐश्वर्य और ममता, यहां से उन्होंने शुरू किया था। लेकिन सिर्फ ऐश्वर्य के लिए भाग गए थे वह मधु के पास।

मधु ममता नहीं थी। वह तो ऐश्वर्य थी, धन-दौलत की दुनिया में खुशियां उसके लिए बहिर्मुखी दौर थी'''अन्तर्मुखी प्रवाह नहीं। वह महेश मेहता को चाहती थी, उन्हें उसने पाया था। एक तरह से मधु ने महेश मेहता का शिकार किया था। जब मधु महेश मेहता को चाहती थी तब महेश मेहता मधु को नहीं चाहते थे। उन्हें ममता अच्छी लगती थी, वह उसे प्यार करते थे। ममता उनके सपनों, उनकी जिन्दगी का हिस्सा थी। तब वह सोचा करते थे, ममता से अलग धन-दौलत-ऐश्वर्य का उनके लिए कोई मूल्य नहीं था। आज उन्हें लग रहा था, उन्होंने हर जगह गलती की। ममता को छोड़ना जिस तरह गलत था, मधु को ठुकराना भी उसी तरह गलत था। किसी भी नक्श का एक हिस्सा तोड़कर अलग नहीं किया जा सकता, परछाईं को छोटा-बड़ा तो किया जा सकता है, लेकिन उसे बांट कर नहीं छोड़ा जा सकता। उनको अपने अन्दर किसी खूंखार जानवर की

वहशियत, किसी दरिन्दे की झपट के साथ आदमी के दिमागी इल्म के मिश्रण का अहसास होने लगा था।

ममता को छोड़कर आने के बाद, महेश मेहता ने उसी तरह पीछे मुड़कर नहीं देखा था, जिस तरह दौलत पाने के बाद उन्होंने मधु को पीछे छोड़ दिया था। मधु और ममता उनकी जिस्मानी और रूहानी हत्या के प्रतीक थे। मधु ने महेश मेहता के जिस्म को चाहा था, प्यार किया था। दौलत के लिए बिना झिझक महेश मेहता ने वह तो दांव पर लगा दिया लेकिन दांव जीत जाने के बाद, अपने जिस्म को वह मधु से दूर ले गए। मधु जिस दुनिया का हिस्सा थी, वहां इन चीजों को मांग कर नहीं छीन कर लिया जाता था। उसने भी महेश मेहता को ममता से छीन कर ही लिया था। वह क्लब जाती थी, वह शराब पीती थी, गैर मर्दों की बांहों में झूल कर वह महेश मेहता से इन्तकाम नहीं ले रही थी। वह तो उस दिन के इंतजार में थी, जब महेश मेहता अपने पति, मालिक होने के हक का इस्तेमाल करेंगे, उसे रोकेंगे, उसे मना करेंगे। वह तो रात-रात-भर जागकर खर्राटे भरकर सोते हुए महेश मेहता को नम आंखों से देखा करती। उसके मन में महेश मेहता के लिए असीम श्रद्धा थी। वह उनके एक इशारे पर अपनी जान छिड़क सकती थी। उसे पता लग गया था, वह दिन कभी नहीं आएगा, जब महेश मेहता उसे रोकेंगे, तभी तो, वह रास्तों पर और बढ़ती गई, जो उसे किसी निश्चित अंत की तरफ ले जाते थे। महेश मेहता यूं तो कभी फर्क नहीं कर पाते, कहां वह चूक गए, कहां उन्होंने गलती की। माया की मौत ने उनके अहम को सतह से उखाड़ कर फेंक दिया था। वक्त के उस टुकड़े में, जब उन्होंने माया की लाश देखी थी, एक तरल विस्फोट हुआ था उनके अंदर, जिसमें सब कुछ नष्ट हो गया था, कहीं कुछ भी बाकी नहीं बचा था। इनकार, हिकारत, तिरस्कार, नफरत इन सबमें एकाएक वह दूर चले गए थे। अंदर ही अंदर उन्हें तब यही लगा था, वह खुद ही तो जिम्मेदार थे माया की मौत के। माया की मौत के वह खुद जिम्मेदार इसलिए थे कि उन्होंने माया को भी अपनी आलीशान जिंदगी का खिलौना बना कर छोड़ दिया था। माया कभी भी महेश मेहता के सोने से अलग होकर नहीं जी सकी। सब लोग उसके इर्द-गिर्द हवस की हिमा

को नहीं बचा पाए थे। माया को न बचा सकने के अहसास के साथ जुड़ा था कितनी-कितनी नाकामियों का सिलसिला ! उन्हें लग रहा था'''एक साथ हकीकत उनके सामने उजागर हो चुकी थी। उनके अन्दर'''खुद उनके अंदर आत्मविश्वास, अहंकार, बड़ाई के पत्तों के नीचे एक खुदगर्ज किस्म का इंसान छिपा था, जिसने वक्त के टुकड़े-टुकड़े में, अपने लिए सिर्फ अपने लिए सभी से सब कुछ छीन लिया था। ममता, मधु और फिर माया, सभी के साथ, उन्हें लग रहा था, उनका सलूक एक जैसा था।

ममता के साथ गांव के ऊंचे टीले पर, खाई के किनारे, जंगल की छांव में महेश मेहता ने अपना खेल शुरू किया था। न जाने कितने सपने, न जाने कितना ऐश्वर्य, न जाने कितनी खुशियों के रंग उन्होंने बटोर लिए थे। अपनेपन की उस पहिचान में उन्होंने दायरों में सिमटना नहीं सीखा, विस्तार में फैलना सीखा था। एक तेज दौड़ में ममता के साथ बुने हुए रंगीन सपनों, खुशियों के रंग और मन के समीकरण को पीछे छोड़कर, ऐश्वर्य की ओर बढ़ चले थे। तब उन्होंने एक पल को भी यह नहीं सोचा था कि ममता का क्या होगा, वह कहां जाएगी, क्या करेगी। सपने, खुशियां, ऐश्वर्य और ममता, यहां से उन्होंने शुरू किया था। लेकिन सिर्फ ऐश्वर्य के लिए भाग गए थे वह मधु के पास।

मधु ममता नहीं थी। वह तो ऐश्वर्य थी, धन-दौलत की दुनिया में खुशियां उसके लिए बहिर्मुखी दौर थी'''अन्तर्मुखी प्रवाह नहीं। वह महेश मेहता को चाहती थी, उन्हें उसने पाया था। एक तरह से मधु ने महेश मेहता का शिकार किया था। जब मधु महेश मेहता को चाहती थी तब महेश मेहता मधु को नहीं चाहते थे। उन्हें ममता अच्छी लगती थी, वह उसे प्यार करते थे। ममता उनके सपनों, उनकी जिन्दगी का हिस्सा थी। तब वह सोचा करते थे, ममता से अलग धन-दौलत-ऐश्वर्य का उनके लिए कोई मूल्य नहीं था। आज उन्हें लग रहा था, उन्होंने हर जगह गलती की। ममता को छोड़ना जिस तरह गलत था, मधु को ठुकराना भी उसी तरह गलत था। किसी भी नक्श का एक हिस्सा तोड़कर अलग नहीं किया जा सकता, परछाईं को छोटा-बड़ा तो किया जा सकता है, लेकिन उसे बांट कर नहीं छोड़ा जा सकता। उनको अपने अन्दर किसी खूंखार जानवर की

वहशियत, किसी दरिन्दे की झपट के साथ आदमी के दिमागी इल्म के मिश्रण का अहसास होने लगा था।

ममता को छोड़कर आने के बाद, महेश मेहता ने उसी तरह पीछे मुड़कर नही देखा था, जिस तरह दौलत पाने के बाद उन्होंने मधु को पीछे छोड़ दिया था। मधु और ममता उनकी जिस्मानी और रूहानी हत्या के प्रतीक थे। मधु ने महेश मेहता के जिस्म को चाहा था, प्यार किया था। दौलत के लिए बिना झिझक महेश मेहता ने वह तो दाव पर लगा दिया लेकिन दाव जीत जाने के बाद, अपने जिस्म को वह मधु से दूर ले गए। मधु जिस दुनिया का हिस्सा थी, वहां इन चीजों को माग कर नहीं छीन कर लिया जाता था। उसने भी महेश मेहता को ममता से छीन कर ही लिया था। वह क्लब जाती थी, वह शराब पीती थी, गैर मर्दों की बांहों मे झूल कर वह महेश मेहता से इतकाम नही ले रही थी। वह तो उस दिन के इंतजार में थी, जब महेश मेहता अपने पति, मालिक होने के हक का इस्तेमाल करेंगे, उसे रोकेंगे, उसे मना करेंगे। वह तो रात-रात-भर जागकर खर्राटे भरकर सोते हुए महेश मेहता को नम आखो से देखा करती। उसके मन मे महेश मेहता के लिए असीम श्रद्धा थी। वह उसके एक इशारे पर अपनी जान छिडक सकती थी। उसे पता लग गया था, वह दिन कभी नही आएगा, जब महेश मेहता उसे रोकेंगे, तभी तो, वह रास्तों पर और बढ़ती गई, जो उसे किसी निश्चित अत की तरफ ले जाते थे। महेश मेहता यू तो कभी फर्क नही कर पाते, कहां वह चूक गए, कहां उन्होंने गलती की। माया की मौत ने उनके अहम को सतह से उखाड कर फेंक दिया था। वक्त के उस टुकडे में, जब उन्होंने माया की लाश देखी थी, एक तरल विस्फोट हुआ था उनके अंदर, जिसमे सब कुछ नष्ट हो गया था, कही कुछ भी बाकी नही बचा था। इनकार, हिकारत, तिरस्कार, नफरत इन सबसे एकाएक वह दूर चले गए थे। अंदर ही अदर उन्हे तब यही लगा था, वह खुद ही तो जिम्मेदार थे माया की मौत के। माया की मौत के वह खुद जिम्मेदार इसलिए थे कि उन्होंने माया को भी अपनी आलीशान जिंदगी का खिलौना बना कर छोड़ दिया था। माया कभी भी महेश मेहता के साये से अलग होकर नहीं जी सकी। सब लोग उसके इर्द-गिर्द हवस की

का प्रदर्शन करते थे, जिसके खौफ से डर कर वह महेश मेहता के करीब भाग आती। माया के करीब आने पर, महेश मेहता उसे दिलासा नहीं देते, उसके डर को कभी दूर नहीं करते, बस उसे अपने सीने में समेट लेते। इतनी बड़ी दुनिया में क्या औरत ऐसे ही जीती है? हवस, हिंसा, अत्याचार की आंधी के बीच अनगिनत लड़कियां, औरतें अपना-अपना जीवन बिता देती हैं। हवस, हिंसा अत्याचार तो जीवन का हिस्सा है। इसे छोड़ देना मुमकिन नहीं और इससे डरकर किसी अंधेरी कोठरी में छुप जाना कौन-सी बात थी? माया ने यही किया था और महेश मेहता को लग रहा था वह उसे अंधेरी कोठरी में अंदर और अंदर खींच लाए। इतनी दूर तक खींच लाए थे'''जहां से लौट कर बाहर आना, खुली रोशनी में आत्मसात् कर सकना सम्भव नहीं था। माया ऐसी भी नहीं बन गई थी। मन के कोने-कोने में फूटते हुए डर के बुलबुले वहीं से उठते होंगे। महेश मेहता को लग रहा था, वह उस डर की बुनियाद नहीं मिटा सके थे। तभी तो वह डर उसे खा गया था। कहीं कुछ तो ऐसा होता जिसे वह बचा सकते। ममता उनके करीब आई, तबाह हो गई, मधु इस दुनिया से चली गई और माया को मार डाला गया।

महेश मेहता ने फिर से शराब पीनी शुरू कर दी थी। नशे की पर्त-दर-पर्त नीचे छिपा हुआ दर्द सुबकता रहता, तभी तो इन दिनों किसी अजीब अहसास की गिरफ्त में थे महेश मेहता। गुलाबी नशे में डूब जाने पर उनके अंदर जहां एक तरफ किसी दयनीय यातना के खोल फट पड़ते; वहां दूसरी तरफ जिंदगी के कोने किनारों से खुशियों के वह क्षण तलाश किया करते। खुशियां ही खुशियां तो भरी थीं। चारों तरफ उन्होंने बस अपने लिए, दूर-दूर तक शानो-शौकत के मीनार खड़े किए थे, वह हर चीज उन्होंने पाई थी, जिसकी चाहत थी। धन, दौलत, औरत, ऐश्वर्य, यश, प्रतिष्ठा सभी तो मिला था उन्हें। भाग्य के इतने बड़े दौर के वह हिस्सेदार बने थे। कहीं कुछ कमी नहीं रह गई थी, लेकिन अब उन्हें लग रहा था, वह सारा वैभव, वह सारा ऐश्वर्य, वह सारा सुख मिला तो जरूर था उन्हें, लेकिन किस कीमत पर, कितनी कुर्बानियों के अम्बार पर बैठकर। वह सब कुछ मिला था उन्हें। पाने और खोने के बीच एक दूरी होती है तो

दोनों स्थितियों के पीछे वही होना है जो दूसरी स्थिति में।

23 दिसम्बर को महेश मेहता अपने दफ्तर से दो बजे के पहले ही निकल गए थे। एक मीटिंग के बाद उनको दिल्ली जाने के लिए एअरपोर्ट पहुंचना था। मीटिंग खत्म होने पर एक बार उनके मन में ख्याल आया था, माया को एअरपोर्ट तक साथ ले चलने का। फिर उन्हें माया की, उनके साथ दिल्ली चलने की जिद की याद आई थी। हालांकि वह माया को लेकर ही दिल्ली जाना चाहते थे, जिसकी वजह दफ्तर का माहौल था, गुमनाम चिट्ठियां थीं, राजी खन्ना की अकड़बाजी थी। लेकिन वह चाहते थे, माया कुछ जिम्मेदार बने, हालातों का सामना करना सीखे। वह कोई हमेशा तो जिंदा रहने वाले थे नहीं। एक न एक दिन उन्हें माया को अकेले छोड़कर जाना ही था। तब क्या होगा इसकी भी चिंता थी उन्हें। इण्डिया ट्रैवल्स के उत्तराधिकारी के रूप में वह चाहते थे, माया स्वतन्त्रता से काम करना जान जाए। तभी तो महेश मेहता ने माया को अपने साथ बाहर ले जाना छोड़ दिया था। जायदाद, धन-दौलत और इण्डिया ट्रैवल्स की जिम्मेदारी, यह सब संभालने के लिए माया को हालातों का खुद ही मुकाबला करना पड़ेगा। और कोई भी तो नहीं था उसके बाद, इतने बड़े कारोबार को चलाने के लिए। उनको मालूम था, माया की मां, ममता, यह सब देखेगी नहीं, छुएगी भी नहीं। तब उन्हें क्या मालूम था, वह कहां जानते थे, *माया के ऊपर मौत का साया मंडरा रहा था!* एक भोली, नादान बच्ची का भला कौन दुश्मन हो सकता था! फिर मौत, खून, वरदातें, यह सब तो उनकी कल्पना से परे था।

अब महेश मेहता को याद आ रहा था···एअरपोर्ट जाते समय अगर वह माया को साथ ले जाते तो वह बच जाती ··वह मौत का साया टल जाता। *लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया था, यह हाय उन्हें खाए जा रही थी।* घर के कोने-किनारे से, दफ्तर के हॉल से, उनके अपने केबिन से ·· माया की दर्द-भरी चीख बार-बार उनके सीने में उतर जाती· पप्पा कहा करती थी वह उन्हें···जैसे मिश्री की डली पिघलकर कान में गिर पड़ती ···उस दिन 23 दिसम्बर को जरूर माया ने यही कहा होगा···यही कहते हुए वह चीखी होगी···यही तो कहते हुए उसने बार-बार उनसे

याचना की थी···साथ दिल्ली लेकर जाने की। एअरपोर्ट जाते समय वह मन ही मन मुस्कुरा रहे थे। सोचा था उन्होंने, वहां से फोन करेंगे उसे··· कुछ वादा भी कर आए थे···लौट कर आने पर कहीं बाहर घूमने जाने के लिए। शंका तो थी मन में···राजी खन्ना के व्यवहार से उन्हें कुछ अजीब-सा लगा भी था···लेकिन उसे नौकरी से अलग करने का फैसला लेने के बाद एक संतोष भी हो गया था कि उनकी गैरहाजिरी में माया को कोई तंग नहीं करेगा।

एअरपोर्ट पहुंचने पर, महेश मेहता ने चेक इन किया, सामान जमा करने के बाद वह टेलीफोन बूथ की तरफ बढ़े ही थे कि भोला चौधरी सामने आ गया।

"अरे भोला तुम···क्या माया भी साथ आयी है ?" महेश मेहता ने पूछा था।

"नहीं···" भोला ने धीरे से लेकिन सख्त आवाज में कहा था।

"तो फिर रुको मैं उसे फोन करता हूं पहले···फिर तुमसे बात होगी। फोन की घंटी बजती रही···बजती रही···हार कर महेश मेहता बूथ से बाहर निकल आए। तब तक भोला भी कहीं जा चुका था। भोला का एअरपोर्ट आना और बिना बताए ही यूं ही चले जाना महेश मेहता को अजीब जरूर लगा था, लेकिन उनको इस बात का पता कई दिन बाद लगा था कि भोला एअरपोर्ट क्यों आया था और बिना उनसे बात किए वापस क्यों चला गया था। उस समय जहाज का वक्त हो चुका था, इसलिए भोला को उन्होंने तलाश नहीं किया। तलाश करने पर भी वह उन्हें कहां मिलता, वह तो महेश मेहता के फोन बूथ में घुसते ही चला गया था। उसे मालूम था, महेश मेहता माया को ही फोन करने गए थे, उसे इस बात का भी अंदाज हो गया था कि फोन पर बात होने पर माया उन्हें दफ्तर में हुए झगड़े के बारे में बताएगी। जिस अंदाज में वह आया था, उसके जो तेवर थे, क्रोध एवं अपमान का जो लावा उसके अंदर फट रहा था, उसे मालूम हो गया था, उसे खुद ही जाना ठीक था। तभी तो महेश मेहता के टेली-फोन बूथ के अंदर घुसते ही भोला वापस चला गया था। अब महेश मेहता को लग रहा था कि अगर भोला वापस ना जाता, अगर माया से उनकी

बात हो जाती और अगर कहीं एअरपोर्ट जाते समय वह माया को साथ भर ले लेते, तो शायद'''माया बच जाती।

पोस्टमार्टम रिपोर्ट से माया की मौत का समय वही था, जब उन्होंने उससे टेलीफोन पर बात करने की कोशिश की थी, उसे बचाने का समय तभी था, जब उनके मन में उसे लेकर एअरपोर्ट आने का ख्याल आया था। महेश मेहता ने ऐसी गलती पहली बार नहीं की थी। कई बार ऐसा होता, उनके मन से कोई एक आवाज उठती'''हल्की-हल्की दस्तक-भरी आवाज जो बार-बार उन्हें किसी बात के लिए प्रेरित करती। जब भी वह यह दस्तक-भरी आवाज सुनकर भी अनसुनी कर देते, जरूर कोई गड़बड़ होती। ''उन्हें याद आ रहा था, जब मधु कार-दुर्घटना में मरी थी, तब भी ऐसी ही दस्तक भरी आवाज, बार-बार उन्हें मधु को रोकने के लिए प्रेरित कर रही थी। तब भी उन्हें लग रहा था मधु को एक बार रोकना चाहिए'''लेकिन उनके अहंकार ने उन्हें तब ऐसा नहीं करने दिया था।

माया के कत्ल का मुकद्दमा कई महीनों से चल रहा था। भोला चौधरी महेश मेहता की इस शहादत पर कि 23 दिसम्बर को एअरपोर्ट पर उनसे मिला, छूट गया था, राजी खन्ना के ही खिलाफ थे वह। पुलिस ने भी राजी खन्ना के ही खिलाफ केस बनाया था। महेश मेहता ही नहीं सभी लोगों को इस बात का यकीन था कि खून राजी खन्ना ने ही किया था '''सभी सबूत, सारे गवाह उसके खिलाफ थे। महेश मेहता खुद राजी खन्ना के फांसी पर चढ़ाए जाने के हुक्म का इंतजार कर रहे थे।

महेश मेहता ने दफ्तर जाना छोड़ दिया था। कभी कचहरी, कभी पुलिस स्टेशन, कभी सरकारी वकील के यहां चले जाते थे। उनकी जिंदगी इसी मुकदमे में जुड़ गई थी। उन्हें लग रहा था, उनका अंत समय आ गया था। कुछ ऐसा अहसास होने लगा था उन्हें कि जितने दिन यह मुकद्दमा चल रहा था, उतने दिन ही वह जिंदा थे। एक और चोर उनके मन में बार-बार उठकर बैठ जाता'' ममता'' ममता को अपनी बेटी की मौत की खबर नहीं दी थी उन्होंने। उनके अंदर इतना साहस ही कहां बचा था जो वह ममता को यह सब बताते। फिर भी उन्हें पता था, ममता जेल से छूट कर उन्हीं के पास आएगी, अपनी बेटी से मिलने। महेश मेहता को

इन दिनों कुछ भी अच्छा नहीं लगता'''सिर्फ केस के बारे में वह बात करते या सोचते। सोचते-सोचते कभी वह सो जाते तो कभी सोते-सोते गुत्थियों के बवंडर में उलझने लगते। उस दिन महेश मेहता की जरा आंख लग गई थी। वह दिन में सोते नहीं थे। कहीं नींद ना आ जाए, इसलिए, वह खाने के बाद बिस्तर पर लेटते भी न थे, बस बालकनी में आराम कुर्सी पर पैर फैलाकर बैठे रहते। इधर कई दिनों से रात-भर सो नहीं पाते थे वह। माया की आवाज का कैसेट, माया के फोटो की एलबम, उसके हाथ की लिखाई, इन्हीं सब में घिरे रहते। बंद कमरे में एक छोटी-सी दुनिया बना ली थी उन्होंने। कोई माया को छीन ले गया हो तो क्या'''माया की आवाज उनके पास थी'''वह मेज, अलमारी, मैन्टलपीस, कमरे में चारों तरफ माया की तस्वीरें सजाकर रख दिया करते और फिर टेपरिकार्डर में माया के हंसने, रोने, गाने, चीखने-चिल्लाने का कैसेट लगा देते। खुद अपने ही साथ, लड़कियों के साथ, रामू काका के साथ, टेलीफोन की बातचीत तक की माया की आवाज उसमें होती। इन आवाजों के बीच न जाने कितने अक्स, दीवार की रोशनी काटकर उभर आया करते। माया की फिल्म भी बनवाई थी उन्होंने। उस फिल्म में आवाज नहीं थी, फिल्म प्रोजेक्टर पर चलाते और आवाज टेपरिकार्डर पर। महेश मेहता की जिंदगी में जैसे वक्त, माया की मौत पर आकर ठहर गया था। उससे और बढ़ ही नहीं सके थे वह। एकाएक महेश मेहता की आंख खुल गई। किसी गाड़ी के रुकने की आवाज आई थी। बालकनी से झांककर बागीचे की तरफ देखा उन्होंने। गाड़ी से उतरकर मानवेन्द्र सक्सेना अंदर की तरफ आ रहे थे। राजी खन्ना के वकील का इस समय उनके घर आना महेश मेहता को एक तरह से ठीक ही लगा था। कुछ केस के ही बारे में बात होगी, यही समझ में आया। वह गाऊन का स्ट्रेम्प बांध कर कमरे से बाहर निकल आए। "आइए सक्सेना साहब'''" नौकर महेश मेहता को देखते ही अलग हट गया था।

"मेहता साहब यह आपका आदमी तो कह रहा था, आप घर पर नहीं हैं।"

"इसे क्या मालूम आप कौन हैं'''आजकल किसी से मिलने का मन

नहीं होता।"

"मैंने आपको डिस्टर्ब तो नहीं किया?"

"नाट ऐट आल। आइए ना।"

"मेहता साहब, आपको याद होगा…कोर्ट में आपने एक बार मुझे घर आने की दावत दी थी।" सक्सेना ने बैठते हुए कहा।

"हां…हां…जस्ट ए सेकेंड…रामसिंह!"

"हां सर!"

"चाय-बिस्कुट लेकर आना।"

"अभी लाया हुजूर!"

"हां सक्सेना साहब, कैसे हैं आप?"

"मैं तो ठीक हूं, लेकिन…आप…"

"मेरा क्या…नथिंग इज लेफ्ट फार मी।"

"आय अंडरस्टैंड।"

"शी वाज आल फार मी।…मैं उसके बिना अब…"

"आपकी मजबूरी…आपके जज्बात मैं समझता हूं…लेकिन इसका भी अहसास है मुझे कि आप कातिल को सजा दिलाना चाहते हैं।"

"शायद। इसीलिए जिंदा हूं मैं।"

"और शायद इसीलिए आपने प्राजीक्यूशन की तरफ से खुद अपने वकील लगाए हैं।"

"राइट!"

"मेरा भी यही उद्देश्य है।"

"आपका?"

"जी हां।" यह केस मैंने राजी खन्ना के लिए ही हाथ में लिया था…लेकिन…।"

"लेकिन…"

"अब मुझे लगता है…इस केस में…इससे भी ज्यादा…कुछ है।"

"इससे भी ज्यादा…?"

"देखिए मेहता साहब! मैं आपकी भावनाओं को चोट नहीं पहुंचाना चाहता…लेकिन मैं यह भी जानता हूं कि राजी खन्ना के खिलाफ प्रासि-

गत रूप से आप नहीं···"

"नेवर।"

"यस···यही मेरा भी गेस था···यह तो हो सकता है कि जब तक आप राजी खन्ना को खूनी समझते हैं···आपकी उसके खिलाफ जंग जारी रहेगी···"

"करेक्ट।"

"लेकिन मुझे लगता है···आपके लिए अधिक महत्त्व इस बात का है कि माया जी की हत्या किसने की।"

"यस।"

"प्राजीक्यूशन ने अपनी बहस खत्म कर ली है। अब मुझे बहस करनी है।"

"नेचुरली।"

"मुझे इस केस में कुछ ऐसी बातें पता हैं, जो शायद आपको भी मालूम हों···"

"कौन-सी बातें?"

"जस्ट ए मिनट। मैं आपको बताता हूं···कहां से शुरू करूं मैं···पहले तो मेहता साहब यह बताएं···कैन आय टाक फ्रैंकली···"

"यस।"

"इट इज नाट हर्ट योर फिलिंग्स।"

"दे आर आलरेडी हर्ट।"

"आय एम आल फार दिस। लेकिन मैं यह सोच रहा था, कहीं ऐसा न हो कि आप स्वयं अंधेरे में रहें···सही कातिल का पता भी न लगे और कोई बेकसूर फांसी पर चढ़ा दिया जाय।"

"आप राजी खन्ना को बेकसूर समझते हैं?"

"मैं यह नहीं समझता···इस केस को मैं साधारण केस नहीं समझता···ऐसा लगता है मुझे···इधर की ईंट उधर का रोड़ा जोड़कर प्राजीक्यूशन ने जो कहानी बनाई है, उसमें मिसिंग लिंक्स हैं···आपने स्वयं बहुत कुछ देखा है···मसलन, राजी खन्ना की दफ्तर में की गई हरकतें···लेकिन

मेहता साहब ! कई बार अनुमान ही काफी नहीं होता···सोचते आप कुछ और हैं···होता कुछ और है···किसी भी कत्ल के मुकदमे में मुलजिम का गुनाह साबित करने के लिए दो खास मुद्दे होते हैं। पहला मुद्दा होता है, सबब का, वजह का, मकसद का···दूसरा मुद्दा होता है चश्मदीद गवाह का या पक्के हालाती सबूत का।"

"हालाती सबूत···सर्कमस्टेन्सियल इवीडेंस तो है खन्ना के खिलाफ।"

"यही तो मैं आपको बताना चाहता हूं···ऐसा नहीं है···मैंने अभी कहा था···पूरी कहानी मे मिसिंग लिंक्स हैं···जब तक घटना-क्रम और घटना-क्रम के हर पहलू को ठीक-ठीक न बैठा लिया जाए···कुछ नहीं कहा जा सकता। "···पुलिस ने दो आदमियों को गिरफ्तार किया था ना···"

"हां।"

"दोनों के खिलाफ ही सर्कमस्टेन्सियल इवीडेंस थी।"

"लेकिन भोला चौधरी मुझे एअरपोर्ट पर मिला था।"

"और राजी खन्ना भी किसी को मिला था।···खैर छोड़िए···पुलिस को भोला चौधरी पर अधिक शक था···भोला चौधरी के लिए खून कर देने की वजह भी थी।"

"वजह ?"

"हां मेहता साहब···वजह···वजह थी भोला चौधरी के पास कत्ल करने की···उस वजह मे वजन है··· उस वजन के कारण खून होते हैं··· किए जाते हैं।"

"क्या कह रहे हैं आप···"

रामसिंह चाय की ट्रे लेकर आ गया। उसने साइड टेबिल पर ट्रे रख दी और प्यालों में चाय बनाने लगा।

"रामसिंह, तुम जाओ, चाय हम खुद बना लेंगे।"

"जी हुजूर।"

महेश मेहता ने नजरें नीची किए हुए दोनों प्यालों मे चाय डाली। एक प्याली सक्सेना साहब की तरफ बढाकर दूसरी प्याली से चाय की चुस्कियां लेते हुए उन्होंने कहा, "रामसिंह चाय अच्छी बनाता है।"

"जी।"

"हां तो आप क्या कह रहे थे···अच्छा किया आप आ गए···मैं यही चाहता हूं कि कातिल को सजा मिले···उसे फांसी पर चढ़ाया जाए···सिर्फ खानापूरी के लिए मैं इस केस में दिलचस्पी नहीं ले रहा हूं।"

"मुझे विश्वास था···आपके वारे में मुझे सब पता है·· तभी तो···"

"मेरे वारे में···क्या पता है आपको ?" महेश मेहता ने आवाज को सख्त बनाते हुए कहा।

"यही कि माया चौधरी आपकी सिर्फ बेटी ही नहीं, रूह का हिस्सा बन चुकी थी।"

"सच में।" महेश मेहता की आंखें भर आईं। एक हाथ से आंखों को दवाकर पोंछ डाला उन्होंने। "सक्सेना साहब ! आय विश···मैं आपसे सहमत हूं···कातिल का सही पता लगाना जरूरी है···मैं इसमें रिस्क नहीं ले सकता···।"

"यही विश्वास था मुझे इसीलिए यहां आया हूं···।"

"इन ए वे, आय शुड···अच्छा बाद में···क्या कह रहे थे आप ?"

"23 दिसम्बर को सबसे खास, सबसे अहम वारदात थी, माया और ला चौधरी का झगड़ा···सारा दफ्तर तमाशा देख रहा था···भोला चौधरी ने निहायत फूहड़ तरीके से इलजाम लगाया था माया जी के ऊपर ···आपके···"

"डोन्ट से आल दैट···।"

"नहीं कहूंगा, लेकिन उसने बदला लेने की धमकी दी थी···"

"हां, एअरपोर्ट भी मुझसे झगड़ा करने ही गया था वह।"

"एक और बात कही थी उसने···।"

"क्या ?"

"यही कि उसके और माया जी के संबंध नहीं थे···सामान्य पति-पत्नी के संबंध नहीं थे। दर्जन-भर लोगों के सामने, कत्ल के सिर्फ दो-ढाई घंटे पहले···खुद आपके केबिन में भोला चौधरी ने इसी बात पर तो एतराज किया था कि उसे अपने पति के अधिकारों से वंचित किया गया था··· जबकि माया जी, आपको और राजी खन्ना को लेकर तरह-तरह की बातें

कही जा रही थी···मेहता साहब, एक क्षण को सोचिए, क्या यह एक निहायत खास वजह नही हो सकती थी कत्ल करने की? जहां एक तरफ पति को पत्नी का शरीर तक छूने की इजाजत नही थी वहां अगर उसे इस बात का यकीन हो जाए···पूरा यकीन हो जाए कि उसे तो सिर्फ इस्तेमाल किया गया है और उसकी अपनी पत्नी के मन और शरीर पर किन्हीं अन्य लोगों का अधिकार है तो···मेहता साहब, कौन ऐसा मर्द होगा, जिसके सर पर खून नही सवार हो जाएगा···?"

"लेकिन यह सब···"

"गलत था···यह आप कह रहे हैं···और आज कह रहे हैं···यही तो आपको बताना चाहता था···जिस दफ्तर में यह सब चल रहा हो···जहां इस तरह के आरोप लगाए जा रहे हों···जहां अश्लील, गंदी···भोंडी चिट्ठियां आ रही हों···वहां कुछ भी हो सकता है··· वहां एक नही कई कातिल हो सकते हैं।"

"लेकिन भोला तो मुझे···"

"एअरपोर्ट पर मिला था···भूल जाइए उस बात को···। कुछ देर के लिए भूल जाइए सर! पोस्टमार्टम रिपोर्ट में लिखा हुआ है···कत्ल के पहले माया जी का रेप···"

"डोन्ट मेन्शन दैट।"

"ओ० के० सर! लेकिन मैं कह चुका हूं भोला चौधरी को इस बात का गम था···अफसोस था···उसके जेहन में···उसके तसव्वुर में, अपनी पत्नी के साथ, अपने सामान्य संबंध न होना···एक बड़ी वजह थी···एक बहुत बड़ी वजह हो सकती थी···। इस संभावना से इंकार नही किया जा सकता।"

"तो आप यह कहना चाहते हैं कि कत्ल भोला ने···"

"आय डोन्ट नो···आय डोन्ट मीन दैट···लेट अस सी···आप भी देखें···हालात क्या कहते है? आप मानेंगे ही भोला चौधरी के पास कत्ल करने का इरादा भी था और वजह···बहुत बड़ी थी···हमेशा कत्ल इन्ही मामलों में होते हैं। उधर देखा जाए···राजी खन्ना क्या था और कत्ल करने की वजह क्या थी···मकसद क्या था? सर! छब्बीस साल का, अच्छे खानदान

का लड़का जिसने जिंदगी में पहली नौकरी की थी, जिसने इससे पहले कभी चिड़िया भी नहीं मारी···क्या इतना बड़ा जुर्म कर सकता था? नशे की गोलियां, अश्लील फिल्मी किताबों का प्रयोग आज के जमाने में नई उम्र के नये फैशन के सरपरस्त कितने ही नौजवान करते हैं। यह सब क्या मुजरिम होते हैं···? यह एक क्या खून कर बैठते हैं? यह हो सकता है कि राजी खन्ना माया चौधरी से इश्क करता हो। यह भी हो सकता है कि वह उससे अकेले में मिलना चाहता हो। यह भी हो सकता है, उसने लव लेटर्स लिखे हों···लेकिन मासूम इश्क करने वाला नौजवान क्या अपनी महबूबा का खून कर सकता है? नामुमकिन है, मेहता साहब! यह नामुमकिन है। फिर राजी खन्ना के बयान से जाहिर है, जब उसने मिसेज माया से मोहब्बत करनी शुरू की थी, उसे उनके ब्याहता होने का पता नहीं था। खुद सोचिए सर! जो नौजवान महज एक हलो के सहारे अपने इश्क का मंजर खड़ा कर सकता है, जो निहायत मासूम तरीके से प्रेमपत्र लिखता था, जिसने तब तक अपने इश्क का इजहार तक नहीं किया था और फिर जिसका पहला और आखिरी प्रेमपत्र उसकी महबूबा ने पढ़ा तक नहीं था··· वह क्या उसका कत्ल कर सकता था और वह भी जब कि गवाहों के अनुसार राजी खन्ना माया चौधरी को अच्छा लगता था। अगर एक बार यह मान भी लिया जाए कि उस दिन माया जी से अकेले में मिलने के लिए आपके केबिन में गया, तो यह कहां साबित होता है कि कत्ल उसने किया? जैसा मैंने आपसे अभी कहा था, इस मुकदमे के दो पहलू हैं···एक है रैप का और एक मर्डर का। अगर इन दोनों को अलग-अलग रखकर देखा जाए तो एक बात और नजर आएगी, यह बात है, अगर राजी ने किसी जनून में माया चौधरी के साथ बलात्कार किया भी, तो फिर वह भला उनका खून क्यों करेगा? नौकरी छोड़ने का उसे नोटिस मिल ही चुका था। आप उस दिन दिल्ली जाने के लिए निकल चुके थे···उसके सामने रैप करने के बाद वहां से भाग जाने का पूरा मौका था। फिर वह माया चौधरी का कत्ल क्यों करने लगा? हकीकत तो यह है, मेहता साहब, राजी खन्ना जैसा भावुक नौजवान न तो रैप जैसा संगीन जुर्म कर सकता है और न ही कत्ल करने का घिनौना कदम उठा सकता है। जिस नौजवान के अंदर पाक मोहब्बत

के सजंद जाग गए हों, जिसके अंदर माया के लिए इज्जत हो, प्यार हो, वह ऐसा काम हरगिज'''हरगिज नहीं कर सकता। खासकर जब ऐसा करने की, उसके पास कोई वजह नहीं थी'''सबब नहीं था।"

"यू हैव ए प्वाइन्ट मि० सक्सेना! यह हम लोग क्या कर बैठे''' रियली राजी खन्ना की बैकग्राउंड का लड़का इवन क्राइम कर सकता है'''यह तो मैंने सोचा ही नहीं, था'''यह काम फिर किसी और का है।"

"हां सर! जुर्म तो हुआ है'''एक ऐसा संगीन जुर्म'''एक ऐसा घिनौना जुर्म, जिसकी मिसाल जुर्म के इतिहास में बड़ी मुश्किल से मिलेगी '''माया जैसी खूबसूरत, नाजुक, मासूम और दिमागी तौर से कमजोर''' दहशत से डरी हुई लड़की के साथ'''यह सब'''कोई पेशेवर मुजरिम या कोई छंटा हुआ बदमाश या पर्वर्ट ही कर सकता है।"

"यू मीन आय आय रार्टट? यू मीन यह काम भोला चौधरी का भी नहीं है?"

"यस, आय मीन दैट'''बात कुछ और लगती है'''वर्ना मैं आपके पास क्यों आता'''इतना सब काफी था'''राजी खन्ना को बचाने के लिए। मैं जुर्म की तह में पहुंचना चाहता हूं'''23 दिसम्बर को 1 बजे के बाद '''आपके चले जाने के बाद - दफ्तर में दो लड़कियां मौजूद थी। एक थी माया, दूसरी थी शबनम। माया का तो कत्ल हो गया'''लेकिन शबनम कहां है'' माया को दफ्तर में छोड़कर शबनम अस्पताल गई थी, अपनी मां को देखने। वहां से लौटकर माया के साथ उसे आपके घर जाना था''' यही कह गए थे ना आप?"

"हां, दैट्स राईट।"

"लेकिन शबनम लौटकर नहीं आई'''या आई'''उस दिन एक कत्ल हुआ या दो'''इसका पता किए हैं।"

"ओ माई गॉड।" महेश मेहता का हाथ कांपने लगा।

"अगर शबनम न मिलती तो हो सकता है'''उस दिन एक नहीं दो कत्ल हुए हों'''यह सब इन बच्चों का काम नहीं हो सकता।"

जोड़कर कभी न खत्म होने वाली तलाश में भटकती रहती। ममता बूढ़ी हो चुकी थी। खुरदरे हाथ, सफेद बाल, झुर्रियों वाला चेहरा और उसकी आँखों पर सफेद कमानीदार चश्मा लग चुका था। लेकिन उसके चेहरे पर एक ऐसी चमक थी, एक ऐसा आत्मविश्वास था, जिसे देखकर चांद-सितारे कांप उठते थे।

ममता इधर कई सालों से अपनी जिंदगी से और अपनी जिंदगी से जुड़ी तमाम यादों से दूर बहुत दूर चली गई थी, लेकिन कल रिहाई की बात एक नश्तर बनकर चुभ गई थी उसके मन में। जहां एक तरफ इन तमाम सालों में जैसे उसके पैरों में भारी पत्थर बंध गए थे, वहीं दूसरी तरफ कभी-कभी अंधेरी, काली, सन्नाटी रातों में, एक दिये की तरह माया का नाम, उसकी बेटी माया का नाम, धड़कनों में, सांसों में, जहनियत के विस्तार के हिस्से-हिस्से में एक गर्माहट, एक अनूठा अपनापन छोड़ जाता। सब कुछ तो पीछे छूट चुका था तो भला अब ममता किसे याद करती? उसके मां-बाप, उसका घर-संसार, उसके सपनों का राजकुमार, उसका पति, उसकी बच्ची, सब कुछ, इसी तरह बिखरता रहा, टूटता रहा कि वही कुछ रोकने, थामने का वक्त ही नहीं मिला। यह कौन-सी आग थी, यह कौन-सा जन्म था, यह कौन-सी जिंदगी थी, अपनी बैरक में बैठकर ममता सोच रही थी। सवाल उसके सामने जेल से छूटकर कहीं और जाने का नहीं था। कई बरस पहले रात के अंधेरे में मन को टटोलते हुए, उसने अपने आप से पूछा था कि आखिर उसे चाहिए क्या? वह जिंदा क्यों है? क्या यह सब पाने के लिए उसने अपने पति माधव का खून किया था? माधव ने जो कुछ भी किया था, वह हर मर्द, किसी-न-किसी रूप में, किसी-न-किसी तरह करता है। शिवा ने भी तो यही किया था। माधव एक कालिख की तरह उसकी अंदरूनी रूह को काला कर गया था जबकि शिवा ने वह प्यार का रोशन दिया था, जो उसके स्नेह, धड़कते मन में खुद उसी ने जलाया था, बुझा दिया था। हर लमहा काला हो गया था और माधव ने उस दिन बस एक झटके में उसके मन की तमाम ग्रंथियों को खोलकर रख दिया था, जिसके बाद उसे कुछ भी याद नहीं रह रहा था।

कई बरस पहले जेल की सलाखों के अंदर ममता ने यह समझ लिया

था कि उसे इस तरह जिंदा रहने का कोई हक नहीं था। तभी तो उसने शिवा की हर कोशिश नाकाम कर दी थी और माधव के खून का इल्जाम भरी अदालत में अपने सर पर ले लिया था। उसने तो मौत मांगी थी। उस दिन भी उसने मौत मांगी थी, जब बस्ती से बाहर, ऊंचे टीले पर शिवा उसे अकेला छोड़कर चला गया था। और पति का खून करने के बाद भी उसने मौत मांगी थी। उस बार माधव ने उसे बचाया और इस बार शिवा ने उसे मरने नहीं दिया था। उसे फांसी नहीं हुई थी। वह बच गई थी। लेकिन ममता ने तय कर लिया था कि भले ही यह दुनिया उसे मरने न दे, वह जिंदा भी नहीं रहने वाली थी। मौत और जिंदगी का यह सफर उसे कितने सालों से छलता आया था। वह सोचा करती, इतनी बड़ी दुनिया में, इतने तमाम लोगों में अगर सिर्फ वह न होती तो ऐसी कौन-सी कमी आ जाती, किसी का कौन-सा नुकसान हो जाता? एक असीम यातना का संकट उसे हमेशा डसता रहा था और वह एक घुप्प अंधेरे से निकलकर और अंधेरी दलानों की तरफ चली गई थी। फिर भी ममता जिंदा थी। मन की तमाम खुशियों, सपनों के तमाम दायरे, जिंदगी की हर खुशी कुर्बान करने के बाद भी जिंदा थी और उसे इंतजार था बस एक उस आखिरी लमहे का जब वह यह तो देख ले कि उसके जिगर का टुकड़ा, उसके जिस्म का हिस्सा, उसकी अपनी कोख से जन्मा हुआ उसका प्यार कहां था, किस हाल में था। तरह-तरह के ख्याल आते थे उसके मन में। कभी अच्छा सोचती थी, कभी बुरा, कभी हंसती थी तो कभी रोती थी, बस हर पल हर सांस जैसे वहीं आकर ठहर गई थी, रुक गई थी।

माया, ममता की अपनी बेटी माया न जाने कहां थी, लेकिन उसकी पहचान तब भी उसके अंदर थी और जब जेलर साहब ने उसे रिहाई का हुक्म सुनाया था तब उसके अंदर बड़े दिन बाद वह छोटी-सी खुशी उठकर बड़ी बहुत बड़ी होने लगी थी, जिसके इंतजार में कितनी रातें उसने काली की थीं और कितने दिन स्याह किए थे।

कोर्ट रूम की घड़ी में दस बजने वाले थे। सफाई के वकील मानवेन्द्र

सक्सेना अपने जूनियर के साथ किताबें और कागजात देखने में मशगूल थे। उधर सरकारी वकील ओंकार जौहरी जज के सामने जरा नीचे पर रखी मेज से लगी हुई कुर्सी पर बैठे हुए किसी मुद्दे पर सोच रहे थे। कुछ लोग अलग-अलग झुंड में खड़े थे और कुछ लोग अपनी-अपनी कुर्सियों पर बैठकर मुकदमे के ऊपर गर्मजोशी से बहस कर रहे थे। जज की कुर्सी खाली थी, लेकिन पेशकार उनकी मेज पर केस के कागजात तरतीबवार लगा रहा था। कुर्सियों की पहली लाइन में राजी के मां-बाप, महेश मेहता अपने किसी दोस्त के साथ बैठे थे। दूसरी लाइन में दाहिनी तरफ छित्तन बाबू, भवानी बाबू, रावत वगैरह बैठे थे। ऐसे ही एक झुंड में बातचीत हो रही थी।

पहला आदमी : "अमां! सरकारी वकील ओंकार जौहरी यह मुकदमा हार गए।"

दूसरा : "नहीं···अभी कुछ कहा नहीं जा सकता।"

तीसरा : "कहने को अब बचा ही क्या है, डिफेंस काउन्सेल ने धज्जियां उड़ा दीं··· धज्जियां।"

पहला आदमी : "बेनीफिट आफ डाउट तो मिलेगा ही मिलेगा।"

तीसरा : (उचकते हुए) "वह भोला चौधरी वाला प्वाइन्ट गजब का था।"

दूसरा : (हाथ नचाते हुए) "और शबनम वाला?"

पहला : "अरे हां अब शबनम को लाते हैं तो मुसीबत, नहीं लाते हैं तो मुसीबत। भोला चौधरी और शबनम के बीच टांग दिया उसने मुकदमे को।"

चौथा आदमी : "शबनम मिली या नहीं···दिखती तो नहीं है।"

पहला : "पुलिस वाले कहते हैं···शबनम का कोई पता नहीं।"

तीसरा : "हां···हां, मजाक है जो कह देंगे कुछ पता नहीं, जज खाल नहीं उधेड़ देगा।"

चौथा आदमी : "सफाई के वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना ने खूंद तो नहीं छिपा दिया।"

पहला : "क्या पता इसी मुद्दे पर छुड़ा लें राजी खन्ना को।"

दूसरा : "अरे इन वकीलों की तिकड़म भगवान ही जाने। सुना है राजी के वाप पानी की तरह पैसा वहा रहे हैं। सुनते हैं प्राइवेट डिटेक्टिव की मदद ली···शवनम को छोड़ेंगे नहीं ये लोग।"

पहला आदमी : "अमां क्या यह नहीं हो सकता, कातिल शवनम हो ? दोनों राजी खन्ना पर मरती थीं।"

दूसरा आदमी : "और वह वेचारा एक हलो पर लटक गया।"

[सव हा···हा···हा···हू···हू····हू···खी···खी····करके हंसने लगे। जज के दाखिल होने पर सब लोग खड़े हो गए और जज के कुर्सी पर बैठते ही बैठ गए।]

सरकारी वकील ओंकार जौहरी ने अपनी दलील पेश की, "मी लार्ड, पिछली तारीख पर अदालत ने शवनम को पेश किए जाने का जो हुकम दिया था, उसे पूरी करने की भरसक कोशिश के वाद भी पुलिस कामयाव नहीं हो सकी है। ऐसा नहीं, मी लार्ड प्राजीक्यूशन लिस्ट में शवनम नाम नहीं था, लेकिन जैसे-जैसे मामला आगे वढ़ा···वड़े मुद्दे सामने आए, उस समय तक शवनम की हैसियत महज एक गवाह की वन चुकी थी···वैसे ही गवाह की जैसे हमने पेश किए हैं, अदालत में। मी लार्ड ! मेरे फाजिल, डिफेंस काउन्सेल ताड़ और तिनकों का पहाड़ वनाना चाहते हैं। अदालत के सामने अपने तसव्वुर अपने ख्यालातों का पहलू पेश करना चाहते हैं···ऐसे ख्यालातों की जिनका इस मुकदमे से कोई ताल्लुक नहीं हो सकता। मी लार्ड ! डिफेंस काउन्सेल अदालत का ध्यान आकर्षित करते हुए वरावर इस कोशिश में लगे हैं कि शक-शुवह के हालात पैदा हो जाएं। पहले उन्होंने भोला चौधरी का मुद्दा उठाया। शहर के जाने-माने इज्जतदार, रुतवेदार महेश मेहता पर कीचड़ उछाला और फिर शवनम की शक्ल में अदालत के सामने एक गुमनाम, गुमशक्ल, गवाह पेश किया। मी लार्ड ! अगर शवनम मुर्दा है···तो एक मुर्दा शख्सियत को गवाह की शक्ल नहीं दी जा सकती···उसे अदालत में चल रहे मुकदमे का हिस्सा नहीं वनाया जा सकता। खुदा न करे शवनम मुर्दा हो मी लार्ड ! लेकिन अगर शवनम मर चुकी है, तो उसकी मौत का सवव या उसके कत्ल का मामला एक

अलग मामला होगा, उसका इस मुकदमे से कोई ताल्लुक नहीं हो सकता; क्योंकि मी लार्ड, शबनम की अभी न तो लाश मिली है और न ही उसकी मौत की जगह, तारीख और हालात जाने गए हैं। एक चीज, एक शख्सियत या एक लड़की जिसका वजूद, जिसकी मौजूदगी या नामौजूदगी का अभी तक फैसला नहीं हो पाया उसकी बिना पर भला इस मुकदमे को कैसे और कब तक टाला जा सकता है। लेकिन मी लार्ड, अगर शबनम जिंदा है और वह किसी वजह से सामने नहीं आ सकी है तो···तो भी क्या है··· इसमें ऐसा क्या है, जिसकी वजह से हम कातिल को मुलजिम की सजा नहीं दे सकते ?"

"मी लार्ड ! शबनम क्या है, उसका इस मुकदमे से ताल्लुक क्या है और ऐसी कौन-सी बात है जिसका पता उसके जरिए लगाया जा सकता है ? 23 दिसंबर की शाम पांच बजे माया चौधरी का कत्ल हुआ था। उसके काफी देर पहले शबनम इंडिया ट्रेवल्स के दफ्तर से चल चुकी थी। मी लार्ड ! दफ्तर से शबनम अस्पताल गई थी,···अपनी मां के पास थी। मी लार्ड, पुलिस के रिकार्ड से यह बात साबित हो जाती है···शाम पांच बजे··· उस रात···23 दिसम्बर को शाम पांच बजे···शबनम अस्पताल में थी। अस्पताल से वह पांच बजे के करीब ही निकली थी जब माया चौधरी का कत्ल हो चुका था। अगर शबनम, मकतूला माया के कत्ल की चश्मदीद गवाह नहीं है, अगर वह कत्ल के वक्त, कत्ल की जगह से चार मील दूर थी, अगर उसने कत्ल होते नहीं देखा, कत्ल के बाद भी माया चौधरी की लाश को वह देखने वाली पहली नहीं थी और न ही उसने कत्ल की पहली सूचना पुलिस को दी, तो मी लार्ड ! उसका, शबनम का, इस मुकदमे में कितना महत्त्व रह जाता है ? शायद कुछ भी नहीं। मी लार्ड ! पुलिस ने शबनम के गायब हो जाने का अलग मामला दर्ज कर लिया है। उसकी खोज ···उसकी तलाश जारी है। अखबारों में इश्तहार छापे गए हैं तमाम पुलिस थानों को इत्तला कर दी गई है···कई पुलिस पार्टियां उसे ढूंढने के लिए जा चुकी हैं, कई और जगहों पर फोन, वायरलेस से बराबर सम्पर्क रखा जा रहा है। फिर भी, मी लार्ड ! अगर शबनम मिल जाती है तो वह

एक अलगकिस्सा होगा। उसे यदि गायव किया गया है तो यह एक अलग मामला होगा, क्योंकि पुलिस के पास उसके गायव किए जाने के सवव मौजूद हैं। मी लार्ड, पुलिस को पता है''', शवनम गायव की जा सकती थी''' उसने कई लोगों के खिलाफ अभी कुछ दिन पहले ही परेशान होकर रिपोर्ट लिखवाई थी। शादी और झगड़े वाली खानदानी जायदाद का चक्कर था''' फिरोज नाम का एक गुंडा लगातार उसे तंग कर रहा था। फिरोज ने जो अव पुलिस की हिरासत में है, वयान दिया है कि वह शवनम से शादी करके उसकी खानदानी जायदाद का मालिक वनना चाहता था क्योंकि उसे मालूम था यही सूरत थी उस जायदाद को शवनम की खातिर रिश्तेदारों के झगड़ों से निकलवाने की। उधर शवनम, फिरोज को नापसन्द करती थी। फिर वह रिश्तेदार भी तो हैं, जिनसे शवनम का झगड़ा चल रहा था। वह भी तो उसे गायव करवा सकते थे। इसीलिए'''मी लार्ड! इसीलिए मैंने अदालत से कहना चाहा था'''शवनम'''शवनम का गायव हो जाना, महज एक इत्तफाक नहीं तो क्या है?"

सफाई वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना ने उठकर जवाब दिया, "योर आनर! यह एक महज इत्तफाक नहीं है तो शवनम 23 दिसम्वर को गायव हुई। महज इत्तफाक तो यह है कि फिरोज के किस्सों को'''उन किस्सों को वयान किया गया'''।

"सहज इत्तफाक तो है उसका'''उस सीधी-सादी लड़की का चन्द रिश्तेदारों से मामूली झगड़ा जो हर घर में होता है। योर आनर! फिरोज और शवनम का किस्सा खत्म हो चुका था'''23 दिसम्वर से सात महीने पहले खत्म हो चुका था'''मैं भी फिरोज से मिला था'''उन रिश्तेदारों से मिला था जिनके ऊपर हमारे सरकारी वकील ओंकार जौहरी शवनम के गायव किए जाने की तोहमत लगा रहे हैं। मैं अदालत से दरख्वास्त करूंगा मुझे फिरोज और उसके रिश्तेदारों को वतौर गवाह पेश करने की इजाजत दी जाए।

"यह मुकदमा योर आनर! एक वेकसूर नौजवान के ऊपर उस कत्ल का है, जो उसने नहीं किया। कहीं ऐसा तो नहीं सरकारी वकील ओंकार जौहरी अदालत से कुछ छुपाना चाहते हैं।"

"मी लार्ड…"

"योर आनर। बेकसूर को सजा देना दस कसूरवार के छूट जाने से भी बड़ा होता है। कानून की नजर में एक बेगुनाह को सजा एक बेकसूर नौजवान को मुलाजिम करार देना, काफी बड़ी अहम वजह होती है, उन मुद्दों को देख लेने की जिनका मुकदमे से दूर-दूर तक ताल्लुक होता है।"

जज ने सरकारी वकील ओंकार जौहरी से पूछा, "आखिर आपको एतराज क्या है।"

"मी लार्ड। यह तो · यह तो…"।

"आब्जेक्शन ओवर रूल्ड।"

जज ने कुर्सी के पिछले हिस्से मे टेक लगा ली।

गवाह के कटघरे मे पहले फिरोज, फिर बारी-बारी से शबनम के तीन रिश्तेदार आए, जिनमे दो मर्द हैं और एक औरत थी। पहले सफाई वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना ने उनसे सवाल किए और फिर सरकारी वकील ओंकार जौहरी ने। गवाहो के चले जाने के बाद जज ने अदालत मुल्तवी कर दी। लन्च ब्रेक के बाद कोर्ट रूम में जज के आते ही अदालत की कार्यवाही शुरू हो गई। पेशकार ने गवाहों के बयान की टाइपशुदा प्रति जज के सामने रख दी और तभी वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना अपनी बहस जारी करने के लिए खड़े हो गए।

"योर आनर! यह फिरोज का किस्सा, ये रिश्तेदारी, झगड़ों का हंगामा अदालत में, इस मुकदमे मे असली मुद्दों को तोड़-मरोड़ कर दूर ले जाना था, जो अब गवाहों के बयान के बाद साफ-साफ जाहिर हो गया है। योर आनर! फिरोज का शबनम से अब कोई वास्ता नहीं रह गया था · खुद उसने हलफ पर बयान दिया है कि शबनम की उसने उधर कई महीनों से सूरत नही देखी थी। उन हालातो में दूर-दूर तक ऐसी कोई वजह नजर नही आती है, जिसके तहत उसने शबनम को गायब कर देने का इरादा तक किया हो।

"योर आनर! फिरोज, अब सवाल उठता है, उस रोज 23 दिसम्बर को फिरोज इस शहर मे नहीं था तो शायद सरकारी वकील ओंकार जौहरी यह कहना चाहेंगे जो फिरोज के यहां न होने से क्या शबनम नहीं

उठाई जा सकती ।"

"दैट्स इट मी लार्ड !" जौहरी अपने मुद्दे पर जमे रहे। सफाई वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना ने हल्की-सी मुस्कुराहट के साथ बहस जारी रखी : "यह बात सही है, फिरोज जैसे मशहूर गुंडे के लिए शहर में मौजूद रहना कोई जरूरी नहीं होता···वह अपने आदमियों से भी यह काम करवा सकता था। यह तो हो सकता था। यह मुमकिन था···लेकिन तब योर आनर जब उस रोज फिरोज के जहन में ऐसी कोई स्कीम होती···वह उस रोज इस काबिल होता। हां योर आनर ! वह उस रोज इस काबिल होता।" कागज हिलाते हुए, "फिरोज उस दिन 23 दिसंबर को रेल पुलिस के कब्जे में था···18 दिसम्बर की रात उसे मालगाड़ी के डिब्बे तोड़ते हुए पकड़ लिया गया था।" वकील मानवेन्द्र मोहन सक्सेना ने एक लिखा हुआ कागज जज के सामने रख दिया।

"योर आनर ! रही उन बेचारे रिश्तेदारों की बात···गवाही के कटघरे में जब वे आए थे तो उनको देखकर और उनके बयान सुनकर आपने जरूर यह नतीजा निकाला होगा जो ऐसा काम करने की न तो उनकी हैसियत है और न ही उनके पास ऐसा करने का कोई सबब था। शबनम के रिश्तेदारों ने अदालत को बताया था, जो भी उनका जायदाद के सिल-सिले में झगड़ा था वह शबनम से नहीं शबनम की मां से था। और फिर उस झगड़े के सिलसिले में मुकदमेबाजी अलग चल रही थी। उनमें न तो इतनी हिम्मत थी और न ही उनका इरादा था कि शबनम को उड़ा ले जाने की खतरनाक साजिश वे करते।

"योर आनर ! लेकिन शबनम को किसी न किसी ने उड़ाया जरूर था। शबनम को उस रोज गायब कर देने वाला सबसे पहला और सबसे आखिरी आदमी वही हो सकता है, जिसने माया का कत्ल कर दिया। माया और शबनम दोस्त थीं···योर आनर···अच्छी दोस्त। महेश मेहता जब भी शहर से बाहर जाते थे···शबनम ही माया के साथ रहा करती थी···दफ्तर में उनकी मेज एक-दूसरे के बगल में थीं। वे दोनों एक साथ उठती-बैठती थीं, लंच, चाय-नाश्ता वगैरा भी उनका साथ रहता था। दोनों को अक्सर रेस्त्रां और थियेटरों में साथ-साथ देखा जाता था

और उस रोज 23 दिसम्बर को भी शबनम माया चौधरी के साथ आखिर तक थी। महज दो घंटे के लिए, उस रोज शबनम, माया से अलग हुई थी। उसे अस्पताल अपनी मां को देखने जाना था। अस्पताल से लौटकर उसे दफ्तर आना था'''दफ्तर में माया, शबनम का ही इंतजार कर रही थी।

"जब वह हादसा हुआ था योर आनर ! यह भी हो सकता है, जब शबनम अस्पताल से लौटकर इंडिया ट्रेवल्स के दफ्तर में आई, तब उसकी दोस्त का कत्ल हो चुका था और उसने वहां पर ऐसी चीज देखी या किसी ऐसे आदमी को देखा, जिसकी वजह से उसे गायब कर दिया गया। गायब करने वाला राजी खन्ना नहीं हो सकता क्योंकि वह खुद मौजूद है। गायब करने वाला, शबनम को उड़ा ले जाने वाला वही आदमी हो सकता है, जो गुमनाम है'''छुपा हुआ है'''जिसे पुलिस ने नहीं पकड़ा है और जिसने योर आनर ! माया चौधरी का खून किया है। दैट्स आल योर आनर !"

सरकारी वकील ओंकार जौहरी को हाथ में निकलता मुकदमा बचाना था, "मी लार्ड ! अगर फिरोज 23 दिसम्बर को रेल पुलिस के लॉकअप में था या रिश्तेदारों के बयान में इन लोगों के जरिए शबनम को उड़ा लेने की साजिश का पता नहीं लग पाया हो, तो इन सबसे यह भी तो साबित नहीं किया जा सकता कि शबनम को उड़ा ले जाने के लिए किन्हीं पेशेवर गुंडों का सहारा नहीं लिया गया। हालातों की बहस में शबनम के गायब किए जाने की किसी और पुख्ता साजिश का जब तक पता नहीं लग पाता या फिर कोई और सबब जान नहीं लिया जाता, तब तक शबनम को इस मुकदमे से सीधा कैसे जोड़ा जा सकेगा। यह जुर्म तो हुआ है मी लार्ड ! एक मासूम लड़की का खून हुआ है। मुलजिम के हाथ से लिखे खत और अन्य कागजात कत्ल के इरादे को साबित करते हैं'''इन खतों से यह भी जाहिर हो जाता है कि मुलजिम कई दिनों से जुर्म करने के चक्कर में था। दफ्तर के साथियों और गवाहों के बयानात में उसके इरादों और जुर्म की पनपती हुई शक्ल भी सामने आती है'''उसका, मुलजिम का'''नशीली गोलियों का इस्तेमाल इस बात को साबित करता है कि मुलजिम अपने मकसद में कामयाब होने के लिए किस हद तक जा सकता था'''गिर सकता था'''

फिर हादसे की जगह पर उसका हादसे के बाद पाया जाना···फर्श पर उसके जूतों के निशान···टेलीफोन पर और केबिन के दरवाजे पर उसकी उंगलियों के निशान मिले हैं···उसके बाद यह जाहिर हो जाता है···साबित हो जाता है कि खून राजी ने किया है···जुर्म की सजा का जिम्मेदार राजी खन्ना है। जैसा हर कत्ल के मुकदमे में होता है, मुजरिम खूनी अपने को निर्दोष कहता है···जुर्म से इंकार करता है और अपने बचाव के लिए कोई झूठी कहानी गढ़कर अदालत को गुमराह करता है, वैसा ही इस मुकदमे में हो रहा है, हर मुलजिम का वकील हालातों को तोड़-मरोड़कर झूठे किस्से बेबुनियाद हालातों में अदालत को उलझाकर बेनिफिट आफ डाउट का सहारा लेना चाहता है। लेकिन···मी लार्ड···मेरी जिंदगी में इस मुकदमे जैसा साफ-साफ दिखने वाला जुर्म और कभी नहीं देखने को मिला। वैसे हर जुर्म की एक मिसाल जरूर होती है···इस जुर्म की कोई मिसाल नहीं होगी। यह जुर्म जिस्मानी कत्ल और रूहानी खून का है। यह जुर्म एक दिमागी तौर पर बीमार लड़की को गला घोंटकर मार डालने का है। यह जुर्म कत्ल का नहीं है, इसमें बलात्कार जैसी वहशीयत का जुर्म जुड़ा हुआ है। यह जुर्म सबकी, मी लार्ड, सबकी आंखों के सामने हुआ है···सबकी आंखों के सामने पैदा हुआ है···सबकी जानकारी में इसने शक्ल अख्तियार की···हालात···सबूत, दलीलें, जुर्म के इरादे, तदबीर और तरीके खुद-ब-खुद सामने आ जाते हैं, हमें उसके लिए किसी संभावित कहानी का सहारा नहीं लेना पड़ा था। जिस स्कार्फ या बड़े रूमाल से कत्ल किया गया···उस पर मुलजिम का नाम लिखा हुआ है। इसके बाद यह बेमाने रह जाता है कि शबनम कहां है, मी लार्ड ! जिंदा है या मुर्दा···जिंदा है या मुर्दा।"

नौ

महेश मेहता की कुछ समझ में नहीं आ रहा था। कोर्ट रूम की बहस के बाद वह काफी देर तक, सरकारी वकील ओंकार जौहरी से बात करते रहे। खुद ओंकार जौहरी के दिमाग में तब तक राजी खन्ना के कातिल होने के

बारे में संदेह हो चुका था। इस मुकदमे में महेश मेहता की कोई रुचि नहीं बाकी रह गई थी। उनकी दिलचस्पी न तो राजो खन्ना में थी और न ही भोला चौधरी में। कचहरी, पुलिस थाना, राजो खन्ना, भोला चौधरी, दफ्तर के तमाम लोग, वकील, ओंकार जौहरी, वकील मानवेन्द्र सक्सेना यह सब जिंदा हस्तियों के नाम नहीं थे, बल्कि तेज घूमती की रफ्तार में घूमती हुई तस्वीरें थी, जिनकी हरकतें, जिनकी बातें, वह सिर्फ इसलिए सुना करते, सब कुछ इसलिए देखा करते कि वह बातें, वह हरकतें माया से जुदा होते हुए भी माया से जुड़ी हुई थी'''माया का नाम, उनके लिए बहुत बड़ा नाम था '''इतना बड़ा नाम था, ईश्वर से, दुनिया से, संसार से, विश्व से भी बड़ा नाम था। वक्त यहीं बस उसी नाम पर आकर ठहर गया था'''कुछ भी तो नहीं बचा था उसके बाद।

डिफेंस वकील मानवेन्द्र सक्सेना को घर पर जब से उनकी भेंट हुई थी, न जाने कितने सवाल उनके अंदर उठा करते। वह खुद उन सवालों का जवाब ढूंढ़ने-ढूंढ़ने'''थक जाते। कौन था कातिल'''किसने खून किया था'''किसने उनका सब कुछ छीनकर उन्हें किसी कुएं में डाल दिया था'''बस सड़ने के लिए'''घुल-घुल कर मिटने के लिए। एक अजीब-सी तपन, एक झुनझुनी, टूट-टूटकर बिखर जाने वाली सिहरन बस उनके अंदर उठती रहती।

महेश मेहता को मालूम था '''अपनी जिंदा लाश का बोझ और अधिक दिन वह नहीं ढो सकेंगे। वह सब कुछ छोड़कर भाग जाना चाहते थे, लेकिन चले जाने से पहले एक आखिरी तमन्ना उनके अंदर और वह थी माया के कातिल को पहचान लेने की। आखिर वह कौन था जिस '''किसने माया को मार डाला'''उसका चेहरा पहचान लेना चाहते थे वह। वह आदमी'''वह चेहरा दफ्तर का था या बाहर का'''ज्वाला बाबू, रावत, छित्तन बाबू, डाबरी, तिवारी, मधोलिया, पांडे, यादव, खुशहाल, करीम, सिर्फ यह सब पाल-पोसकर उन्होंने बड़े किए थे'''सब सुख-दुख में काम आए थे'''इनमें से कोई भी उन्हें मरा था, उनका संदेह उनका नहीं कर सकता। बाहर के किसी आदमी से उनकी ऐसी दुश्मनी भी न थी जिसका बदला लेने के लिए माया को मार डाला जाए। ...

थक जाते वह तब कभी सरकारी वकील को, कभी मानवेन्द्र सक्सेना को, कभी प्राइवेट जासूसी एजेंसी को, कभी पुलिस अफसरों को फोन किया करते···कहीं से कुछ भी पता नहीं लग रहा था। चारों तरफ बस अंधेरा-ही-अंधेरा था।

उस दिन महेश मेहता लॉन में बैठकर चाय ले रहे थे। दोपहर के अखबार के पन्ने पलटकर वहीं घास के ऊपर डाल दिया था। दूर-दूर तक फूलों की क्यारियां, ऊंचे-ऊंचे पेड़, हल्की···हल्की हवा के झोंके, उनके अंदर की असहनीय पीड़ा को कम नहीं कर पा रहे थे। दर्द से उनका सर फटा जा रहा था। उन्होंने थोड़ी-सी चाय पीकर छोड़ दी थी। वह उठकर अपने कमरे में जाने ही वाले थे कि रामसिंह ने शाम की डाक से आया हुआ एक लिफाफा लाकर मेज पर रख दिया।

"हुजूर, बैरंग चिट्ठी थी, टिकट के पैसे देकर ले ली थी।"

एक अजीब-सा बदरंग-बैरंग लिफाफा, जिस पर खूबसूरत लफ्जों में उनका नाम और पता लिखा था। उन्होंने देखा पता पूरा नहीं था। मकान नम्बर तो था ही नहीं, सड़क का नाम भी सही नहीं था। सरदर्द में छटपटाते हुए उन्होंने वह लिफाफा अखबार के ऊपर गिरा दिया और उठकर अंदर की तरफ चल दिए। पोर्टिको के पास ही पहुंचे होंगे महेश मेहता, तभी उनके दिमाग में यह ख्याल गुदगुदी मचाने लगा कि घर के पते पर उन्हें खत लिखने वाला कौन हो सकता है? उनका कोई दूर-दराज का रिश्तेदार भी नहीं था। घर के पते पर सालों से कोई चिट्ठी नहीं आई। उनके खत तो दफ्तर में आते थे। फिर घर के पते पर, बदरंग लिफाफे में, बिना टिकट लगाए, यह खत किसने भेजा था? कौन हो सकता था? तभी हाथ की लिखावट···उन्हें कुछ पहचानी-सी लगी। कुछ देर वह ठहर गए··· काफी याद करने पर भी उन्हें यह तो याद नहीं आया कि वह लिखावट किसकी है, लेकिन इतना जरूर समझ गए वह कि लिखावट उन्होंने कहीं देखी जरूर थी।

महेश मेहता थके कदमों से धीरे-धीरे वापस लौट आये। कुर्सी पर बैठकर उन्होंने लिफाफा उठा लिया और उलट-पलट कर देखने लगे और कुछ जब उनकी समझ में नहीं आया तो लिफाफा खोलकर उन्होंने खत निकाल

लिया। कई पेज थे'''आखिरी पेज पर भेजने वाले का नाम देखने के लिए जैसे ही उन्होंने पलटा'''एक धमाका-सा हुआ'''आंखों के सामने अंधेरा छाने लगा'''खत शबनम का था।

डियर पापा,

माया दीदी होती तो आपको पापा ही कहती ना। आज वह नहीं है'''यह सोचकर'''इसका अहसास करके एक झुनझुनी-सी सारे बदन में छूटने लगती है। आपका हाल क्या होगा'''इसका अनुमान करके ही मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मेरी तो सिर्फ दीदी गई है, लेकिन मुझे मालूम है'''आपका सब कुछ लुट गया है'''बरबाद हो गया है। उस दिन 23 दिसम्बर को दफ्तर में चार बजने वाले थे जब मैं माया दीदी को वहीं रहने को कह कर अस्पताल, अपनी मां से मिलने को चली गई थी। दीदी उस दिन डिस्टर्ब थी'''बेहद परेशान और डरी हुई' दहशत के मारे थर-थर कांप रही थी, क्योंकि उनके खाविन्द भोला चौधरी ने उनके ऊपर और महेश मेहता के ऊपर झूठे इल्जाम लगाए थे। मैं हमेशा दीदी के साथ रहा करती थी और आपको भी हम अर्से से जानते थे। असल में भोला को दफ्तर के लोगों ने भड़काया था। दफ्तर के लोगों ने क्या'''सारी आग लगाने वाला यह छित्तन बाबू ही था। छित्तन बाबू दीदी पर काफी दिन पहले से बुरी नजर रखता था। लेकिन एक तो आपके डर से और फिर अपनी उम्र की वजह से उनके सामने कभी भी कुछ नहीं कहा। राजी पन्ना शायद इतना आगे नहीं बढ़ते अगर छित्तन बाबू ने हर वक्त उनके अन्दर एक फर्जी मोहब्बत का भूत नहीं जगाया होता। इतना आगे बढ़ने से मेरा मतलब चुपके-चुपके इश्क करने लगने या खत वगैरह लिखने की कोशिश करने से है। इससे आगे दोनों में किसी प्रकार का संबंध नहीं था। लेकिन छित्तन बाबू की लफ्फाजी से, आग को हवा देने की हरकतों से, एक बवण्डर खड़ा हो गया था, उन दिनों दफ्तर में भोला जैसा सीधा-सादा आदमी भी उसकी चपेट से बच नहीं सका और उस दिन 23 दिसम्बर को उसने दीदी को बुरा-भला कहा'''एक तरह से गालियां दीं'''उन्हें

धमकाया जिसकी वजह से दीदी का दिमाग खराब होने लगा था और डर के मारे वह अकेले घर नहीं जाना चाहती थी। आप तो पहले ही प्लेन से दिल्ली जाने के लिए निकल चुके थे। हमने आप तक पहुंचने की बड़ी कोशिश की···हर जगह टेलीफोन किया···एयरपोर्ट पर एनाउन्समेन्ट भी करवाई, लेकिन आप नहीं मिले···नहीं मिल सके। उम्मीद थी शायद हमारा मेसेज मिल जाने पर आप फोन करेंगे, इसलिए वहां, दफ्तर में दीदी का रुकना जरूरी हो गया था। इसलिए और क्योंकि घर का उनका टेलीफोन खराब था। दीदी किसी भी तरह उस रोज आपके करीब रहना चाहती थी। वह बेहद डरी हुई थी। उस रोज सबसे ज्यादा शायद जिन्दगी में सबसे ज्यादा उनको आपकी जरूरत महसूस हो रही थी और आप मिल नहीं रहे थे। मुझे अस्पताल जाना जरूरी था···मां को देखने के लिए···दीदी के साथ घर जाने पर अस्पताल के लिए मुझे उल्टा जाना पड़ता था··· दीदी मेरे लौट आने तक वहीं दफ्तर में इन्तजार करती रहेगी। अस्पताल से आने में मुझे जरा-सी देर हो गई थी। फिर भी सवा पांच के पास का वक्त होगा, जब मैं दफ्तर के अन्दर दाखिल हुई। चारों तरफ सन्नाटा था। सिर्फ दीवार पर टंगी घड़ी की टिक-टिक सुनाई दे रही थी और दाहिनी तरफ के क्यूबीकल में टेलीफोन की घंटी लगातार बज रही थी। एक बार मैंने सोचा शायद दीदी चली गई और मुझसे बात करने के लिए टेलीफोन किया होगा, फिर मुझे आपका ख्याल आया···क्योंकि फोन उनका भी हो सकता था। मैं सीधे क्यूबीकल में टेलीफोन सुनने के लिए चल दी। अभी मैं क्यूबीकल के अंदर गई ही थी कि मुझे लगा आपके केबिन का दरवाजा बड़ी जोर से किसी ने खोला, उसके फौरन बाद, खट-खट जूतों की तेज आवाज आने लगी···जैसे कोई बाहर की तरफ जा रहा था। यह खट-खट जूतों की तेज आवाज···दफ्तर के सभी लोग जानते थे वह सिर्फ छित्तन बाबू के जूतों की थी, क्योंकि वे अपने जूतों की हील में लोहे की नाल लगवाया करते थे। एक तरफ टेलीफोन की घंटी बज रही थी, जिसे फौरन उठा लेना जरूरी था और दूसरी तरफ जूतों की खट-खट की आवाज बाहर की तरफ निकलती जा रही थी। अगर मैं क्यूबीकल से बाहर नहीं निकलती और टेलीफोन पहले उठा लेती तो छित्तन बाबू या जो कोई भी बाहर

जा रहा था, उसके बाहर निकल जाने की पूरी सम्भावना थी। टेलीफोन से भी ज्यादा मुझे छित्तन बाबू या जो कोई जा रहा था, उससे दीदी के बारे में जान लेना जरूरी लगा था। मैं फौरन बाहर निकली तो छित्तन बाबू शायद क्यूबीकल डोर की आवाज से चलते-चलते रुक गए। मैं जब पूरी तरह बाहर निकली तो छित्तन बाबू धीरे-धीरे पीछे की तरफ मुड़ रहे थे। मैं कुछ कहना चाहती थी कि मैंने छित्तन बाबू का हुलिया देखा। उस 23 दिसम्बर की जाड़े की शाम को भी छित्तन बाबू पसीने से नहाये हुए थे··· उनके कपड़े फटे थे···जैसे किसी ने नाखून से नोचा-खसोटा हो···उनकी गर्दन में एक मफलर था और चेहरे पर खूंखार वहशियत। उनके माथे पर एक जगह हां याद आया दाहिनी तरफ···कान और आंख के बीच हल्का-हल्का खून निकल रहा था।

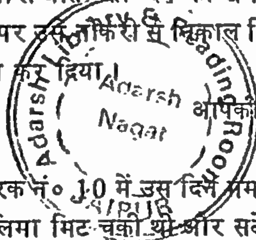
छित्तन बाबू का यह हुलिया देखकर मैं उनसे जो पूछना चाहती थी, वह न पूछ सकी। उधर टेलीफोन की घंटी तब भी बज रही थी। मुझे कुछ गड़बड़ का अंदेशा होने लगा, उसी समहं मे मुझे याद आया जब मैं क्यूबी-कल के अन्दर थी तो आपके केबिन का दरवाजा तेजी से खोलकर किसी के बाहर आने की आवाज आई थी, जिसके साथ वहां दीदी के होने का भी ख्याल मेरे अन्दर जाग उठा। एक बार मेरे पेट में बड़ी गन्दी मरोड़ हुई जिसके साथ कलेजे से दहशत-भरी चीख उभरी जो मेरे मुंह के अन्दर तालुओं से चिपक गई। उसी वक्त मैंने देखा छित्तन बाबू वहशियत के अदाज में मेरी तरफ बढ़ रहा था। उसने अपने गले में बंधा मफलर निकाल लिया था जिसके गर्दन से हटते ही वहां पर नाखूनों के बड़े-बड़े घाव साफ-साफ दीखने लगे थे। वह मंजर इतना भयानक था···इतना भयानक था जो आज भी याद करके मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मैं तेजी से क्यूबीकल के अन्दर जाने के लिए मुड़ी। अंदर पहुंचने ही कि इससे पहले मैं वहां का दरवाजा बन्द करती, छित्तन बाबू ने मुझे दबोच कर पकड़ लिया। टेलीफोन की घंटी तब भी बज रही थी और मेरा इरादा टेलीफोन उठाकर यह सब बता देने का था। लेकिन मैं अपने मकसद में कामयाब नहीं हो सकी···छित्तन बाबू ने सबसे पहले मेरे मुंह पर मफलर बांध दिया फिर उसी मफलर से खींचते हुए मुझे बाहर ले आया। मैं खोल

धमकाया जिसकी वजह से दीदी का दिमाग खराब होने लगा था और डर के मारे वह अकेले घर नहीं जाना चाहती थी। आप तो पहले ही प्लेन से दिल्ली जाने के लिए निकल चुके थे। हमने आप तक पहुंचने की बड़ी कोशिश की…हर जगह टेलीफोन किया…एयरपोर्ट पर एनाउन्समेन्ट भी करवाई, लेकिन आप नहीं मिले…नहीं मिल सके। उम्मीद थी शायद हमारा मेसेज मिल जाने पर आप फोन करेंगे, इसलिए वहां, दफ्तर में दीदी का रुकना जरूरी हो गया था। इसलिए और क्योंकि घर का उनका टेलीफोन खराब था। दीदी किसी भी तरह उस रोज आपके करीब रहना चाहती थी। वह बेहद डरी हुई थी। उस रोज सबसे ज्यादा शायद जिन्दगी में सबसे ज्यादा उनको आपकी जरूरत महसूस हो रही थी और आप मिल नहीं रहे थे। मुझे अस्पताल जाना जरूरी था…मां को देखने के लिए…दीदी के साथ घर जाने पर अस्पताल के लिए मुझे उल्टा जाना पड़ता था… दीदी मेरे लौट आने तक वहीं दफ्तर में इन्तजार करती रहेगी। अस्पताल से आने में मुझे जरा-सी देर हो गई थी। फिर भी सवा पांच के पास का वक्त होगा, जब मैं दफ्तर के अन्दर दाखिल हुई। चारों तरफ सन्नाटा था। सिर्फ दीवार पर टंगी घड़ी की टिक-टिक सुनाई दे रही थी और दाहिनी तरफ के क्यूबीकल में टेलीफोन की घंटी लगातार बज रही थी। एक बार मैंने सोचा शायद दीदी चली गई और मुझसे बात करने के लिए टेलीफोन किया होगा, फिर मुझे आपका ख्याल आया…क्योंकि फोन उनका भी हो सकता था। मैं सीधे क्यूबीकल में टेलीफोन सुनने के लिए चल दी। अभी मैं क्यूबीकल के अंदर गई ही थी कि मुझे लगा आपके केबिन का दरवाजा बड़ी जोर से किसी ने खोला, उसके फौरन बाद, खट-खट जूतों की तेज आवाज आने लगी…जैसे कोई बाहर की तरफ जा रहा था। यह खट-खट जूतों की तेज आवाज…दफ्तर के सभी लोग जानते थे वह सिर्फ छित्तन बाबू के जूतों की थी, क्योंकि वे अपने जूतों की हील में लोहे की नाल लगवाया करते थे। एक तरफ टेलीफोन की घंटी बज रही थी, जिसे फौरन उठा लेना जरूरी था और दूसरी तरफ जूतों की खट-खट की आवाज बाहर की तरफ निकलती जा रही थी। अगर मैं क्यूबीकल से बाहर नहीं निकलती और टेलीफोन पहले उठा लेती तो छित्तन बाबू या जो कोई भी बाहर

जा रहा था, उसके बाहर निकल जाने की पूरी सम्भावना थी। टेलीफोन से भी ज्यादा मुझे छित्तन बाबू या जो कोई जा रहा था, उससे दीदी के बारे में जान लेना जरूरी लगा था। मैं फौरन बाहर निकली तो छित्तन बाबू शायद क्यूबीकल डोर की आवाज से चलते-चलते रुक गए। मैं जब पूरी तरह बाहर निकली तो छित्तन बाबू धीरे-धीरे पीछे की तरफ मुड़ रहे थे। मैं कुछ कहना चाहती थी कि मैंने छित्तन बाबू का हुलिया देखा। उस 23 दिसम्बर की जाड़े की शाम को भी छित्तन बाबू पसीने से नहाये हुए थे··· उनके कपड़े फटे थे···जैसे किसी ने नाखून से नोचा-खसोटा हो···उनकी गर्दन में एक मफलर था और चेहरे पर खूखार वहशियत। उनके माथे पर एक जगह हां याद आया दाहिनी तरफ···कान और आंख के बीच हल्का-हल्का खून निकल रहा था।

छित्तन बाबू का यह हुलिया देखकर मैं उनसे जो पूछना चाहती थी, वह न पूछ सकी। उधर टेलीफोन की घंटी तब भी बज रही थी। मुझे कुछ गड़बड़ का अंदेशा होने लगा, उसी लमहे में मुझे याद आया जब मैं क्यूबीकल के अन्दर थी तो आपके केबिन का दरवाजा तेजी से खोलकर किसी के बाहर आने की आवाज आई थी, जिसके साथ वहां दीदी के होने का भी ख्याल मेरे अन्दर जाग उठा। एक बार मेरे पेट में बड़ी गन्दी मरोड़ हुई जिसके साथ कलेजे में दहशत-भरी चीख उभरी जो मेरे मुंह के अन्दर तालुओं से चिपक गई। उसी वक्त मैंने देखा छित्तन बाबू वहशियत के अंदाज में मेरी तरफ बढ़ रहा था। उसने अपने गले में बंधा मफलर निकाल लिया था जिसके गर्दन से हटते ही वहां पर नाखूनों के बड़े-बड़े घाव साफ-साफ दीखने लगे थे। वह मंजर इतना भयानक था···इतना भयानक था जो आज भी याद करके मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मैं तेजी से क्यूबीकल के अन्दर जाने के लिए मुड़ी। अंदर पहुंचते ही कि इससे पहले मैं वहां का दरवाजा बन्द करती, छित्तन बाबू ने मुझे दबोच कर पकड़ लिया। टेलीफोन की घंटी तब भी बज रही थी और मेरा इरादा टेलीफोन उठाकर यह सब बता देने का था। लेकिन मैं अपने मकसद में कामयाब नहीं हो सकी···छित्तन बाबू ने सबसे पहले मेरे मुंह पर मफलर बांध दिया फिर उसी मफलर से खींचते हुए मुझे बाहर ले आया। मैं चीख

भी नहीं सकी थी···छित्तन बाबू ने मुझे मारा था···मेरा सर दीवार पर पटक दिया था और मुझे घसीटते हुए···दफ्तर के पिछले हिस्से की तरफ ले गया। दफ़्तर के पिछले हिस्से में रिकार्ड रूम है। उसी रिकार्ड रूम में छित्तन बाबू ने मुझे उस रोज बंद कर दिया था। रिकार्ड रूम बंद करने से पहले उसने मेरे हाथ-पैर बांध दिए थे। दीदी की मौत के शोक में दफ्तर तीन दिन बंद रहा। तीसरे दिन जब अंधेरा हो चुका था तो छित्तन आया। उसके साथ एक आदमी और था, जो बाद में पता लगा टैक्सी ड्राइवर था। उसके हाथ उस कमीने छित्तन बाबू ने मुझे बेच दिया था···दो हजार रुपये में मुझे बेच दिया था···पापा, यह सब लिखते-लिखते मैं रो रही हूं। मेरी सिसकी, इस सन्नाटे में···सुबकती हुई आवाज के सन्नाटे में गूंजने लगी है। उसके बाद एक जगह, दूसरी जगह और न जाने कहां-कहां···वे लोग मुझे ले गए थे। इसी दौरान एक जगह छित्तन बाबू भी आया था। मैंने उसे खुश करने की कोशिश यह सोच कर की थी कि वह शायद मुझे छुड़वा दे, तभी उससे मैंने यह भी पूछा था आखिर उसने दीदी को मारा क्यों? वह कह रहा था, दीदी को मारने का उसका पहले से इरादा नहीं था। वह तो दीदी ने जब आपको सारी बात बता देने की धमकी दी थी तो यह सोच-कर कि ऐसा हो जाने पर उसे नौकरी से निकाल दिया जाएगा, उसने दीदी का गला घोंट कर खून कर दिया।



आपकी बेटी सरीखी—शबनम

जिला जेल की बैरक नं॰ 10 में उस दिन ममता सवेरे जरा जल्दी उठ गई थी। रात की कालिमा मिट चुकी थी और सवेरे की हल्की-हल्की धूप नम पत्थरों और सीखचों को चीरती हुई उसकी बैरक में आने लगी। दूर-दूर तक सन्नाटा था और सिर्फ जेल के दरख्तों पर चिड़ियों के चहकने की आवाज आ रही थी। चिड़ियों की आवाज, हवा की सनसनाहट और नम पत्थर, लोहे के सीखचों और सूरज की किरणों को चीरती हुई, कभी-कभी बड़ी दूर से कोयल की आवाज आ रही थी। यह कोयल की आवाज इधर कई दिनों से ममता को तंग कर रही थी, न जाने कौन-सा रिश्ता था, न जाने कौन-सा बैर था जिसकी वजह से जब भी यह कोयल की आवाज

ममता के कानों में गूंजती, एक अजूबा खालीपन उसके अंदर पैठने लगता। पूरी एक जिन्दगी का हिसाब, लमहा-लमहा, टुकड़ों-टुकड़ों में बटी हुई, टूट-टूट कर तार-तार होती हुई एक जिन्दगी का अक्स, छोटे-छोटे हिस्सों में जुड़कर उसके सामने घूम जाता। जेल की दीवारों के पीछे वे सीखचों से सटी हुई, दूर खाली आसमान में आज भी ममता जाने क्या तलाश रही थी। अपना वह सितारा जो हर किसी की जिंदगी में एक बार जरूर मिलता है। ममता अक्सर उम्र के इस दौर में, कभी-कभी अपने से पूछा करती कि यह सितारे, यह आसमान, यह चांद, यह जमीन, यह स्वर्ग, यह दुनिया, यह सब अब उसके किस काम की थी। एक तपिश, एक कंपन उसकी धड़कनों से, उसकी सांसों से उठकर खुद-ब-खुद कह दिया करती, एहसास करा देती कि सब कुछ तो खत्म हो गया था लेकिन तब भी उसका एक सितारा, उसके खून, उसके जिस्म का एक हिस्सा कहीं पर था जरूर और उसी के लिए ममता जिन्दा थी। पत्थर की दीवारों पर सर पटक कर उसने जान नहीं दी थी।

ममता धीरे-धीरे बैरक से बाहर निकलकर जेल के अहाते में, बरगद के उसी पेड़ की तरफ चल दी, जिसके चबूतरे पर बैठकर वह रोज उगते हुए सूरज को देखा करती थी। आसमान में उभरती हुई लालिमा, जैसे उसकी आंखों में सुनहरा ख्वाब बनकर समा जाती और वह अपनी बेटी माया के गुलाबी गालों को उस लालिमा से जोड़ दिया करती। न जाने कितनी हसरतें, न जाने कितने अरमान उसके अंदर करवट बदलने लगते। वह बड़ी देर तक, जब तक सूरज पूरी तरह नहीं निकल आता, खामोश निगाहों से सूने आकाश को देखती रहती। इसी तरह हर दिन शाम को वह सूरज का डूबना भी देखा करती। बड़े दिनों तक वह उगते हुए सूरज की लालिमा और डूबते हुए सूरज की लाली में फर्क नहीं कर पाती थी। लेकिन धीरे-धीरे उसकी समझ में सब कुछ आने लगा था। डूबते हुए सूरज की लाली के साथ जुड़ी हुई थी रात की कालिमा और उगते हुए सूरज की लालिमा के साथ जुड़ी हुई थी दिन की साफ साफ सफेदी। यह सब उसके तन और मन का फर्क था।

जेल के अहाते के उसी बरगद के पेड़ के नीचे आकर उसने

आया करता था। जिस तरह ममता के लिए जेल का कोई कानून नहीं था उसी तरह राजी को बड़े बाप का बेटा होने की वजह से ममता से मिलने की इजाजत मिल चुकी थी। ममता से राजी की मुलाकात जेलर के कमरे में हुई थी। चेहरे से जहीन शरीफ दीखने वाले राजी के लिए ममता के मन में न जाने कौन-सा अपनापन पहली ही नजर में जाग उठा था। बड़े प्यार से उसके माथे पर हाथ फेरते हुए ममता ने पहली बार ही उसे स्नेह का दान दे डाला था। जेल की दीवारों के पीछे, अकेलेपन, ऊब और भयावह यातना की सुलगती हुई विभीषिका राजी को बार-बार ममता के करीब खींच ले जाती।

वह अपने मन का सारा दुःख, समूचा हाहाकार ममता से कह देना चाहता था। राजी की मां जेल से बाहर थी और राजी जेल के अंदर था। उधर ममता की बेटी जेल से बाहर थी और ममता जेल के अंदर थी। दोनों अनजान से, एक दूसरे से, अंदरूनी रिश्ते की गर्माहट से, अभाव और एकाकीपन से अपनी आस्था के बंधन में जकड़ गए थे। राजी ममता को मां और ममता राजी को बेटा कहने लगी थी। कई दिन, कई हफ्ते, कई महीने गुजर गए थे, ममता और राजी एक-दूसरे के करीब बरगद के पेड़ के नीचे बैठ कर उगते हुए सूरज की लालिमा और डूबते हुए सूरज की लाली देखा करते। ममता ने राजी को देख कर ही जान लिया था कि जिस लड़की के खून के जुर्म में उसे पकड़ा गया था, वह उसने नहीं किया था। उसकी आत्मा राजी को खूनी मानने को तैयार नहीं थी। किसी अनकहे, अनजान समझ के तहत राजी ने भी तब तक ममता की पिछली जिंदगी के बारे में कुछ नहीं पूछा था। जेलर ने ममता के पति की बाबत उसे सब कुछ बता दिया था। फिर भी ममता की गुरुता, उसकी गंभीरता, उसके चेहरे की गमक और सूखी आंखों में मचलती हुई, तड़पती हुई चमक ने राजी को वह हिम्मत कभी नहीं दी, जो वह ममता से कुछ और जानने की कोशिश करता। वह तो न जाने किस सुकून के लिए ममता के पास चला आता था। न ममता कुछ बोलती थी, न राजी कुछ कहता। दोनों चुपचाप बरगद के पेड़ के नीचे बैठते थे और कुछ देर बाद उठकर अपनी-अपनी बैरक में चले जाते थे। हां, उठते वक्त एक बार ममता जरूर राजी

के माथे पर दिलासा का हाथ फेर दिया करती थी। शायद उसी सुनहरे स्वर्ग के लिए राजी बार-बार उसके पास आया करता था।

ऐसे ही एक दिन शाम के वक्त ममता और राजी बरगद के पेड़ के नीचे बैठे हुए डूबते हुए सूरज की लाली देख रहे थे। राजी का मन बड़ा बेचैन था। उसका मुकदमा शुरू हो चुका था। उसे सजा होगी या वह छूट जाएगा, इसका किसी को पता नहीं था। सरकारी वकील ओंकार जौहरी ने उस दिन राजी के जुर्म को साबित करने के लिए जो जोरदार दलीलें दी थीं, उनसे राजी के अंदर एक खास तरह का डर पैदा हो गया था। वह ममता के पास बैठकर भी अपने को बेहद अकेला महसूस कर रहा था। उसे न तो बरगद का पेड़ दिख रहा था, न ही डूबते हुए सूरज की लाली। उसका तो मन बार-बार ममता से सब कुछ कह देने को बेताब था। वह नहीं जानता था, खुद ममता उसकी बातें, उसके खून का किस्सा सुनना चाहती थी या नहीं, लेकिन उसके अंदर एक जज्बा बार-बार करवट बदल रहा था। वह जज्बा, ममता की नेकनियति से जुड़ा हुआ था, उसकी पाक दोस्ती, उसका असीम स्नेह, उसके नूर से जुड़ा हुआ था। राजी को अपने बच्चे सरीखे मन को समझाने का और कोई रास्ता नहीं नजर आ रहा था। उधर एक और कशमकश उसे तंग कर रही थी। वह कशमकश भी ममता से जुड़ी हुई थी, इसका भी रिश्ता ममता से ही था। राजी असल में इस बात से नहीं डर रहा था कि मुकदमे का किस्सा ममता सुनना भी चाहेंगी या नहीं, वह डर इस बात से रहा था कि कहीं पूरा किस्सा सुनने के बाद ममता को भी विश्वास हो गया कि वह खूनी था, तब क्या होगा? वह तो ममता को जज बनाकर कचहरी में होने वाली दलीलों की बाबत सब कुछ बताना चाहता था। उसके अंदर न जाने कहां से यह अरमान जाग उठा था कि अगर सरकारी और बचाव के वकील, दोनों की दलीलें वह ममता को बता दे, तो जो फैसला ममता का होगा वही फैसला जज का होगा।

डरते-डरते राजी ने ममता से कहा, "मां!"

"हां···अ!" ममता ने चौंककर राजी को देखा।

"एक बात कहनी थी।"

"कहो।"

"आज मेरा मुकदमा शुरू हो गया ।"

"अच्छा ।"

"मां, एक काम करेगी मेरा ?"

"क्या ?"

"मैं तुम्हें जज बनाकर, मुकदमे की सारी जिरह बताऊंगा ।"

"क्यों ?"

"मैं जानना चाहता हूं, मुझे फांसी होगी या नहीं ।"

ममता ने राजी के मुंह पर अपना हाथ रख दिया, "ऐसा नहीं कहते । उम्मीद ही तो दुनिया है ।"

"उम्मीद की बात नहीं है मां ! मैं सच जानना चाहता हूं ।"

"और वह सच तू मुझसे जानना चाहता है ?"

"हां ।"

"यह मुझसे नहीं होगा ।"

"मेरा मन बड़ा उदास है । मेरा दिल न तोड़ो ! मैंने आज कचहरी में अपनी मां, अपने बाप की आंखों में शक की परछाई देखी है ।"

"लेकिन मैं कोई वकील नहीं हूं,...कानून भी नहीं जानती मैं...फिर कैसे..."

"यह कानून की बात नहीं है...मुझे तुम्हारे ऊपर...तुम्हारे चेहरे के नूर पर...पूरा विश्वास है । न जाने क्यों लगता है, जो फैसला तुम्हारा होगा, वही फैसला जज का होगा ।"

"मैं तुम्हें निराश नहीं करूंगी राजी ! लगता है कहने से तेरा मन हल्का हो जाएगा ।"

"तो ठीक है । इसी बरगद के पेड़ के नीचे इसी चबूतरे पर तुम बैठोगी, ठीक जज की तरह और मैं नीचे खड़े होकर वकीलों की दलीलें दोहराऊंगा ।"

"मेरी वह सब कुछ समझ आएगा ?"

"हां, सब कुछ समझ आएगा तुम्हारी । मैं तुम्हारे सामने कचहरी का पूरा खाका खींचूंगा...मैं तुम्हें वह सब कुछ बताऊंगा, जो वहां रोज होता है । हर रोज शाम को पेड़ के नीचे तुम जज बनोगी और मैं कभी सरकारी

वकील और कभी बचाव का वकील।"

"लेकिन मैं कुछ बोलूंगी नहीं…।"

"हां मां, तुम सिर्फ सुनोगी…और सब कुछ सुनने के बाद फिर बता सकोगी न?"

"हां, क्यों नहीं।"

"तो ठीक है।"

राजी चबूतरे के नीचे उतर आया। कुछ देर तक वह दूर आसमान के सन्नाटे को देखता रहा। जेल के अंदर, बड़ी दूर से कैदियों के चीखने-चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। कभी कोई वार्डन सीटी बजाता तो कभी कोई पहरेदार दौड़ता हुआ निकल जाता। उस पार से घंटे के ऊपर हथौड़े की चोट से होने वाली आवाज धीरे-धीरे राजी को, दिन में कचहरी के अंदर हुई बहस की याद-सी दिलाने लगी थी। उसने चबूतरे से उतर कर अपनी पीठ ममता की तरफ कर ली थी। घंटे की आवाज के साथ वह धीरे-धीरे ममता की ओर घूमने लगा। ममता के पास से दो कदम पीछे हटकर उसने सब कुछ कहना शुरू कर दिया था—

"…मी लार्ड, जर, जोरू और जमीन इन तीनों चीजों पर आज से नहीं सैकड़ों-हजारों साल से झगड़े होते आए हैं। यूं तो हर झगड़ा सुलझाया जा सकता है। झगड़े सुलझाने के लिए हाकिम, परवान और कचहरी बनाई गई है, लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है जब आदमी अपने झगड़ों से खुद-ब-खुद निपट लेना चाहता है और कभी ऐसा भी होता है जब वह आदमी अपने दिमागी फितूर के तहत एक बवंडर खड़ा कर लेता है और फिर उस बवंडर की झोंक में सारा फैसला कर लेना चाहता है। फैसला, मी लार्ड, फैसला। एक फैसला जो उसके हक में हो, जो वह चाहता हो। या फिर जो वह चाहता हो उसे मुमकिन न कर पाने पर हालात • को या उस हर चीज को मिटा देना चाहता है। यह जोर, यह जबरदस्ती खुद को मिल न जाने पर उस चीज को मिटा देने का फैसला, उस चीज को खत्म कर डालने का फैसला जिस आदमी का हो उसे क्या हमारा सभ्य समाज मानेगा, नहीं…नहीं, कभी नहीं। मी लार्ड, हमारी सोसाइटी समाज में यह नहीं हो सकता, यह कभी नहीं हो सकता।"

"आज का मुकदमा, मी लार्ड, महज एक मामूली कत्ल का मुकदमा नहीं है। इससे जुड़े हैं कई एक और सवाल। पहला सवाल है, क्या एक व्याहता औरत के साथ एक नौजवान का इश्क फरमाना वाजिव है, दूसरा सवाल, अगर एक व्याहता औरत इश्क में साथ न दे तो उसके बाप को धमकाना, उसके खिलाफ साजिश करना वाजिव है; और तीसरा और आखिरी सवाल है, क्या उस औरत को हासिल कर पाने की साध पूरी न होने पर उसका खून कर डालना वाजिव है? कानून तो बाद में हिसाब मानेगा, पहले तो इंसानियत का तकाजा क्या इसे सही मानेगा···?"

"मी लार्ड! यह राजी, राजी खन्ना, एक पढ़ा-लिखा अच्छे खानदान का लड़का है। लेकिन फिल्मी मोहव्वत, यौनशास्त्र से संबंधित पत्रिकाओं की तस्वीरें, चरस, सिगरेट और मेंड्क्स की गोलियों ने धीरे-धीरे उसके अंदर जहर घोलना शुरू कर दिया था। माया चौधरी एक निहायत खूबसूरत पढ़ी-लिखी नौजवान लड़की थी, जिसके लिए उसके खाविंद की खुशियां ही सबसे ऊपर थीं। राजी खन्ना को पहले ही पता लग चुका था, माया चौधरी व्याहता थी। उसको अपने नापाक इरादों पर रोक लगा देनी थी। लेकिन मी लार्ड! उसने ऐसा नहीं किया···ऐसा नहीं किया। वह बार-बार माया का पीछा करता रहा।

"मी लार्ड! माया हुस्न और नूर में नहाई, आसमानी रंगीनियों की पाक रोशनी में डूबी एक नौजवान हसीन लड़की थी। उसकी पलकों में नादान मोहक सपनों की खूबसूरत महक जगमगाती रहती थी। उसके पाक दामन में मचलते हुए जजवाती मंजर एक ऐसे मोड़ नर आकर रुक गए थे···ठहर गए थे···जहां से आगे जाकर कुछ जान लेने या लेने तक की तमन्ना उसके अंदर वाकी नहीं है। यह मुकदमा महज सोच-समझ कर किए गए खून से ताल्लुक नहीं रखता है, यह मुकदमा ताल्लुक रखता है न सिर्फ जिस्मानी वल्कि रूहानी कत्ल से। रूहानी और दिमागी खौफ से वीमार माया चौधरी के कत्ल से कानून का सीधा संवंध तो नहीं है। लेकिन यह मुजरिम के जुर्म को, उसके खतरनाक, घिनौने इरादों, नापाक वहशियत में जूझे··· उलझे उस तमाम घिनौने खेल का पर्दाफाश करता है, जिसकी सजा शायद अपने कानून में नहीं है।"

"मी लार्ड ! राजी खन्ना ने, इसलिए मैं कह रहा था एक नहीं दो खून किए हैं। एक तो माया का जिस्मानी और माया का रूहानी खून। माया का रूहानी खून जुर्म को···राजी खन्ना के जुर्म को और संगीन बना देता है···।"

"मी लार्ड, राजी खन्ना जो माया का कातिल है, जिसने सोच समझकर जानबूझकर एक सधी-सधाई साजिश खड़ी की···एक बहका हुआ नौजवान है, जिसे नशे की गोलियां···चरस की सिगरेटों की आदत पड़ चुकी थी। गवाहों के बयानात, सबूत और हालातों के बिना पर यह बात साफ-साफ साबित हो जाती है···। राजी खूनी है···खूनी है। उसने माया—बेहद मासूम, खूबसूरत, नाजुक और नफीस माया चौधरी का कत्ल किया है···मी लार्ड, कोल्ड ब्लेडेड मर्डर।"

"मी लार्ड, कत्ल और जुर्म के इतिहास में ऐसा कोई वाकया नहीं हुआ, जहां अपनी हवस के जुनून में किसी इन्सान ने एक मासूम लड़की का सिर्फ इसलिए खून कर दिया जो ब्याहता होने की वजह से वह उसके साथ नहीं जा सकी। इस बेमिसाल जुर्म की बुनियाद महज एक मामूली लफ्ज पर खड़ी हुई है। यह लफ्ज है···हलो···हलो। यह लफ्ज हमें हम और आप हमारे सभ्य समाज में दिन में कितने ही बार कहा जाता है। दफ्तर में, घर में, बाजार में मिलने-जुलने पर मामूली जान-पहचान होने पर भी आपस में हलो कह देना···भले ही लड़की हो···कोई खास अहमियत नहीं रखता। मकतूल माया चौधरी ने अपने दफ्तर में होने वाली मुलाकातों में राजी खन्ना से स्वाभाविक तरीके से हलो कह दिया था। राजी खन्ना ने उस हलो के सहारे अपने चारों तरफ एक बवंडर खड़ा कर लिया···इश्क, मी लार्ड, एकतरफा इश्क। वह किसी फर्जी मोहब्बत का खतरनाक खेल खेलने लगा। राजी खन्ना की हरकतों की वजह से पहले तो मरहूम माया को दफ्तर में, दफ्तर से बाहर और अपने खाविंद की निगाहों में जलील होना पड़ा और फिर इस खतरनाक खेल ने उसकी जान ले ली।"

"उस दिन मी लार्ड 23 दिसम्बर थी। शनिवार का दिन था, दफ्तर दो बजे बंद हो चुका था। महेश मेहता को जरूरी काम से दिल्ली जाना

था, इसीलिए वह दफ्तर से एक बजे के करीब चले गए। माया उनके केबिन में काम करती थी। वह दिन, मी लार्ड माया के लिए बड़ा ही मनहूस था···गलतफहमियों के शिकार उसके खाविंद भोला चौधरी ने उसके ऊपर तमाम झूठी तोहमत लगाई···जिसकी वजह से वह दुखी थी, परेशान थी, डरी हुई थी और दफ्तर बंद होने पर भी घर नहीं गई थी। दफ्तर में अकेली बैठी हुई वह शबनम का इंतजार करती रही। राजी खन्ना ने इस हादसे के एक दिन पहले भी शाम के वक्त उसे घेरा था···जैसा दफ्तर के लोगों, ड्राइवर और चौकीदार के बयानों से जाहिर हो चुका है, वह कई दिनों से माया से अकेले में मिलना चाहता था। राजी खन्ना के हाथ का लिखा हुआ वह खत जो महेश मेहता को माया के पास से आई हुई फाइल में मिला था,···पुलिस रिकार्ड और सबूतों की लिस्ट में है। यह खत कत्ल से एक दिन पहले लिखा गया था। इस खत से उसके नापाक इरादों का पर्दाफाश हो जाता है। उस दिन काफी देर तक जब माया महेश मेहता के केबिन से बाहर नहीं निकली और जब चौकीदार दफ्तर में ताला लगा देने के बाद बाहर निकलने लगा था, तब मी लार्ड, इस घिनौने कारनामे का पता लगा था। महेश मेहता के केबिन की कुर्सियां उलटी पड़ी थीं···वहां के माहौल से और डाक्टरी रिपोर्ट से साबित हो चुका था··· मुजरिम ने पहले तो माया की इज्जत लूटी और उसके लगातार विरोध करते रहने पर रूमाल से गला घोंट कर उसका खून कर दिया। दफ्तर के चौकीदार ने राजी खन्ना को कत्ल के बाद दफ्तर से निकलकर जाते हुए देखा था। वह रूमाल या स्कार्फ जिससे माया का खून किया गया, राजी खन्ना ने चंद रोज पहले ही खरीदा था। राजी के अधलिखे प्रेम-पत्र उसकी मेज की दराज से पाए गए वह तमाम कागज जिन पर हलो···हलो माया···माया···लिखा हुआ था और जिन पर भद्दी, गंदी, बेहूदी तस्वीरें बनी थीं, तमाम फिल्मी पत्रिकाएं, विदेशी सचित्र अश्लील किताबें जिनके अंदर नग्न, अर्ध-नग्न औरतों की तस्वीरें थीं और हर तस्वीर पर माया के लिखे हुए नाम से राजी खन्ना की जुर्म से पहले की मानसिक स्थिति को जाना जा सकता है। महेश मेहता से राजी खन्ना का झगड़ा, दफ्तर के लोगों के बयान मुजरिम के जुर्म को पूरी तरह साबित करते हैं। सबसे ऊपर

राजी खन्ना का यह साबित न कर पाना गोया वारदात के समय वह कहां था'''उसे मुजरिम करार करने के लिए काफी है। मी लार्ड, मुजरिम राजी खन्ना वाकिफ था, उसे पता था माया क्या चाहती थी।'''उसका वाकिफ भोला चौधरी उसी दफ्तर में काम करता था'''उसे मालूम था चंद दिनों बाद उसका माया से मिलना-जुलना बंद हो जाने वाला था। महेश मेहता ने उसकी हरकतों से तंग आकर उसे नौकरी से निकाल देने का नोटिस दे दिया था। इसलिए उस दिन 23 दिसम्बर को उसने अपने नापाक इरादों को, अपनी हवस, अपनी जहनियत के जुनून को पूरा करने की ठानी। उस दिन उसको मालूम था कि महेश मेहता दिल्ली चले जाने के लिए जा चुके थे। दफ्तर खाली था और माया वहां अकेली थी। इसलिए मी लार्ड ! मुजरिम राजी खन्ना ने सोच-समझकर पहले दफ्तर के चौकीदार को रेलवे स्टेशन भेज दिया और कुछ ही देर बाद एक खतरनाक पेशेवर मुजरिम की तरह उसने अपनी बनाई हुई योजना पर अमल किया। मी लार्ड ! इससे पहले राजी खन्ना किसी और मासूम लड़की की जिंदगी छीन ले, अपनी हवस के लिए एक और खून करे, भोले लोगों पर कहर बन कर टूट पड़े, मैं दरख्वास्त करूंगा कि ताजीराते हिंद दफा 302 के तहत उसे फांसी की सजा दी जाए।"

ममता सोच रही थी माया ही तो था वह नाम, उसकी बेटी का नाम। आज यहां जेल के अंदर दरख्त के नीचे शाम के धुंधलके में एक गुमनाम लड़के के मुंह से बार-बार अपनी बेटी का नाम सुनकर ममता के मन में एक खौफ की घनी छाया उठ कर बड़ी होने लगी थी। एक छोटा-सा शक खौफ बन कर उसके जहनियत के विस्तार के हिस्से-हिस्से में करीब घेर गया था। उसने कई बार राजी खन्ना को बीच में रोकना चाहा था, फिर उसने सोचा, ऐसा करने से उस लड़के का मन टूट जाएगा'''उसकी तारतम्यता बिखर जाएगी। फिर उसने सोचा, एक ही नाम के न जाने कितने लोग इस दुनिया में रहते हैं और फिर माया कोई ऐसा नाम तो नहीं, जो किसी और का नहीं हो सकता।'''इतनी ही देर में ममता का जी खराब हो गया था और वह न जाने कब उठकर बैरक की तरफ चल दी थी।

राजी खन्ना की कुछ समझ में नहीं आया कि जेल की दीवारों में कैद कोई औरत उसके बारे में बार-बार क्यों सोच रही थी। वह दूर तक उसे जाते हुए देखता रहा···जब तक कि वह अंधेरे कोने में वह गायब नहीं हो गई।

अगले कई दिनों तक ममता उसे दिखाई नहीं दी और वह चुपचाप बरगद के पेड़ के नीचे बैठकर डूबते हुए सूरज को देखता रहता। बेहद अकेलापन उसे बार-बार तड़पाता रहता। एक ही सहारा था बीरान जेल के बीच—एक ही आसरा था, उसे लगा उसने वह भी खो दिया।